

॥ पूर्ण परमात्मने नमः ॥

श्रीमद्भगवत् गीता

गीता तेरा ज्ञान अमृत

जीव हमारी जाति है, मानव धर्म हमारा।
हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, धर्म नहीं कोई न्यारा।।

सत रामपाल दास महाराज
सतलोक आश्रम, हिसार-टोहाना रोड़ बरवाला
जिला-हिसार (हरियाणा) भारत।

e-mail :- jagatgururampalji@yahoo.com
visit us at :- www.jagatgururampalji.org

विषय सूची

क्रम सं.	विवरण	पृष्ठ संख्या
1. भूमिका		I-II
2. दो शब्द		1
3. गीता का सत्य सार		8
● श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी के माता-पिता कौन हैं?		13
4. शंका समाधान		16
● गीता में दो प्रकार का ज्ञान है		42
● पांडवों द्वारा की गई यज्ञ		43
● किस-किसको मिला परमात्मा?		55
● व्रत करना गीतानुसार कैसा है?		59
● श्राद्ध-पिण्डदान गीतानुसार कैसा है?		60
● श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रुची ऋषि का मत		60
● जिंदा बाबा का दूसरी बार अन्तर्धान होना		66
● चौरासी लाख प्रकार के जीवों से मानव देह उत्तम है		88
● कथनी और करनी में अन्तर		93
5. वेद मंत्रों की फोटोकापियाँ (प्रमाण सहित)		101
6. संक्षिप्त सृष्टि रचना		117
● हम काल के लोक में कैसे आए?		120
● श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शंकर जी की उत्पत्ति		124
7. सम्पूर्ण सृष्टि रचना		128
● आत्माएं काल के जाल में कैसे फँसी?		131
● श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शंकर जी की उत्पत्ति		135
● तीनों गुण क्या हैं? प्रमाण सहित		137
● काल (ब्रह्म) की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा		138
● ब्रह्मा का अपने पिता की प्राप्ति के लिए प्रयत्न		140

● माता (दुर्गा) द्वारा ब्रह्मा को श्राप देना	141
● विष्णु का अपने पिता की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आशीर्वाद पाना	142
● परब्रह्म के सात शंख ब्रह्माण्डों की स्थापना	149
● पवित्र अथर्ववेद में सृष्टि रचना का प्रमाण	151
● पवित्र ऋग्वेद में सृष्टि रचना का प्रमाण	157
● पवित्र श्रीमद् देवी महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण	162
● पवित्र शिव महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण	164
● श्रीमद्भगवत् गीता जी में सृष्टि रचना का प्रमाण	165
● पवित्र बाईबल पवित्र कुरान शरीफ में सृष्टि रचना का प्रमाण	168
● पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण	169
● आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण	172
● आदरणीय नानक साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण	178
● अन्य संतों द्वारा सृष्टि रचना की दन्त कथा	182
8. “शास्त्रों में परमात्मा”	183
● माँस खाना बाईबल में निषेध	185
● हजरत मुहम्मद जी माँस नहीं खाते थे	190
● संत जम्बेश्वर महाराज जी के विचार	190
● “परमात्मा साकार है” यह निष्कर्ष है सर्व सद्ग्रन्थों तथा परमात्मा प्राप्त संतों का	196
● बिश्नोई धर्म की भक्ति	197
● सतगुरु से दीक्षा लेकर भक्ति करें	197
● हरियाणा में हरि आएंगे	198

भूमिका

आध्यात्म ज्ञान के बिना मनुष्य जीवन अधूरा है। यदि किसी के पास अरबों-खरबों की सम्पत्ति भी है, फिर भी वह अपने जीवन में कुछ कमी महसूस करता है। उसकी पूर्ति के लिये मनुष्य पर्यटक रथलों पर जाता है। उस समय उसको कुछ अच्छा लगता है परन्तु उससे पूरा जीवन अच्छा नहीं हो सकता, न ही इससे आत्मकल्याण हो सकता। दो-तीन दिन के पश्चात् पुनः वही दिनचर्या प्रारम्भ हो जाती है। वह कमी परमात्मा की भक्ति की है। उसकी पूर्ति के लिए विश्व का धार्मिक मानव अपनी परंपरागत साधना करता है। यदि उस साधक की वह साधना शास्त्रों के अनुकूल है तो लाभ होगा। यदि शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण अर्थात् मनमानी साधना करते हैं तो वह गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 के अनुसार व्यर्थ है। न साधक को सुख प्राप्त होता है, न सिद्ध प्राप्त होती है, न परम गति प्राप्त होती है अर्थात् व्यर्थ साधना है। कुछ श्रद्धालु किसी गुरु से दीक्षा लेकर भक्ति करते हैं। यदि गुरु पूर्ण है तो लाभ होगा नहीं तो वह साधना भी व्यर्थ है।

आप जी को इस पुस्तक "गीता तेरा ज्ञान अमृत" में जानने को मिलेगा कि प्रमाणित शास्त्र कौन से हैं जिनके अनुसार साधना करें? शास्त्रविधि अनुसार साधना कौन सी है? उस साधना को करने की विधि कैसी है, किस महात्मा से प्राप्त होगी, पूर्ण गुरु की क्या पहचान है?, वह भी इसी पुस्तक में आप पढ़ेंगे।

यह पुस्तक विश्व के मानव को एक करेगी जो धर्मों में बँटकर आपस में लड़-लड़कर मर रहे हैं। गीता शास्त्र किसी धर्म विशेष का नहीं है। यह तो मानव कल्याण के लिए उस समय प्रदान किया गया था जब कोई धर्म नहीं था, केवल "मानव" धर्म था। मेरा नारा है :-

जीव हमारी जाति है, मानव धर्म हमारा।

हिन्दु, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, धर्म नहीं कोई न्यारा ॥

जैसे बाबा नानक जी का जन्म पवित्र हिन्दू धर्म में श्री कालूराम मेहता के घर खत्री (अरोड़ा) कुल में हुआ था। श्री ब्रजलाल पांडे से श्री नानक देव जी ने गीता का ज्ञान समझा और उनके द्वारा बताई भक्ति कर रहे थे। श्री विष्णु तथा श्री शंकर जी की पूजा करते थे। अन्य सर्व देवों की भी भक्ति करते थे जो हिन्दू धर्म में वर्तमान में चल रही है। श्री नानक जी सुल्तानपुर शहर जो इस समय पाकिस्तान में है, वहाँ के नवाब के यहाँ मोदीखाने में नौकरी करते थे। शहर से लगभग आधा-एक कि.मी. दूर बैई नदी बहती है। प्रतिदिन श्री नानक देव साहेब जी उस दरिया में स्नान करने जाते थे। परमात्मा अच्छी आत्माओं को जो दृढ़ भक्त होते हैं, उनको मिलता है। अधिक प्रमाण आप जी इसी पुस्तक में पढ़ेंगे। उसी विधान अनुसार परमात्मा श्री नानक देव साहेब जी को मिले। उनको तत्त्वज्ञान बताया। सत्य साधना जो शास्त्रानुकूल है, उसका ज्ञान कराया। श्री

नानक देव जी की सन्तुष्टि के लिए उनको अपने साथ ऊपर अपने शाश्वत् स्थान अर्थात् सच्चखण्ड में लेकर गए। सर्व ब्रह्माण्डों को भ्रमण कराकर यथार्थ भक्तिविधि बताकर "सनातन भक्ति" को पुनः स्थापित करने का आदेश दिया। तीन दिन पश्चात् श्री नानक जी को वापिस जमीन पर छोड़ा। उसके पश्चात् श्री नानक जी ने हिन्दू धर्म में चल रहा मनमाना आचरण बंद करके गीता शास्त्र अनुसार साधना का प्रचार करके यथार्थ भक्ति का प्रचार किया।

परमात्मा की सत्य साधना करने के लिए सर्वप्रथम "गुरु" का होना अति अनिवार्य है। इसी का पालन करते हुए श्री नानक जी ने "शिष्य" बनाने शुरू किए, स्वयं वे गुरु पद पर विराजमान थे। श्री नानक जी के शिष्यों को पंजाबी भाषा में सिख बताए गए। जिस कारण से उनकी अलग पहचान बन गई और वर्तमान में उन अनुयाईयों के समूह ने धर्म का रूप ले लिया। हिन्दू तथा सिख आपस में धर्म के नाम पर लड़-मरते हैं, यह विवेक की कमी है।

विवेचन :- भक्ति कोई करो, उसको गुरु बनाना आवश्यक है। गुरु भी वक्त गुरु हो जो अपने मुख कमल से तत्त्वज्ञान तथा साधना विधि बताए। हिन्दुओं में अधिकतर बिना गुरु के ही अपनी परंपरागत साधना करते हैं। उसी बिंदु से रूप को श्री नानक जी ने परमात्मा से प्राप्त ज्ञान से ठीक किया था। वर्तमान में सिखों में भी वक्त गुरु का अभाव है। जैसे सूक्ष्म वेद में कहा है (सूक्ष्म वेद क्या है, यह आप इसी पुस्तक से जानें) कि :-

राम-कृष्ण से कौन बड़ा, उन्होंने ने भी गुरु कीह। तीन लोक के वे धनी, गुरु आगे आधीन ॥

भावार्थ :- जो हिन्दू श्रद्धालु बिना गुरु के मनमाना आचरण करते हैं, उनको कहा है कि आप जी श्री राम तथा श्री कृष्ण जी से बड़ा तो किसी को नहीं मानते हो। वे तीन लोक के धनी अर्थात् मालिक होते हुए भी गुरु धारण करके भक्ति किया करते थे तथा अपने-अपने गुरुदेव के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया करते थे। आप की क्या बुनियाद है, आप बिना गुरु के भक्ति करके कल्याण चाहते हैं। सूक्ष्मवेद में फिर कहा है :-

कबीर, गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान। गुरु बिन दोनों निष्फल हैं, भावें पूछो वेद पुराण ॥

इस पुस्तक में आप जी को और भी अनेक भक्ति के गुर मिलेंगे तथा यथार्थ ज्ञान व साधना का भी ज्ञान होगा। मैं आशा करता हूँ कि यह पुस्तक मानव कल्याण करेगी। मेरी परमेश्वर से विनय है कि हे परमात्मा! मुझ दास के इस प्रयत्न को सफल करना। सर्व प्राणी आप जी के बच्चे हैं, आप जी की आत्मा हैं। इनको यथार्थ भक्ति मार्ग समझ में आए और सर्व मानव अपना जीवन धन्य बनाएं। विश्व में शान्ति हो।

दिनांक - 08-09-2012

लेखक

संत रामपाल दास महाराज
सतलोक आश्रम बरवाला, हरियाणा (भारत)।

दो शब्द

जीव हमारी जाति है, मानव धर्म हमारा ।
हिन्दू मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, धर्म नहीं कोई न्यारा ॥

श्रीमद्भगवत् गीता का ज्ञान जिस समय (सन् 2012 से लगभग 5550 वर्ष पूर्व) बोला गया, उस समय कोई धर्म नहीं था। हिन्दू धर्म की स्थापना आदि (प्रथम) शंकराचार्य जी ने सन् 2012 से 2500 वर्ष पूर्व की थी। आदि शंकराचार्य जी का जन्म ईशा मसीह से 508 वर्ष बाद हुआ था। 8 वर्ष की आयु में उन्हें उपनिषदों का ज्ञान हो गया। 16 वर्ष की आयु में आदि शंकराचार्य जी ने एक विरक्त साधु से दीक्षा ली जो गुफा में रहता था। कई-कई दिन बाहर नहीं निकलता था। उस महात्मा ने आदि शंकराचार्य जी को बताया कि “जीव ही ब्रह्म है।” (अयम् आत्मा ब्रह्म) का पाठ पढ़ाया। लोगों ने पूछा कि यदि जीव ही ब्रह्म है तो पूजा की क्या आवश्यकता है? आप भी ब्रह्म, हम भी ब्रह्म (ब्रह्म का अर्थ परमात्मा) इस प्रश्न से आदि शंकराचार्य जी असमंजस में पड़ गए। फिर कहा कि श्री विष्णु, श्री शंकर की भक्ति करो। फिर पाँच देवताओं की उपासना का विधान दृढ़ किया - 1. श्री ब्रह्मा जी 2. श्री विष्णु जी 3. श्री शिव जी 4. श्री देवी जी 5. श्री गणेश जी। परंतु मूल रूप में ईष्ट रूप में तमगुण शंकर जी को ही माना है। यह विधान आदि शंकराचार्य जी ने 20 वर्ष की आयु में बनाया तथा भारत वर्ष में चारों दिशाओं में एक-एक शंकर मठ की स्थापना की। आदि शंकराचार्य जी ने 1. गिरी साधु बनाए जो पर्वतों में रहने वाली जनता में अपने धर्म को दृढ़ करते थे। 2. पुरी साधु बनाए जो गाँव-2 में जाकर अपने धर्म को बताकर क्रिया कराते थे। 3. सन्यासी साधु बनाए जो विरक्त रहकर जनता को प्रभावित करके अपने साथ लगाते थे। 4. वानप्रस्थी साधु बनाए जो वन में रहने वाली जनता को अपना मत सुनाकर अपने साथ जोड़ते थे। वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद) तथा गीता व पुराणों, उपनिषदों को सत्यज्ञानयुक्त पुस्तक मानते थे जो आज तक हिन्दू धर्म के श्रद्धालु इन्हीं धार्मिक ग्रन्थों को सत्य मानते हैं। इस प्रकार हिन्दू धर्म की स्थापना ईसा से 488 वर्ष पूर्व (सन् 2012 से 2500 वर्ष पूर्व) हुई थी। आदि शंकराचार्य जी 30 वर्ष की आयु में रोग के कारण शरीर त्यागकर भगवान् शंकर के लोक में चले गए क्योंकि वे शंकर जी के उपासक थे, उन्हीं के लोक से इसी धर्म की स्थापना के लिए आए माने गए हैं। उस समय बौद्ध धर्म तेजी से फैल रहा था। उसको उन्होंने भारत में फैलने से रोका था। यदि बौद्ध धर्म फैल जाता तो चीन देश की तरह भारतवासी भी नास्तिक हो जाते।

2. ईसाई धर्म की स्थापना :- श्री ईसा मसीह जी से ईसाई धर्म की स्थापना हुई। ईसा जी की जब 32 वर्ष की आयु थी, उनको क्रुश पर कीले गाढ़कर विरोधी

धर्म गुरुओं ने गवर्नर पर दबाव बनाकर मरवा दिया था।

ईसा जी को उसी प्रभु ने “इंजिल” नामक ग्रन्थ देकर उतारा था जिसने गीता तथा वेदों का ज्ञान दिया था। “इंजिल” पुस्तक में विशेष ज्ञान नहीं है क्योंकि आध्यात्मिक ज्ञान तो पहले गीता, वेदों में बताया जा चुका था। वह किसी धर्म विशेष के लिए नहीं है। वह गीता तथा वेदों वाला ज्ञान मानव मात्र के लिए है। ईसा जी के लगभग ४० सौ वर्ष पश्चात् हजरत मुहम्मद जी ने इस्लाम धर्म की स्थापना की। मुहम्मद जी को पवित्र “कुर्अन् शरीफ” ग्रन्थ उसी ब्रह्म ने दिया था। इसमें भी भक्ति विधि सम्पूर्ण नहीं है, सांकेतिक है क्योंकि भक्ति का ज्ञान वेदों, गीता में बता दिया था। इसलिए कुर्अन् शरीफ ग्रन्थ पुनः बताना अनिवार्य नहीं था।

जैसे गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में, यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा जिसने सर्व सृष्टि की रचना की है, उसके विषय में किसी तत्त्वदर्शी सन्त से पूछो, वे ठीक-ठीक ज्ञान तथा भक्तिविधि बताएँगे। जो सन्त उस पूर्ण परमात्मा का ज्ञान जानता है तो वह सत्य साधना भी जानता है।

बाईबल ग्रन्थ का ज्ञान भी गीता ज्ञान दाता ने ही दिया है, (बाईबल ग्रन्थ तीन पुस्तकों का संग्रह है - 1. जबूर, 2. तौरत, 3. इंजिल) बाईबल ग्रन्थ के उत्पत्ति ग्रन्थ में प्रारम्भ में ही लिखा है कि परमेश्वर ने मनुष्यों को अपनी सूरत अर्थात् स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया है, नर-नारी करके उत्पत्ति की है। ४० दिन में सृष्टि की रचना करके परमेश्वर ने 7वें दिन विश्राम किया।

कुर्अन् शरीफ :- कुर्अन् शरीफ में सूरति फूर्कानि नं. 25 आयत नं. 52 से 59 में कहा है कि अल्लाह कबीर ने ४० दिन में सृष्टि रची, फिर ऊपर आकाश में तख्त (सिंहासन) पर जा विराजा। उस परमेश्वर की खबर किसी बाहखबर अर्थात् तत्त्वदर्शी सन्त से पूछो। कुर्अन् शरीफ का ज्ञान दाता भी उस पूर्ण परमात्मा अर्थात् अल्लाहु अकबर (अल्लाह कबीर) के विषय में पूर्ण ज्ञान नहीं रखता।

कुर्अन् शरीफ की सूरति 42 की प्रथम आयत में उन्हीं तीन मन्त्रों का सांकेतिक ज्ञान है जो गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में हैं। कहा है कि ब्रह्मणः अर्थात् सच्चिदानन्द घन ब्रह्म की भक्ति के “ऊँ-तत्-सत्” तीन नाम के स्मरण करो।

कुर्अन् शरीफ में सूरति 42 की प्रथम आयत में इन्हीं को सांकेतिक इस प्रकार लिखा है:- “ऐन्-सीन्-काफ्”

“ऐन्” का भावार्थ ओम् से है, सीन् = स अर्थात् जो गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में दूसरा तत् मन्त्र है, उसका वास्तविक जो मन्त्र है, उसका पहला अक्षर “स” है, यही ओम + सीन् या तत् मिलकर सतनाम दो मन्त्र का बनता है और कुर्अन् शरीफ में जो तीसरा मन्त्र “काफ्” = “क” है जो गीता अध्याय

17 श्लोक 23 में लिखे तीन नामों में अन्तिम "सत्" मन्त्र है।

"सत्" मन्त्र सांकेतिक है परन्तु वास्तविक जो नाम है, उसका पहला अक्षर "क" है, जिसे सारनाम भी कहते हैं। जिन भक्तों को मेरे (संत रामपाल दास) से तीनों मन्त्रों का उपदेश प्राप्त है, वे उन दोनों सांकेतिक मन्त्रों के वास्तविक नामों को जानते हैं।

बाईबल ग्रन्थ में उत्पत्ति ग्रन्थ में यह भी कहा है कि "जब आदम जी तथा उनकी धर्मपत्नी 'हव्वा' ने वाटिका के बीच वाले वृक्षों के फल खा लिए तो उनको भले-बुरे का ज्ञान हो गया। शास्त्र के समय प्रभु वाटिका में सैर करने आए तो पता चला कि आदम तथा हव्वा ने भले-बुरे का ज्ञान कराने वाले वृक्ष के फल खा लिए तो उस प्रभु ने कहा कि "भले-बुरे" का ज्ञान होने से आदम तथा उसकी पत्नी हममें से एक के समान हो गए हैं। कहीं ऐसा न हो जाए कि ये उन वृक्षों का फल खा लें जो अमर करते हैं और अमर हो जाएं। इसलिए आदम जी तथा उनकी पत्नी को स्वर्ग की वाटिका से निकालकर पृथ्वी पर छोड़ दिया।" (लेख समाप्त)

विवेचन :- इससे सिद्ध हुआ कि "प्रभु एक से अधिक हैं" क्योंकि प्रभु ने ऊपर कहा कि ये भले-बुरे का ज्ञान होने से हम में से एक के समान हो गए हैं। फिर बाईबल ग्रन्थ में कहा है कि "अब्राहिम" मामरे के वृक्षों के नीचे बैठा था। उसको तीन प्रभु दिखाई दिए, उनको खाना खिलाया, दण्डवत् प्रणाम करके आशीर्वाद लिया। इससे सिद्ध हुआ कि बाईबल में तीन प्रभु माने हैं।

मुसलमान धर्म में "चार यारी" माने गए हैं जो बालक रूप में रहते हैं, सूक्ष्म वेद अर्थात् तत्त्वज्ञान में कहा है कि :-

वही सनक सनन्दना, वही चार यारी | तत्त्वज्ञान जाने बिना, बिगड़ी बात सारी ||

भावार्थ :- हिन्दू धर्म में जो सनक, सनन्दन, सनातन तथा सन्तकुमार बालक रूप में रहते हैं, वे ब्रह्मा जी के मानस पुत्र हैं। मुसलमान धर्म में उन्हीं को "चार यारी" चार बालक मित्र कहते हैं।

फिर सूक्ष्म वेद में कहा है कि :-

वही मोहम्मद वही महादेव, वही आदम वही ब्रह्मा ।

दास गरीब दूसरा कोई नहीं, देख आपने घरमा ॥

भावार्थ :- मुसलमान धर्म के प्रवर्तक हजरत मुहम्मद जी भगवान शिव के लोक से आए, पुण्यकर्मी आत्मा थे जो परंपरागत साधना ही एक गुफा में बैठकर किया करते थे। शिव जी का एक गण जो ग्यारह रुद्रों में से एक है, वह मुहम्मद जी से उस गुफा में मिले। उन्हीं की भाषा (अरबी भाषा) में काल प्रभु अर्थात् ब्रह्म का संदेश सुनाया। उसी रुद्र को मुसलमान जबरिल फरिस्ता कहते हैं।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद भी शिव के बच्चे हैं जो मुसलमान धर्म का पवित्र तीर्थ स्थल "काबा" है, उसमें भगवान शंकर के लिंग के आकार का पत्थर

लगा है, उसको मुसलमान ऋद्धालु सिजदा अर्थात् प्रणाम करते हैं।

2. आदम बाबा :- पुराणों में तथा जैन धर्म के ग्रन्थों में प्रसंग आता है जो इस प्रकार है:- ऋषभदेव जी राजा नाभिराज के पुत्र थे। नाभिराज जी अयोध्या के राजा थे। ऋषभदेव जी के कई पुत्र तथा एक पुत्री थी। एक दिन परमेश्वर एक सन्त रूप में ऋषभ देव जी को मिले, उनको भक्ति करने की प्रेरणा की, ज्ञान सुनाया कि मानव जीवन में यदि शास्त्रविधि अनुसार साधना नहीं की तो मानव जीवन व्यर्थ जाता है। वर्तमान में जो कुछ भी जिस मानव को प्राप्त है, वह पूर्व जन्म-जन्मान्तरों में किए पुण्यों तथा पापों का फल है। आप राजा बने हो, यह आप का पूर्व का शुभ कर्म फल है। यदि वर्तमान में भक्ति नहीं करोगे तो आप भक्ति शक्तिहीन तथा पुण्यहीन होकर नरक में गिरोगे तथा फिर अन्य प्राणियों के शरीरों में कष्ट उठाओगे। (जैसे वर्तमान में इन्वर्टर की बैटरी चार्ज कर रखी है और चार्जर निकाल रखा है। फिर भी वह बैटरी कार्य कर रही है, इन्वर्टर से पॅखा भी चल रहा है, बल्ब-ट्यूब भी जग रहे हैं। यदि चार्जर को फिर से लगाकर चार्ज नहीं किया तो कुछ समय उपरान्त इन्वर्टर सर्व कार्य छोड़ देगा, न पॅखा चलेगा, न बल्ब, न ट्यूब जारेंगी। इसी प्रकार मानव शरीर एक इन्वर्टर है। शास्त्र अनुकूल भक्ति चार्ज है, परमात्मा की शक्ति से मानव फिर से चार्ज हो जाता है अर्थात् भक्ति की शक्ति का धनी तथा पुण्यवान हो जाता है।

यह ज्ञान उस ऋषि रूप में प्रकट परमात्मा के श्री मुख कमल से सुनकर ऋषभदेव जी ने भक्ति करने का पक्का मन बना लिया। ऋषभदेव जी ने ऋषि जी का नाम जानना चाहा तो ऋषि जी ने अपना नाम "कवि देव" अर्थात् कविर्देव बताया तथा यह भी कहा कि मैं स्वयं पूर्ण परमात्मा हूँ। मेरा नाम चारों वेदों में "कविर्देव" लिखा है, मैं वही परम अक्षर ब्रह्म हूँ।

सूक्ष्म वेद में लिखा है :-

ऋषभ देव के आइया, कबी नामे करतार ।

नौ योगेश्वर को समझाइया, जनक विदेह उद्धार ॥

भावार्थ :- ऋषभदेव जी को "कबी" नाम से परमात्मा मिले, उनको भक्ति की प्रेरणा की। उसी परमात्मा ने नौ योगेश्वरों तथा राजा जनक को समझाकर उनके उद्धार के लिए भक्ति करने की प्रेरणा की। ऋषभदेव जी को यह बात रास नहीं आई कि यह कविर्देव ऋषि प्रभु है परन्तु भक्ति का दृढ़ मन बना लिया। एक तपस्ची ऋषि से दीक्षा लेकर ओम् (ॐ) नाम का जाप तथा हठयोग किया। ऋषभदेव जी का बड़ा पुत्र "भरत" था, भरत का पुत्र मारीचि था। पहले एक वर्ष तक निराहार रहकर तप किया। फिर एक हजार वर्ष तक घोर तप किया। तपस्या समाप्त करके अपने पौत्र अर्थात् भरत के पुत्र मारीचि को प्रथम धर्मदक्षिणा (दीक्षा) दी। यह मारीचि वाली आत्मा 24वें तीर्थकर महाबीर जैन जी

हुए थे। ऋषभदेव जी ने जैन धर्म नहीं चलाया, यह तो श्री महाबीर जैन जी से चला है। वैसे श्री महाबीर जी ने भी किसी धर्म की स्थापना नहीं की थी। केवल अपने अनुभव को अपने अनुयाईयों को बताया था। वह एक भक्ति करने वालों का भक्त समुदाय है, भक्ति वही है जो ऋषिजन करते थे। ऋषभदेव जी “ओम्” नाम का जाप करते थे। उसी को वर्तमान में अभ्रंस करके “णोकार” मन्त्र जैनी कहते हैं, इसको औंकार तथा ऊँ भी कहते हैं।

हम अपने प्रसंग पर आते हैं। जैन धर्म ग्रन्थ में तथा जैन धर्म के अनुयाईयों द्वारा लिखित पुस्तक “आओ जैन धर्म को जानें” में लिखा है कि ऋषभदेव जी (उन्हीं को आदिनाथ जैनी कहते हैं) वाला जीव ही बाबा आदम रूप में जन्मा था। अब उसी सूक्ष्म वेद की वाणी का सरलार्थ करता हूँ :-

वही मुहम्मद वही महादेव, वही आदम वही ब्रह्मा।

दास गरीब दूसरा कोई नहीं, देख आपने घरमा ॥

बाबा आदम जी भगवान ब्रह्मा जी के लोक से आए थे क्योंकि मानव जन्म में की गई साधना के अनुसार प्राणी भक्ति अनुसार ऊपर तीनों देवताओं के लोक में बारी-बारी जाता है, अपने पुण्य क्षीण होने पर पुनः पृथ्वी पर संस्कारवश जन्म लेता है।

संत गरीब दास जी (गाँव-छुड़ानी जिला-झज्जर हरियाणा प्रांत वाले) को स्वयं ही वही परमात्मा मिले थे जो ऋषभदेव जी को मिले थे। संत गरीब दास जी ने परमेश्वर के साथ ऊपर जाकर अपनी आँखों से सर्व व्यवस्था को देखा था। फिर बताया है कि आदम जी ब्रह्मा जी के लोक से आए थे, ब्रह्मा के अवतार थे। मुहम्मद जी शिव जी के अवतार थे। प्रिय पाठको! अवतार दो प्रकार के होते हैं, 1. स्वयं वह प्रभु अवतार लेता है जैसे श्री राम, श्री कृष्ण आदि के रूप में स्वयं श्री विष्णु जी अवतार धारकर आए थे। परन्तु कपिल ऋषि को भी विष्णु जी के अवतारों में गिना जाता है। ये स्वयं श्री विष्णु जी नहीं थे, विष्णु लोक से आए देवात्मा थे। इसी प्रकार हजरत मुहम्मद जी श्री शिव जी के अवतार थे तथा बाबा आदम जी श्री ब्रह्मा जी के अवतार थे। इसी प्रकार ईशा मसीह जी श्री विष्णु जी के अवतार थे। ईसाई ऋद्धालु भी ईशा जी को प्रभु का पुत्र मानते हैं, प्रभु नहीं।

संत गरीब दास जी ने कहा है कि यदि आप जी को मेरी बात पर विश्वास नहीं होता तो मेरे द्वारा बताई शास्त्रविधि अनुसार भक्ति-साधना करके अपने घर में अर्थात् अपने मानव शरीर में अपनी आँखों देख लो।

भावार्थ है :- शरीर की रचना सर्व धर्मों के मनुष्यों की एक जैसी है। तत्त्वज्ञान न होने के कारण हम धर्मों में बँट गए। संत गरीब दास जी ने बताया है कि मानव शरीर में परमेश्वर ने भिन्न-भिन्न अंग बनाए हैं, रीढ़ की हड्डी अर्थात् Back Bone (Spun) के अन्दर की ओर पाँच कमल चक्र बनाए हैं। कृप्या देखें यह चित्र:-



शरीर (पिण्ड) में कमलों (चक्रों) का चित्र

धर्मपत्नी लक्ष्मी जी हैं। इस कमल की 8 पंखुड़ियाँ हैं।

4. हृदय कमल चक्र:- यह कमल सीने में बने दोनों स्तनों के मध्य में रीढ़ की हड्डी के साथ चिपका है। इसके देवता श्री शिव जी तथा उनकी धर्मपत्नी पार्वती जी हैं। इस कमल की 12 पंखुड़ियाँ हैं।

5. कण्ठ कमल :- यह कमल छाती की हड्डियों के ऊपर जहाँ से गला शुरू होता है, उसके पीछे रीढ़ की हड्डी के साथ है। इसकी देवी श्री देवी अर्थात् दुर्गा जी हैं। इस कमल की 16 पंखुड़ियाँ हैं।

6. त्रिकुटी कमल चक्र :- यह दोनों औँखों की भौंहों (सेलियों) के मध्यम में सिर के पिछले हिस्से में अन्य कमलों की ही पंक्ति में ऊपर है। इसका देवता सतगुरु रूप में परमेश्वर ही है। इस कमल की दो पंखुड़ियाँ हैं। एक सफेद (वर्ण) रंग की दूसरी काले (भंवर = भंवरे) के रंग की पंखुड़ियाँ हैं।

7. सहंस्र कमल चक्र :- यह कमल सिर के मध्य भाग से दो ऊंगल नीचे अन्य कमलों की ही पंक्ति में है। हिन्दू धर्म के व्यक्ति सिर पर बालों की चोटी रखते थे, कुछ अब भी रखते हैं। इसके नीचे वह सहंस्र कमल दल है। इसका देवता ब्रह्म है, इसे क्षर पुरुष भी कहते हैं जिसने गीता व वेदों का ज्ञान कहा है। इस कमल

1. मूल चक्र :- यह चक्र रीढ़ की हड्डी के अन्त से एक इंच ऊपर गुदा के पास है। इसका देवता श्री गणेश है। इस कमल की 4 पंखुड़ियाँ हैं।

2. स्वाद चक्र :- यह मूल कमल से दो इंच ऊपर रीढ़ की हड्डी के अन्दर की ओर चिपका है। इसके देवता श्री ब्रह्मा जी तथा उनकी धर्मपत्नी सावित्री जी हैं। इस कमल की 7 पंखुड़ियाँ हैं।

3. नाभि कमल चक्र :- यह नाभि के सामने उसी रीढ़ की हड्डी के साथ चिपका है। इसके देवता श्री विष्णु जी तथा उनकी

की एक हजार पंखुड़ियाँ हैं। इनको काल ब्रह्म ने प्रकाश से भर रखा है, स्वयं इसी कमल चक्र में दूर रहता है। वह स्वयं दिखाई नहीं देता, केवल पंखुड़ियाँ चमकती दिखाई देती हैं।

8. अष्ट कमल दल :- इस कमल का देवता अक्षर पुरुष है, इसे परब्रह्म भी कहते हैं, इसकी पंखुड़ियाँ भी 8 हैं। इसकी स्थिति नहीं बताऊँगा क्योंकि नकली गुरु भी इसको जानकर जनता को भ्रमित कर देंगे।

9. संख कमल दल :- इस कमल में पूर्ण ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म का निवास है। इसकी शंख पंखुड़ियाँ हैं। इसकी स्थिति भी नहीं बताऊँगा, कारण ऊपर लिख दिया है।

शरीर में ये कमल ऐसा कार्य करते हैं, जैसे टेलीविजन में चैनल लगे हैं। उन चैनलों में से जिस भी चैनल को चालू करोगे, उस पर कार्यक्रम दिखाई देगा। वह कार्यक्रम चल तो रहा है स्टूडियो में, दिख रहा है टी.वी. में। इसी प्रकार प्रत्येक कमल का फंक्शन (Function) है। इन कमलों को चालू करने के मन्त्र हैं जो यह दास (संत रामपाल दास) जाप करने को देता है। प्रथम बार दीक्षा इन्हीं चैनलों को खोलने की दी जाती है। मन्त्रों की शक्ति से सर्व कमल On (चालू) हो जाते हैं, फिर साधक अपने शरीर में लगे चैनल में उस देव के धाम को देख सकता है, वहाँ के सर्व दृश्य देख सकता है। इसलिए संत गरीब दास जी ने कहा है कि आप अपने शरीर के चैनल On (चालू) करके स्वयं देख लो कि आदम जी आप को ब्रह्म के लोक से आए दिखाई देंगे क्योंकि वहाँ पर सर्व रिकॉर्ड उपलब्ध है। जैसे वर्तमान में You Tube है, इसी प्रकार प्रत्येक देव के लोक में आप जो पूर्व में हुई घटना देखना चाहें, आप देख सकते हैं।

इसी प्रकार हजरत मुहम्मद जी आपको शिव जी के लोक से आए दिखाई देंगे। इसी प्रकार ईशा जी भी श्री विष्णु जी के लोक से आए दिखाई देंगे।

अब आप जी को अपने उद्देश्य की ओर ले चलता हूँ। आप जी को स्पष्ट करना चाहता हूँ कि जो यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान सूक्ष्म वेद, गीता तथा चारों वेदों में है, वह न तो पुराणों में है, न कुर्�आन् शरीफ में, न बाईबल में, न छः शास्त्रों तथा उपनिषदों में। उदाहरण के लिए जैसे दसरीं कक्षा तक का पाठ्यक्रम गलत नहीं है, परन्तु उसमें B.A. तथा M.A वाला ज्ञान नहीं है। वह पाठ्यक्रम गलत नहीं है, परन्तु अधूरा है। समझने के लिए इतना ही पर्याप्त है।

अन्य उदाहरण :- गीता अध्याय 2 श्लोक 46 में कहा है कि अर्जुन! बड़े जलाशय (झील) की प्राप्ति के पश्चात् छोटे जलाशय (तालाब, जोहड़) में जितनी आस्था रह जाती है, उसी प्रकार पूर्ण परमात्मा का सम्पूर्ण ज्ञान होने के पश्चात् अन्य ज्ञान तथा भगवानों में वैसी ही आस्था रह जाती है।

जिस समय गीता ज्ञान कहा गया था, उस समय सर्व मानव जलाशयों के

आसपास बसते थे, वर्षा होती थी, तालाब भर जाते थे। पूरे वर्ष उसी जलाशय से मानव स्वयं पानी पीते थे, पशुओं को उसी से पिलाते थे। उसके दो भाग कर लिए जाते थे। यदि एक वर्ष वर्षा न होती तो छोटे जलाशयों पर आश्रित व्यक्तियों को संकट हो जाता था, त्राहि-त्राहि मच जाती थी।

झील बहुत बड़ा गहरा जलाशय होता है जिसका पानी 10 वर्ष वर्षा न हो तो भी समाप्त नहीं होता। यदि किसी व्यक्ति को झील वाला जलाशय मिल जाए तो वह तुरंत छोटे जलाशय को छोड़कर उस झील के किनारे बसेरा कर लेता था। इसी प्रकार आप जी को इस पवित्र पुस्तक "गीता तेरा ज्ञान अमृत" में वह झील वाला जलाशय प्राप्त है। अतिशीघ्र इसके किनारे आकर बसेरा करें और अपना मानव जीवन सुखी करें। कृपा पीएं इस ज्ञान अमृत को और अमर हो जाएं।

हिन्दू कहते हैं कि मुसलमान सर्व विपरीत साधना करते हैं। हम उदय होते सूर्य को प्रणाम करते हैं, मुसलमान अस्त होते सूर्य को सलाम करते हैं।

विवेचन :- दोनों का आशय सही है, परन्तु विवेक की कमी है। हिन्दू उदय होते सूर्य को धन्यवाद करते हैं कि हे प्रकाश के देवता! आपका धन्यवाद करते हैं, आप ने काली रात के पश्चात् उजाला दिया जिससे हम अपना निर्वाह कार्य कर सकेंगे। आप ऐसे ही हम पर कृपा बनाए रखना।

मुसलमान जानते हैं कि सुबह तो सूर्यदेव का धन्यवाद हमारे बड़े भाईयों हिन्दुओं ने हम सबकी मंगल कामना करते हुए कर दिया। सूर्य अस्त होते समय हम सूर्य का धन्यवाद कर देते हैं कि हे प्रकाश करने वाले सूर्य! आपने हम सर्व जीवों को प्रकाश प्रदान करके हम पर बड़ा उपकार किया। हम आपका धन्यवाद करते हैं। आप कल फिर इसी प्रकार कृपा करना, आप भी अल्लाह अकबीर की रचना हो और हम भी उसी की सन्तान हैं।

वास्तव में न तो मुसलमान सूर्य की पूजा करते हैं, न हिन्दू। दोनों पक्ष पूर्व-पश्चिम की ओर मुख करके सुबह हिन्दू तथा शाम को मुसलमान परमात्मा की भी पूजा करते हैं, केवल विवेक की कमी है।

पूजा केवल पूर्ण परमात्मा की करनी चाहिए। अन्य देवों, फरिश्तों का आदर करना चाहिए। अधिक ज्ञान के लिए आगे पढ़ें "गीता का सत्य सार"।

"गीता का सत्य सार"

❖ गीता = श्रीमद्भगवत् गीता।

1. प्रश्न :- गीता का ज्ञान कब तथा किसने, किसको सुनाया, किसने लिखा? कृप्या विस्तार से बताएं।

उत्तर :- श्री मद्भगवत् गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके काल भगवान ने (जिसे वेदों व गीता में "ब्रह्म" नाम से भी जाना जाता है) अर्जुन

को सुनाया। जिस समय कौरव तथा पाण्डव अपनी सम्पत्ति अर्थात् दिल्ली के राज्य पर अपने-अपने हक का दावा करके युद्ध करने के लिए तैयार हो गए थे, दोनों की सेनाएँ आमने-सामने कुरुक्षेत्र के मैदान में खड़ी थी। अर्जुन ने देखा कि सामने वाली सेना में भीष्म पितामह, गुरु द्रोणाचार्य, रिश्तेदार, कौरवों के बच्चे, दामाद, बहनोई, ससुर आदि-आदि लड़ने-मरने के लिए खड़े हैं। कौरव और पाण्डव आपस में चबेरे भाई थे। अर्जुन में साधु भाव जागृत हो गया तथा विचार किया कि जिस राज्य को प्राप्त करने के लिए हमें अपने चबेरे भाईयों, भतीजों, दामादों, बहनोइयों, भीष्मपिता जी तथा गुरुजनों को मारेंगे। यह भी नहीं पता कि हम कितने दिन संसार में रहेंगे? इसलिए इस प्रकार से प्राप्त राज्य के भोग से अच्छा तो हम भिक्षा माँगकर अपना निर्वाह कर लेंगे, परन्तु युद्ध नहीं करेंगे। यह विचार करके अर्जुन ने धनुष-बाण हाथ से छोड़ दिया तथा रथ के पिछले भाग में बैठ गया। अर्जुन की ऐसी दशा देखकर श्री कृष्ण बोले :- देख ले सामने किस योद्धा से आपने लड़ना है। अर्जुन ने उत्तर दिया कि हे कृष्ण! मैं किसी कीमत पर भी युद्ध नहीं करूँगा। अपने उद्देश्य तथा जो विचार मन में उठ रहे थे, उनसे भी अवगत कराया। उसी समय श्री कृष्ण जी में काल भगवान प्रवेश कर गया जैसे प्रेत किसी अन्य व्यक्ति के शरीर में प्रवेश करके बोलता है। ऐसे काल ने श्री कृष्ण के शरीर में प्रवेश करके श्री मद्भगवत् गीता का ज्ञान युद्ध करने की प्रेरणा करने के लिए तथा कलयुग में वेदों को जानने वाले व्यक्ति नहीं रहेंगे, इसलिए चारों वेदों का संक्षिप्त वर्णन व सारांश "गीता ज्ञान" रूप में 18 अध्यायों में 700 श्लोकों में सुनाया। श्री कृष्ण को तो पता नहीं था कि मैंने क्या बोला था गीता ज्ञान में?

❖ कुछ वर्षों के बाद वेदव्यास ऋषि ने इस अमृतज्ञान को संस्कृत भाषा में देवनागरी लिपि में लिखा। बाद में अनुवादकों ने अपनी बुद्धि के अनुसार इस पवित्र ग्रन्थ का हिन्दी तथा अन्य भाषाओं में अनुवाद किया जो वर्तमान में गीता प्रैस गोरखपुर (U.P) से प्रकाशित किया जा रहा है।

प्रश्न :- आज (सन् 2012) तक तो यह सुनने में आया है कि गीता जी का ज्ञान श्री कृष्ण ने बोला। आपने बताया कि श्री कृष्ण के शरीर में प्रवेश करके काल ने गीता ज्ञान कहा और श्री कृष्ण को तो पता ही नहीं था कि उन्होंने क्या ज्ञान कहा था? यह असत्य प्रतीत होता है, कोई प्रमाण बताएं।

उत्तर:- आपको ढेर सारे प्रमाण देते हैं, जिनसे स्वसिद्ध हो जाता है कि गीता शास्त्र का ज्ञान "काल" ने कहा।

सर्व प्रथम गीता से ही प्रमाणित करता हूँ।

❖ प्रमाण नं. 1. :- गीता अध्याय 10 में जब गीता ज्ञान दाता ने अपना विराट रूप दिखा दिया तो उसको देखकर अर्जुन काँपने लगा, भयभीत हो गया।

यहाँ पर यह बताना भी अनिवार्य है कि अर्जुन का साला श्री कृष्ण था क्योंकि श्री कृष्ण की बहन सुभद्रा का विवाह अर्जुन से हुआ था।

गीता ज्ञान दाता ने जिस समय अपना भयंकर विराट रूप दिखाया जो हजार भुजाओं वाला था। तब अर्जुन ने पूछा (गीता अध्याय 11 श्लोक 31) कि हे देव! आप कौन हैं? हे सहंस्राबाहु (हजार भुजा वाले) आप अपने चतुर्भुज रूप में दर्शन दीजिए (क्योंकि अर्जुन उन्हें विष्णु अवतार कृष्ण तो मानता ही था, परन्तु उस समय श्री कृष्ण के शरीर से बाहर निकलकर काल ने अपना अपार विराट रूप दिखाया था) मैं भयभीत हूँ, आपके इस रूप को सहन नहीं कर पा रहा हूँ। (गीता अध्याय 11 श्लोक 46)

❖ विचारें पाठक जन : क्या हम अपने साले से पूछेंगे कि हे महानुभव! बताईए आप कौन हैं? नहीं। एक समय एक व्यक्ति में प्रेत बोलने लगा। साथ बैठे भाई ने पूछा आप कौन बोल रहे हो? उत्तर मिला कि तेरा मामा बोल रहा हूँ। मैं दुर्घटना में मरा था। क्या हम अपने भाई को नहीं जानते? ठीक इसी प्रकार श्री कृष्ण में काल बोल रहा था।

❖ प्रमाण नं. 2 गीता अध्याय 11 श्लोक 21 में अर्जुन ने कहा कि आप तो देवताओं के समूह के समूह को ग्रास (खा) रहे हैं जो आपकी स्तुति हाथ जोड़कर भयभीत होकर कर रहे हैं। महर्षियों तथा सिद्धों के समुदाय आप से अपने जीवन की रक्षार्थ मंगल कामना कर रहे हैं। गीता अध्याय 11 श्लोक 32 में गीता ज्ञान दाता ने बताया कि हे अर्जुन! मैं बढ़ा हुआ काल हूँ। अब प्रवर्त हुआ हूँ अर्थात् श्री कृष्ण के शरीर में अब प्रवेश हुआ हूँ। सर्व व्यक्तियों का नाश करूँगा। विपक्ष की सर्व सेना, तू युद्ध नहीं करेगा तो भी नष्ट हो जाएगी।

इससे सिद्ध हुआ कि गीता का ज्ञान काल ने कहा है। श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रविष्ट होकर श्री कृष्ण जी ने कभी नहीं कहा कि मैं काल हूँ। श्री कृष्ण जी को देखकर कोई भयभीत नहीं होता था। गोप-गोपियाँ, ग्वाल-बाल, पशु-पक्षी सब दर्शन करके आनन्दित होते थे। तो “क्या श्री कृष्ण जी काल थे?” नहीं। इसलिए गीता ज्ञान दाता “काल” है जिसने श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके गीता शास्त्र का ज्ञान दिया।

❖ प्रमाण नं. 3 - गीता अध्याय 11 श्लोक 47 में गीता ज्ञानदाता ने कहा कि हे अर्जुन! मैंने प्रसन्न होकर अपनी शक्ति से तेरी दिव्य दृष्टि खोलकर यह विराट रूप दिखाया है। यह विराट रूप तेरे अलावा पहले किसी ने नहीं देखा है।

❖ विचारणीय विषय :- प्रिय पाठको! महाभारत ग्रन्थ में प्रकरण आता है कि जिस समय श्री कृष्ण जी कौरवों की सभा में उपस्थित थे और उनसे कह रहे थे कि आप दोनों (कौरव और पाण्डव) आपस में बातचीत करके अपनी सम्पत्ति (राज्य) का बट्टवारा कर लो, युद्ध करना शोभा नहीं देता। पाण्डवों ने कहा कि

हमें पाँच (5) गाँव दे दो, हम उन्हीं से निर्वाह कर लेंगे। दुर्योधन ने यह भी माँग नहीं मानी और कहा कि पाण्डवों के लिए सुई की नोक के समान भी राज्य नहीं है, युद्ध करके ले सकते हैं। इस बात से श्री कृष्ण भगवान बहुत नाराज हो गए तथा दुर्योधन से कहा कि तू पृथ्वी के नाश के लिए जन्मा है, कुलनाश करके टिकेगा। भले मानव! कहाँ आधा, राज्य कहाँ 5 गाँव। कुछ तो शर्म कर ले।

इतनी बात श्री कृष्ण जी के मुख से सुनकर दुर्योधन राजा आग-बबूला हो गया और सभा में उपस्थित अपने भाईयों तथा मन्त्रियों से बोला कि इस कृष्ण यादव को गिरफ्तार कर लो। उसी समय श्री कृष्ण जी ने विराट रूप दिखाया। सभा में उपस्थित सर्व सभासद उस विराट रूप को देखकर भयभीत होकर कुर्सियों के नीचे छिप गए, कुछ आँखों पर हाथ रखकर जमीन पर गिर गए। श्री कृष्ण जी सभा छोड़ कर चले गए तथा अपना विराट रूप समाप्त कर दिया।

अब उस बात पर विचार करते हैं जो गीता अध्याय 11 श्लोक 47 में गीता ज्ञान दाता ने कहा था कि यह मेरा विराट रूप तेरे अतिरिक्त अर्जुन! पहले किसी ने नहीं देखा था। यदि श्री कृष्ण गीता ज्ञान बोल रहे होते तो यह कभी नहीं कहते कि मेरा विराट रूप तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा था क्योंकि श्री कृष्ण जी के विराट रूप को कौरव तथा अन्य सभासद पहले देख चुके थे।

इससे सिद्ध हुआ कि श्रीमद्भगवत् गीता का ज्ञान श्री कृष्ण ने नहीं कहा, उनके शरीर में प्रेतवत् प्रवेश करके काल (क्षर पुरुष) ने कहा था। यह तीसरा प्रमाण हुआ।

❖ प्रमाण नं. 4- श्री विष्णु पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के पृष्ठ 233 पर प्रमाण है कि एक समय देवताओं और राक्षसों का युद्ध हुआ। देवता पराजित होकर समुद्र के किनारे जाकर छिप गए। फिर भगवान की तपस्या स्तुति करने लगे। काल का विधान है अर्थात् काल ने प्रतिज्ञा कर रखी है कि मैं अपने वास्तविक काल रूप में कभी किसी को दर्शन नहीं दूँगा। अपनी योग माया से छिपा रहूँगा। (प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में) इसलिए यह काल (क्षर पुरुष) किसी को विष्णु जी के रूप में दर्शन देता है, किसी को शंकर जी के रूप में, किसी को ब्रह्मा जी के रूप में दर्शन देता है।

देवताओं को श्री विष्णु जी के रूप में दर्शन देकर कहा कि मैंने जो आप की समस्या है, वह जान ली है। आप पुरंज्य राजा को युद्ध के लिए तैयार कर लो। मैं उस राजा श्रेष्ठ के शरीर में प्रविष्ट होकर राक्षसों का नाश कर दूँगा, ऐसा ही किया गया। (अधिक ज्ञान के लिए आप जी विष्णु पुराण पढ़ सकते हैं।

❖ प्रमाण नं. 5- श्री विष्णु पुराण के पृष्ठ 243 पर प्रमाण है कि एक समय नागवंशियों तथा गंधर्वों का युद्ध हुआ। गंधर्वों ने नागों के सर्व बहुमूल्य हीरे, लाल व खजाने लूट लिए, उनके राज्य पर भी कब्जा कर लिया। नागाओं ने भगवान की

स्तुति की, वही “काल” भगवान विष्णु रूप धारण करके प्रकट हुआ। कहा कि आप पुरुकुत्स राजा को गंधर्वों के साथ युद्ध के लिए तैयार कर लें। मैं राजा पुरुकुत्स के शरीर में प्रवेश करके दुष्ट गंधर्वों का नाश कर दूँगा, ऐसा ही हुआ।

उपरोक्त विष्णु पुराण की दोनों कथाओं से स्पष्ट हुआ (प्रमाणित हुआ) कि यह काल भगवान (क्षर पुरुष) इस प्रकार अव्यक्त (गुप्त) रहकर कार्य करता है। इसी प्रकार इसने श्री कृष्ण जी में प्रवेश करके गीता का ज्ञान कहा है।

❖ प्रमाण नं. 6- महाभारत ग्रन्थ में (गीता प्रैस गोरखपुर (U.P) से प्रकाशित में) भाग-2 पृष्ठ 667 पर लिखा है कि महाभारत के युद्ध के पश्चात् राजा युधिष्ठिर को राजगद्दी पर बैठाकर श्री कृष्ण जी ने द्वारिका जाने की तैयारी की। तब अर्जुन ने श्री कृष्ण जी से कहा कि आप वह गीता वाला ज्ञान फिर से सुनाओ, मैं उस ज्ञान को भूल गया हूँ। श्री कृष्ण जी ने कहा कि हे अर्जुन! आप बड़े बुद्धिहीन हो, बड़े श्रद्धाहीन हो। आपने उस अनमोल ज्ञान को क्यों भुला दिया, अब मैं उस ज्ञान को नहीं सुना सकता क्योंकि मैंने उस समय योगयुक्त होकर गीता का ज्ञान सुनाया था।

❖ विचार करें :- युद्ध के समय योगयुक्त हुआ जा सकता है तो शान्त वातावरण में योगयुक्त होने में क्या समस्या हो सकती है? वास्तव में यह ज्ञान काल ने श्री कृष्ण में प्रवेश करके बोला था।

❖ श्री कृष्ण जी को स्वयं तो वह गीता ज्ञान याद नहीं, यदि वे वक्ता थे तो वक्ता को तो सर्व ज्ञान याद होना चाहिए। श्रोता को तो प्रथम बार में 40 प्रतिशत (चालीस प्रतिशत) ज्ञान याद रहता है। इससे सिद्ध है कि गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी में प्रवेश होकर काल (क्षर पुरुष) ने बोला था। उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि श्रीमद् भगवत् गीता का ज्ञान श्री कृष्ण ने नहीं कहा। उनको तो पता ही नहीं कि क्या कहा था, श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके काल पुरुष (क्षर पुरुष) ने बोला था।

प्रश्न 2 :- काल पुरुष कौन है?

उत्तर :- इसके लिए पढ़ें सृष्टि रचना जो पृष्ठ 128 से 183 तक लिखी है।

प्रश्न 3 :- काल भगवान अर्थात् ब्रह्म अविनाशी है या जन्मता-मरता है?

उत्तर :- जन्मता-मरता है।

प्रश्न 4 :- कहाँ प्रमाण है?

उत्तर : श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता स्वयं स्वीकार करता है कि मेरी भी जन्म व मृत्यु होती है, मैं अविनाशी नहीं हूँ। कहा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। तू, मैं और ये राजा लोग व सैनिक पहले भी थे, आगे भी होंगे, यह न जान कि हम केवल वर्तमान

में ही हैं। मेरी उत्पत्ति को न तो देवता लोग जानते और न ही ऋषिजन क्योंकि यह सब मेरे से उत्पन्न हुए हैं।

इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता काल पुरुष अविनाशी नहीं है। इसलिए इसको क्षर पुरुष भी कहा जाता है।

प्रश्न 5 : क्या ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव अविनाशी हैं?

उत्तर : नहीं। ये नाशवान हैं, इनकी भी जन्म-मृत्यु होती है, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी के माता-पिता भी हैं।

प्रश्न 6 : कोई प्रमाण बताओ, माता-पिता का नाम भी बताओ।

उत्तर : श्री देवी महापुराण (गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित) के तीसरे स्कंद पृष्ठ 123 पर श्री विष्णु जी ने अपनी माता दुर्गा की स्तुति करते हुए कहा है कि है मात! आप शुद्ध स्वरूपा हो, सारा संसार आप से ही उद्भाषित हो रहा है, हम आपकी कृपा से विद्यमान हैं, मैं, ब्रह्मा और शंकर तो जन्मते-मरते हैं, हमारा तो अविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मृत्यु) हुआ करता है, हम अविनाशी नहीं हैं। तुम ही जगत जननी और सनातनी देवी हो और प्रकृति देवी हो। शंकर भगवान बोले, हे माता! विष्णु के बाद उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा जब आप का पुत्र है तो क्या मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर तुम्हारी सन्तान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हो। इस देवी महापुराण के उल्लेख से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शंकर जी को जन्म देने वाली माता श्री दुर्गा देवी (अष्टंगी देवी) है और तीनों नाशवान हैं।

श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी का पिता कौन है?

प्रमाण :- श्री शिव महापुराण (गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित) में इनके पिता का ज्ञान है, श्री शिव महापुराण के रुद्रसंहिता खण्ड में पृष्ठ 100 से 110 तक निम्न प्रकरण है :-

अपने पुत्र नारद जी के प्रश्न का उत्तर देते हुए श्री ब्रह्मा जी ने कहा कि है पुत्र! आपने सृष्टि के उत्पत्तिकर्ता के विषय में जो प्रश्न किया है, उसका उत्तर सुन!

प्रारम्भ में केवल एक "सद्ब्रह्म" ही शेष था। सब स्थानों पर प्रलय था। उस निराकार परमात्मा ने अपना स्वरूप शिव जैसा बनाया। उसको "सदाशिव" कहा जाता है, उसने अपने शरीर से एक स्त्री निकाली, वह स्त्री दुर्गा, जगदम्बिका, प्रकृति देवी तथा त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) की जननी कहलाई जिसकी आठ भुजाएँ हैं, इसी को शिवा भी कहा है।

❖ "श्री विष्णु जी की उत्पत्ति":- सदाशिव और शिवा (दुर्गा) ने पति-पत्नी रूप में रहकर एक पुत्र की उत्पत्ति की, उसका नाम विष्णु रखा।

❖ "श्री ब्रह्मा जी की उत्पत्ति" :- श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि जिस प्रकार

विष्णु जी की उत्पत्ति शिव तथा शिवा के संयोग (भोग-विलास) से हुई है, उसी प्रकार शिव और शिवा ने मेरी भी उत्पत्ति की।

नोट :- यहाँ पर शिव को काल ब्रह्मा जानें, शिवा को दुर्गा जानें, प्रिय पाठको! इस रूद्र संहिता खण्ड में शंकर जी की उत्पत्ति का प्रकरण नहीं है, यह अनुवादकर्ता की गलती है। वैसे देवी पुराण में शंकर जी ने स्वयं स्वीकारा है कि मेरा जन्म दुर्गा (प्रकृति) से हुआ है।

❖ श्री शंकर जी भी शिव तथा शिवा का पुत्र है :- श्री शिव महापुराण के विध्वेश्वर संहिता खण्ड पृष्ठ 24 से 30 पर प्रमाण :- एक समय श्री ब्रह्मा जी तथा श्री विष्णु जी का इस बात पर युद्ध हो गया कि ब्रह्मा जी ने कहा मैं तेरा पिता हूँ क्योंकि यह संसार मेरे से उत्पन्न हुआ है, मैं प्रजापिता हूँ। विष्णु जी ने कहा कि मैं तेरा पिता हूँ, तू मेरे नाभि कमल से उत्पन्न हुआ है। दोनों एक-दूसरे को मारने के लिए तत्पर हो गए। उसी समय सदाशिव अर्थात् काल ब्रह्मा ने उन दोनों के बीच में एक सफेद रंग का प्रकाशमय स्तंभ खड़ा कर दिया, फिर स्वयं शंकर के रूप में प्रकट होकर उनको बताया कि तुम कोई भी कर्ता नहीं हो।

हे पुत्रो! मैंने तुमको जगत की उत्पत्ति और स्थिति रूपी दो कार्य दिए हैं, इसी प्रकार मैंने शंकर और रूद्र को दो कार्य संहार व तिरोगति दिए हैं, मुझे वेदों में ब्रह्म कहा है। मेरे पाँच मुख हैं, एक मुख से अकार (अ), दूसरे मुख से उकार (उ) तथा तीसरे मुख से मुकार (म), चौथे मुख से बिन्दु (.) तथा पाँचवे मुख से नाद (शब्द) प्रकट हुए हैं, उन्हीं पाँच अववर्यों से एकीभूत होकर एक अक्षर ओम् (ऊँ) बना है, यह मेरा मूल मन्त्र है।

उपरोक्त शिव महापुराण के प्रकरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शंकर जी की माता श्री दुर्गा देवी (अष्टंगी देवी) है तथा पिता सदाशिव अर्थात् "काल ब्रह्मा" है जिसने श्रीमद् भगवत् गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी में प्रवेश करके बोला था। इसी को क्षर पुरुष, क्षर ब्रह्म भी कहा गया है। यही प्रमाण श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 में भी है कि रज् (रजगुण ब्रह्मा), सत् (सत्तगुण विष्णु), तम् (तमगुण शंकर) तीनों गुण प्रकृति अर्थात् दुर्गा देवी से उत्पन्न हुए हैं। प्रकृति तो सब जीवों को उत्पन्न करने वाली माता है। मैं (गीता ज्ञान दाता) सब जीवों का पिता हूँ। मैं दुर्गा (प्रकृति) के गर्भ में बीज स्थापित करता हूँ जिससे सबकी उत्पत्ति होती है।

प्रश्न 7 : यह कहाँ प्रमाण है कि रजगुण ब्रह्मा है, सत्तगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर है?

उत्तर : 1. श्री मार्कण्डेय पुराण (सचित्र मोटा टाईप गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के 123 पृष्ठ पर कहा है कि रजगुण ब्रह्मा जी, सत्तगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर, तीनों ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ हैं, ये ही तीन देवता हैं। ये ही तीन गुण हैं।

2. श्री देवी महापुराण संस्कृत व हिन्दी अनुवाद (श्री वैंकटेश्वर प्रैस बम्बई से प्रकाशित) में तीसरे स्कंद अध्याय 5 श्लोक 8 में लिखा है कि शंकर भगवान बोले, हे मात! यदि आप हम पर दयालु हैं तो मुझे तमोगुण, ब्रह्मा रजोगुण तथा विष्णु सतोगुण युक्त क्यों किया?

उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शंकर जी हैं।

प्रश्न 8 :- परमात्मा को अजन्मा, अजर-अमर कहते हैं। उपरोक्त प्रकरण तथा प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा श्री विष्णु तथा श्री शंकर तीनों नाशवान हैं, फिर अविनाशी परमात्मा कौन है, क्या ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर और काल ब्रह्म परमात्मा नहीं हैं? प्रमाण सहित बताएँ :-

उत्तर :- पहले स्पष्ट करते हैं कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु, श्री शंकर तथा ब्रह्म परमात्मा हैं या नहीं। यह तो आपने अपने प्रश्न में ही सिद्ध कर दिया कि परमात्मा तो अजन्मा अर्थात् जिसका कभी जन्म न हुआ हो, वह होता है, पूर्वोक्त विवरण तथा प्रमाणों से सिद्ध हो चुका है कि ब्रह्मा, विष्णु और शंकर के माता-पिता हैं। ब्रह्म भी नाशवान है, इसका भी जन्म हुआ है, इससे स्वसिद्ध हुआ कि ये परमात्मा नहीं हैं। अब प्रश्न रहा फिर अविनाशी कौन है? इसके उत्तर में श्री मद्भगवत् गीता से ही प्रमाणित करते हैं कि अविनाशी परमात्मा गीता ज्ञान देने वाले (ब्रह्म) से अन्य है। श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता ने अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी कि मेरी उत्पत्ति हुई है, मैं जन्मता-मरता हूँ, अर्जुन मेरे और तेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, मैं भी नाशवान हूँ। गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में भी कहा है कि अविनाशी तो उसको जान जिसको मारने में कोई भी सक्षम नहीं है और जिस परमात्मा ने सर्व की रचना की है, अविनाशी परमात्मा का यह प्रथम प्रमाण हुआ।

❖ प्रमाण नं. 2 : श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरुष (प्रभु) कहे हैं। गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में कहा है कि इस लोक में दो पुरुष प्रसिद्ध हैं :- क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष। ये दोनों प्रभु तथा इनके अन्तर्गत सर्व प्राणी नाशवान हैं, आत्मा तो सबकी अमर है। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि उत्तम पुरुष अर्थात् पुरुषोत्तम तो कोई अन्य ही है, जिसे परमात्मा कहा गया है जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है, वह वास्तव में अविनाशी है।

गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है कि जो साधक केवल जरा (वृद्धावस्था), मरण (मृत्यु), दुःख से छूटने के लिए प्रयत्न करते हैं। वे तत् ब्रह्म को जानते हैं, सब कर्मों तथा सम्पूर्ण अध्यात्म से परीचित हैं। गीता अध्याय 8

श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा कि "तत् ब्रह्म" क्या है? गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया कि वह "परम अक्षर ब्रह्म" है अर्थात् परम अक्षर पुरुष है। (पुरुष कहो चाहे ब्रह्म) गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में जो "उत्तम पुरुषः तु अन्यः परमात्मा इति उदाहृतः" कहा है, वह "परम अक्षर ब्रह्म" है, इसी को पुरुषोत्तम कहा है।

शंका समाधान

गीता अध्याय 15 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं उन सर्व प्राणियों से उत्तम अर्थात् शक्तिमान हूँ जो मेरे 21 ब्रह्माण्डों में रहते हैं, इसलिए लोकवेद अर्थात् दन्त कथा के आधार से मैं पुरुषोत्तम प्रसिद्ध हूँ। वास्तव में पुरुषोत्तम तो गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में स्पष्ट कर दिया। उत्तम पुरुष अर्थात् पुरुषोत्तम तो क्षर पुरुष (गीता ज्ञान दाता) तथा अक्षर पुरुष (जो 7 शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है) से अन्य ही है, वही परमात्मा कहा जाता है। वह सर्व का धारण-पोषण करता है, वास्तव में अविनाशी है। वह "परम अक्षर ब्रह्म" है जो असंख्य ब्रह्माण्डों का मालिक है जो सर्व सृजनहार है, कुल का मालिक है अर्थात् परमात्मा है।

प्रश्न 9 :- अक्षर का अर्थ अविनाशी होता है। आपने गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में भी अक्षर पुरुष को भी नाशवान बताया है, कृप्या स्पष्ट करें।

उत्तर :- यह सत्य है कि "अक्षर" का अर्थ अविनाशी होता है, परन्तु प्रकरणवश अर्थ अन्य भी होता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में कहा है कि क्षर और अक्षर ये पुरुष (प्रभु) इस लोक में है, ये दोनों तथा इनके अन्तर्गत जितने जीव हैं, वे नाशवान हैं, आत्मा किसी की भी नहीं मरती। फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में स्पष्ट किया है कि पुरुषोत्तम तो उपरोक्त दोनों प्रभुओं से अन्य है। वही अविनाशी है, वही सबका धारण-पोषण करने वाला वास्तव में अविनाशी है। गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में तत् ब्रह्म को परम अक्षर ब्रह्म कहा है। अक्षर का अर्थ अविनाशी है, परन्तु यहाँ परम अक्षर ब्रह्म कहा है। इससे भी सिद्ध हुआ कि अक्षर से आगे परम अक्षर ब्रह्म है, वह वास्तव में अविनाशी है।

❖ **प्रमाण :-** जैसे ब्रह्मा जी की आयु 100 वर्ष बताई जाती है, देवताओं का वर्ष कितने समय का है? सुनो! चार युग (सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग तथा कलयुग) का एक चतुर्युग होता है जिसमें मनुष्यों के 43,20,000 (त्रितालीस लाख बीस हजार) वर्ष होते हैं। 1008 चतुर्युग का ब्रह्मा जी का दिन और इतनी ही रात्रि होती है, ऐसे 30 दिन-रात्रि का एक महीना तथा 12 महीनों का ब्रह्मा जी का एक वर्ष हुआ। ऐसे 100 (सौ) वर्ष की श्री ब्रह्मा जी की आयु है।

श्री विष्णु जी की आयु श्री ब्रह्मा जी से 7 गुणा है। = 700 वर्ष।

श्री शंकर जी की आयु श्री विष्णु जी से 7 गुणा अधिक = 4900 वर्ष।

ब्रह्म (क्षर पुरुष) की आयु = 70 हजार शंकर की मृत्यु के पश्चात् एक ब्रह्म की मृत्यु होती है अर्थात् क्षर पुरुष की मृत्यु होती है। इतना समय अक्षर पुरुष का एक युग होता है।

अक्षर पुरुष की आयु :- गीता अध्याय 8 श्लोक 17 में कहा है:-

सहंस्र युग पर्यन्तम् अहः यत् ब्रह्मणः विदुः ।

रात्रिम् युग सहंस्रान्तम् ते अहोरात्रा विदः जनाः ॥ (17)

अनुवाद :- आज तक सर्व अनुवादकर्ताओं ने उचित अनुवाद नहीं किया। सबने ब्रह्मा का एक हजार चतुर्युग लिखा है, यह गलत है। मूल पाठ में "संहस्र युग" लिखा है, न कि चतुर संहस्र युग। इसलिए गीता अध्याय 8 श्लोक 17 का अनुवाद ऐसे बनता है:- (ब्रह्मणः) अक्षर पुरुष का (यत) जो (अहः) दिन है वह (संहस्रयुग प्रयन्तम्) एक हजार युग की अवधि वाला (विदुः) जानते हैं (ते) वे जना व्यक्ति (अहोरात्र) दिन-रात को (विदः) जानने वाले हैं।

भावार्थ :- इस श्लोक में "ब्रह्मा" शब्द मूल पाठ में नहीं है और न ही "चतुर युग" शब्द मूल पाठ में है, इसमें "ब्रह्मण" शब्द है जिसका अर्थ सचिदानन्द ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म होता है।

❖ प्रमाण :- गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ब्रह्मणः का अर्थ सचिदानन्द घन ब्रह्म किया है, वह अनुवादकों ने ठीक किया है। इस गीता अध्याय 8 श्लोक 17 में आयु का प्रकरण है। इसलिए यहाँ पर "ब्रह्मण" का अर्थ "अक्षर ब्रह्म" बनता है, यहाँ अक्षर पुरुष की आयु की जानकारी दी है। अक्षर पुरुष का एक दिन उपरोक्त एक हजार युग का होता है। 70 हजार शंकर की मृत्यु के पश्चात् एक क्षर पुरुष की मृत्यु होती है, वह समय एक युग अक्षर पुरुष का होता है। ऐसे बने हुए एक हजार युग का अक्षर पुरुष का दिन तथा इतनी ही रात्रि होती है, ऐसे 30 दिन रात्रि का एक महीना तथा 12 महीनों का अक्षर पुरुष का एक वर्ष तथा 100 वर्ष की अक्षर पुरुष की आयु है। इसके पश्चात् इसकी मृत्यु होती है, इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष दोनों नाशवान कहे हैं। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में जो वास्तव में अविनाशी परमात्मा कहा है। यह परमात्मा सर्व प्राणियों के नष्ट होने पर भी नाश में नहीं आता।

प्रमाण :- गीता अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में स्पष्ट है कि वह परम अक्षर ब्रह्म सब प्राणियों के नष्ट होने पर भी कभी नष्ट नहीं होता।

उदाहरण :- जैसे सफेद मिट्टी के बने कप-प्लेट होते हैं, उनका ज्ञान है कि हाथ से छूटे और पक्के फर्श पर गिरे और टूटे अर्थात् नाशवान "क्षर" है, यह स्थिति तो क्षर पुरुष की जानो।

2. दूसरे कप-प्लेट स्टील (इस्पॉत) के बने हों, वे बहुत समय उपरान्त जंग

लगकर नष्ट होते हैं, शीघ्र टूटते व नष्ट नहीं होते। मिट्टी के बने कप-प्लेट की तुलना में स्टील के कप-प्लेट चिर-स्थाई हैं, अविनाशी प्रतीत होते हैं, परन्तु हैं नाशवान। इसी प्रकार स्थिति "अक्षर पुरुष" की जानो।

3. तीसरे कप-प्लेट सोने के बने हों। वे कभी नष्ट नहीं होते, उनको जंग नहीं लगता। यह स्थिति "परम अक्षर ब्रह्म" की जानो। यह वास्तव में अविनाशी हैं, इसलिए प्रकरणवश "अक्षर" का अर्थ नाशवान भी होता है, वास्तव में अक्षर का अर्थ अविनाशी परमात्मा होता है।

उदाहरण के लिए :- गीता अध्याय 8 श्लोक 11 में मूल पाठ =

यत् अक्षरम् वेद विदः वदन्ति विशन्ति यत् यतयः बीतरागाः

यत् इच्छन्तः ब्रह्म चर्यम् चरन्ति तत् ते पदम् संग्रहेण प्रवक्ष्ये (11)

अनुवाद : इस श्लोक में "अक्षर" का अर्थ अविनाशी परमात्मा के लिए हैः-(वेद विदः) तत्त्वदर्शी सन्त अर्थात् वेद के तात्पर्य को जानने वाले महात्मा (यत्) जिसे (यतयः) साधना रत्त साधक (यत्) जिस लोक में (विशन्ति) प्रवेश करते हैं और (यत्) जिस परमात्मा को (इच्छन्तः) चाहने वाले साधक (ब्रह्म चर्यम्) ब्रह्मचर्य अर्थात् शिष्य परम्परा का (चरन्ति) आचरण करते हैं, (तत्) उस (पदम्) पद को (ते) तेरे लिए मैं (संग्रहेषा) संक्षेप में (प्रवक्ष्ये) कहूँगा। इस श्लोक में "अक्षर" का अर्थ अविनाशी परमात्मा ठीक है। कबीर जी ने सूक्ष्म वेद में कहा है कि -

गुरु बिन काहू न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भूष छिड़े मूढ़ किसाना।

गुरु बिन वेद पढ़े जो प्राणी, समझे ना सार रहे अज्ञानी ॥

प्रश्न 10 : आप पूर्ण मोक्ष किसे मानते हैं?

उत्तर :- गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में वर्णन है कि तत्त्वदर्शी सन्त की प्राप्ति के पश्चात् तत्त्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान को काटकर अर्थात् अच्छी तरह ज्ञान समझकर उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की (सत्यलोक की) खोज करनी चाहिए। जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते अर्थात् उनका जन्म कभी नहीं होता। जिस परमात्मा ने सर्व रचना की है, केवल उसी की भक्ति पूजा करो। पूर्ण मोक्ष उसी को कहते हैं जिसकी प्राप्ति के पश्चात् पुनः जन्म न हो। जन्म-मरण का चक्र सदा के लिए समाप्त हो जाए।

प्रश्न 11 : क्या गीता ज्ञान दाता ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष संभव है?

उत्तर : नहीं।

प्रश्न 12 : गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में प्रमाण है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! मुझे प्राप्त होकर पुनर्जन्म नहीं होता। आप कैसे कहते हैं कि ब्रह्म भक्ति से पूर्ण मोक्ष संभव नहीं।

उत्तर : श्री देवी महापुराण (सचित्र मोटा टाईप केवल हिन्दी गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के सातवें स्कंध पृष्ठ 562-563 पर प्रमाण है कि श्री देवी

जी ने राजा हिमालय को उपदेश देते हुए कहा है कि हे राजन! अन्य सब बातों को छोड़कर मेरी भक्ति भी छोड़कर केवल एक ऊँ नाम का जाप कर, "ब्रह्म" प्राप्ति का यही एक मंत्र है, इससे संसार के उस पार जो ब्रह्म है, उसको पा जाओगे, तुम्हारा कल्याण हो। वह ब्रह्मलोक रूपी दिव्याकाश में रहता है।

भावार्थ है कि ब्रह्म साधना का केवल एक ओम् (ऊँ) नाम का जाप है, इससे ब्रह्म की प्राप्ति होती है और वह साधक ब्रह्म लोक में चला जाता है। इसी गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्म लोक सहित सर्व लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् ब्रह्मलोक में गए साधक का भी पुनर्जन्म होता है। ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष नहीं होता। इस गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का अनुवाद (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित गीता में तथा अन्य प्रकाशन की गीता में) गलत किया है।

गीता अध्याय 8 श्लोक 16 :-

आ ब्रह्म भुवनात् लोकाः पुनरावर्तिनः अर्जुन ।

माम् उपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विधते ॥ (16)

इसका अनुवाद गलत किया है, जो इस प्रकार है :-

हे अर्जुन! ब्रह्म लोक प्रयन्त सब लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् जहाँ जाने के पश्चात् पुनः संसार में लौटकर आना पड़े। परन्तु मुझे प्राप्त होकर पुनः जन्म नहीं होता।

इसका वास्तविक अनुवाद इस प्रकार है :- ब्रह्म लोक तक सर्व लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् ब्रह्म लोक में भी गए व्यक्तियों का पुनर्जन्म होता है जो यह नहीं जानते हैं। हे अर्जुन! मुझे प्राप्त होकर भी उनका पुनर्जन्म है, इस श्लोक में "विद्यते" शब्द का अर्थ "जानना" बनता है। गीता अध्याय 6 श्लोक 23 में "विद्यात्" शब्द का अर्थ जानना किया है। यहाँ इस श्लोक में भी "विद्यते" का अर्थ "जानना" बनता है। अधिक स्पष्ट करने के लिए गीता अध्याय 8 श्लोक 15 पर्याप्त है।

मूल पाठ :-माम उपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयम् अशाश्वतम् ।

न आप्नुवन्ति महात्मनः संसिद्धिम् परमाम् गताः ॥ (15)

अनुवाद :- (माम) मुझे प्राप्त होकर (पुनर्जन्म) पुनर्जन्म होता है जो (अशाश्वतम्) नाशवान् जीवन (दुःखालयम्) दुखों का घर है। (परमाम्) परम (संसिद्धिम् गता) सिद्धि को प्राप्त (महात्मयः) महात्माजन (न आप्नुवन्ति) पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होते।

भावार्थ :- गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मुझे प्राप्त होकर तो दुःखों का घर यह क्षणभंगुर जीवन जन्म-मरण होता है। जो महात्मा परम गति को प्राप्त हो जाते हैं, उनका पुनर्जन्म नहीं होता।

❖ विचारें :- यदि गीता अध्याय 8 श्लोक 1 से 10 तक का सारांश निकालें जो इस प्रकार है :- अर्जुन ने पूछा (गीता अध्याय 8 श्लोक 1) कि तत् ब्रह्म क्या

है? गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया कि वह "परम अक्षर ब्रह्म" है।

फिर गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 8 श्लोक 5 व 7 में अपनी भक्ति करने को कहा है तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10 में "परम अक्षर ब्रह्म" की भक्ति करने को कहा है। अपनी भक्ति का मन्त्र गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में बताया है कि मुझ ब्रह्म का केवल एक ओम् (ॐ) अक्षर है। उच्चारण करके स्मरण करता हुआ जो शरीर त्याग कर जाता है, वह परम गति को प्राप्त होता है। पूर्व में श्री देवी पुराण से सिद्ध कर आए हैं कि ऊँ का जाप करके ब्रह्म लोक प्राप्त होता है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में स्पष्ट है कि ब्रह्म लोक में गए साधक का भी पुनर्जन्म होता है। इसलिए गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में ऊँ नाम के जाप से होने वाली परम गति का वर्णन है, परन्तु गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10 में जिस सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम दिव्य पुरुष की भक्ति करने को कहा है, उसका मन्त्र गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में लिखा है।

ऊँ, तत्, सत्, इति, निर्देशः, ब्रह्मणः, त्रिविधः, स्मृतः
ब्राह्मणाः, तेन, वेदाः, च, यज्ञाः, च विहिताः, पुरा ॥

अनुवाद :- सच्चिदानन्द घन ब्रह्म की भक्ति का मन्त्र "ऊँ तत् सत्" है।

"ऊँ" मन्त्र ब्रह्म यानि क्षर पुरुष का है। "तत्" यह सांकेतिक है जो अक्षर पुरुष का है। "सत्" मन्त्र भी सांकेतिक मन्त्र है जो परम अक्षर ब्रह्म का है। इन तीनों मन्त्रों के जाप से वह परम गति प्राप्त होगी जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कही है कि जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते।

यदि गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का यह अर्थ सही मानें कि मुझे प्राप्त होने वाले का पुनर्जन्म नहीं होता तो गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2, गलत सिद्ध हो जाते हैं जिनमें गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। मेरी उत्पत्ति को न देवता जानते, न महर्षिगण तथा न सिद्ध जानते। विचारणीय विषय यह है कि जब साध्य ईष्ट का ही जन्म-मृत्यु होता है तो साधक को वह मोक्ष कैसे प्राप्त हो सकता है जिससे पुनर्जन्म नहीं होता है।

इसलिए गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का अनुवाद जो मैंने ऊपर किया है, वही सही है कि गीता ज्ञानदाता ने कहा है कि ब्रह्म लोक तक सब लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् ब्रह्मलोक में गए प्राणी भी लौटकर संसार में जन्म को प्राप्त होते हैं। जो यह नहीं जानते, वे मेरी भक्ति करके भी पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं। इसीलिए तो गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे अर्जुन! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा, उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन परमधाम अर्थात् सत्यलोक को प्राप्त होगा। यही प्रमाण गीता

अध्याय 15 श्लोक 4 में है कि तत्त्वदर्शी सन्त से तत्त्वज्ञान प्राप्त करके उस तत्त्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान को काटकर उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते।

जिस परमेश्वर से संसार रूपी वृक्ष की प्रवृत्ति विस्तार को प्राप्त हुई है अर्थात् जिस परमेश्वर ने संसार की रचना की है। गीता ज्ञान दाता कहता है कि केवल उसी की भक्ति कर, सर्व का उसी से कल्याण सम्भव है।

❖ प्रमाणित हुआ कि ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष सम्भव नहीं है। केवल पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) की भक्ति से ही पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

प्रश्न 13 : ओम् (ऊँ) यह मन्त्र तो ब्रह्म का जाप हुआ, फिर यह क्यों कह रहे हो कि ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष नहीं होता। आपने बताया कि गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में “ऊँ तत् सत्” इस मन्त्र के जाप से पूर्ण मोक्ष होता है। इस मन्त्र में भी तो ओम् (ऊँ) मन्त्र है।

उत्तर : जैसे इन्जीनियर या डॉक्टर बनने के लिए शिक्षा की आवश्यकता होती है। पहले प्रथम कक्षा पढ़नी पड़ती है, फिर दूसरी, इस प्रकार दसवीं कक्षा पास करनी पड़ती है। उसके पश्चात् आगे पढ़ाई करनी होती है। फिर ट्रैनिंग करके इन्जीनियर या डॉक्टर बना जाता है। ठीक इसी प्रकार श्री ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश तथा देवी की साधना करनी पड़ती है, मैं स्वयं करता हूँ तथा अपने अनुयाइयों से कराता हूँ। यह तो पाँचवीं कक्षा तक की पढ़ाई अर्थात् साधना जानें, ब्रह्म की साधना दसवीं कक्षा तक की पढ़ाई जानें अर्थात् ब्रह्मलोक तक की साधना है जो “ऊँ” (ओम) का जाप करना है और अक्षर पुरुष की साधना को 14वीं कक्षा की पढ़ाई अर्थात् साधना जानो जो “तत्” मन्त्र का जाप है। “तत्” मन्त्र तो सांकेतिक है, वास्तविक मन्त्र तो इससे भिन्न है जो उपदेशी को ही बताया जाता है।

परम अक्षर पुरुष की साधना इन्जीनियर या डॉक्टर की पढ़ाई अर्थात् साधना जानो जो “सत्” शब्द से करनी होती है। यह “सत्” मन्त्र भी सांकेतिक है। वास्तविक मन्त्र भिन्न है जो उपदेशी को बताया जाता है। इसको सारनाम भी कहते हैं।

इसलिए अकेले “ब्रह्म” के नाम ओम् (ऊँ) से पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता। “ऊँ” नाम का जाप ब्रह्म का है। इसकी साधना से ब्रह्म लोक प्राप्त होता है जिसके विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्म लोक में गए साधक भी पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं। पुनर्जन्म है तो पूर्ण मोक्ष नहीं हुआ जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि परमात्मा के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक कभी लौटकर पुनर्जन्म में नहीं आता। वह

पूर्ण मोक्ष पूर्ण गुरु से शास्त्रानुकूल भक्ति प्राप्त करके ही संभव है। विश्व में वर्तमान में मेरे (संत रामपाल दास) अतिरिक्त किसी के पास नहीं है।

प्रश्न 14 :- परमात्मा एक है या अनेक हैं?

उत्तर :- कुल का मालिक एक है।

प्रश्न 15 :- वह परमात्मा कौन है जो कुल का मालिक है, कहाँ प्रमाण है?

उत्तर :- वह परमात्मा “परम अक्षर ब्रह्म” है जो कुल का मालिक है।

प्रमाण :- श्रीमद्‌भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में है।

गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 का सारांश व भावार्थ है कि “उल्टे लटके हुए वृक्ष के समान संसार को जानो। जैसे वृक्ष की जड़ें तो ऊपर हैं, नीचे तीनों गुण रूपी शाखाएं जानो। गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में यह भी स्पष्ट किया है कि तत्त्वदर्शी सन्त की क्या पहचान है? तत्त्वदर्शी सन्त वह है जो संसार रूपी वृक्ष के सर्वांग (सभी भाग) भिन्न-भिन्न बताए।

विशेष :- वेद मन्त्रों की जो आगे फोटोकॉपियाँ लगाई हैं, ये आर्यसमाज के आचार्यों तथा महर्षि दयानन्द द्वारा अनुवादित हैं और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली द्वारा प्रकाशित हैं।

परमेश्वर स्वयं पृथ्वी पर सशरीर प्रकट होकर कवियों की तरह आचरण करता हुआ सत्य अध्यात्मिक ज्ञान सुनाता है। (प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 86 मन्त्र 26-27, ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 82 मन्त्र 1-2, ऋग्वेद मण्डल व सुक्त 96 मन्त्र 16 से 20, ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 94 मन्त्र 1, ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 95 मन्त्र 2, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 20 मन्त्र 1, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 में) इन मन्त्रों में कहा है कि परमात्मा सर्व भवनों अर्थात् लोकों के ऊपर के लोक में विराजमान है। जब-जब पृथ्वी पर अज्ञान की वृद्धि होने से अधर्म बढ़ जाता है तो परमात्मा स्वयं सशरीर चलकर पृथ्वी पर प्रकट होकर यथार्थ अध्यात्म ज्ञान का प्रचार लोकोक्तियों, शब्दों, चौपाईयों, साखियों, कविताओं के माध्यम से कवियों जैसा आचरण करके घूम-फिरकर करता है। जिस कारण से एक प्रसिद्ध कवि की उपाधि भी प्राप्त करता है। कृप्या देखें उपरोक्त मन्त्रों की फोटोकॉपी के पृष्ठ 101 से 116 पर।

परमात्मा ने अपने मुख कमल से ज्ञान बोलकर सुनाया था। उसे सूक्ष्म वेद कहते हैं। उसी को ‘तत्त्व ज्ञान’ भी कहते हैं। तत्त्वज्ञान का प्रचार करने के कारण परमात्मा “तत्त्वदर्शी सन्त” भी कहलाने लगता है। उस तत्त्वदर्शी सन्त रूप में प्रकट परमात्मा ने संसार रूपी वृक्ष के सर्वांग इस प्रकार बताये:-

कवीर, अक्षर पुरुष एक वृक्ष है, क्षर पुरुष वाकि डार।

तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार ॥।

भावार्थ : वृक्ष का जो हिस्सा पृथ्वी से बाहर दिखाई देता है, उसको तना

कहते हैं। जैसे संसार रुपी वृक्ष का तना तो अक्षर पुरुष है। तने से मोटी डार निकलती है वह क्षर पुरुष जानो, डार के मानो तीन शाखाएँ निकलती हों, उनको तीनों देवता (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव) हैं तथा इन शाखाओं पर टहनियों व पत्तों को संसार जानों। इस संसार रुपी वृक्ष के उपरोक्त भाग जो पृथ्वी से बाहर दिखाई देते हैं। मूल (जड़ें), जमीन के अन्दर हैं। जिनसे वृक्ष के सर्वांगों का पोषण होता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरुष कहे हैं। श्लोक 16 में दो पुरुष कहे हैं “क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष” दोनों की स्थिति ऊपर बता दी है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में भी कहा है कि क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष दोनों नाशवान हैं। इनके अन्तर्गत जितने भी प्राणी हैं, वे भी नाशवान हैं। परन्तु आत्मा तो किसी की भी नहीं मरती। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि उत्तम पुरुष अर्थात् पुरुषोत्तम तो क्षर पुरुष और अक्षर पुरुष से भिन्न है जिसको परमात्मा कहा गया है। इसी प्रभु की जानकारी गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में है जिसको “परम अक्षर ब्रह्म” कहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में इसी का वर्णन है। यही प्रभु तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। यह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है। मूल से ही वृक्ष की परवरिश होती है, इसलिए सबका धारण-पोषण करने वाला परम अक्षर ब्रह्म है। जैसे पूर्व में गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 में बताया है कि ऊपर को जड़ (मूल) वाला, नीचे को शाखा वाला संसार रुपी वृक्ष है। जड़ से ही वृक्ष का धारण-पोषण होता है। इसलिए परम अक्षर ब्रह्म जो संसार रुपी वृक्ष की जड़ (मूल) है, यही सर्व पुरुषों (प्रभुओं) का पालनहार इनका विस्तार (रचना करने वाला = सृजनहार) है। यही कुल का मालिक है।

प्रश्न 16 : क्या रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर (शिव) की पूजा (भक्ति) करनी चाहिए?

उत्तर : नहीं।

प्रश्न 17 : कहाँ प्रमाण है कि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर (शिव) की पूजा (भक्ति) नहीं करनी चाहिए?

उत्तर : श्री मद्भगवत गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15, 20 से 23 तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 23-24, गीता अध्याय 17 श्लोक 1 से 6 में प्रमाण है कि जो व्यक्ति रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव की भक्ति करते हैं, वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझे भी नहीं भजते। (यह प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में है। फिर गीता अध्याय 7 के ही श्लोक 20 से 23 तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 23-24 में यही कहा है और क्षर पुरुष, अक्षर पुरुष तथा परम अक्षर पुरुष गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में जिनका वर्णन है), को छोड़कर श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी

अन्य देवताओं में गिने जाते हैं। इन दोनों अध्यायों (गीता अध्याय 7 तथा अध्याय 9 में) में ऊपर लिखे श्लोकों में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जो साधक जिस भी उद्देश्य को लेकर अन्य देवताओं को भजते हैं, वे भगवान् समझकर भजते हैं। उन देवताओं को मैंने कुछ शक्ति प्रदान कर रखी है। देवताओं के भजने वालों को मेरे द्वारा किए विधान से कुछ लाभ मिलता है। परन्तु उन अल्प बुद्धिवालों का वह फल नाशवान होता है। देवताओं को पूजने वाले देवताओं के लोक में जाते हैं। मेरे पुजारी मुझे प्राप्त होते हैं।

गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि शास्त्रविधि को त्यागकर जो साधक मनमाना आचरण करते हैं अर्थात् जिन देवताओं पितरों, यक्षों, भैरों-भूतों की भक्ति करते हैं और मनोकल्पित मन्त्रों का जाप करते हैं, उनको न तो कोई सुख होता है, न कोई सिद्धि प्राप्त होती है तथा न उनकी गति अर्थात् मोक्ष होता है। इससे तेरे लिए हे अर्जुन! कर्तव्य (जो भक्ति करनी चाहिए) और अकर्तव्य (जो भक्ति न करनी चाहिए) की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण हैं। गीता अध्याय 17 श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा कि हे कृष्ण! (क्योंकि अर्जुन मान रहा था कि श्री कृष्ण ही ज्ञान सुना रहा है, परन्तु श्री कृष्ण के शरीर में प्रेत की तरह प्रवेश करके काल (ब्रह्म) ज्ञान बोल रहा था जो पहले प्रमाणित किया जा चुका है।) जो व्यक्ति शास्त्रविधि को त्यागकर अन्य देवताओं आदि की पूजा करते हैं, वे स्वभाव में कैसे होते हैं? गीता ज्ञान दाता ने उत्तर दिया कि सात्त्विक व्यक्ति देवताओं का पूजन करते हैं। राजसी व्यक्ति यक्षों व राक्षसों की पूजा तथा तामसी व्यक्ति प्रेत आदि की पूजा करते हैं। ये सब शास्त्रविधि रहित कर्म हैं। फिर गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6 में कहा है कि जो मनुष्य शास्त्रविधि से रहित केवल मनकल्पित घोर तप को तपते हैं, वे दम्भी (अभिमानी) हैं और शरीर के कमलों में विराजमान शक्तियों को तथा मुझे भी क्रश करने वाले राक्षस स्वभाव के अज्ञानी जान।

सूक्ष्मवेद में भी परमेश्वर जी ने कहा है कि :-

“कबीर, माई मसानी सेढ़ शीतला भैरव भूत हनुमंत।

परमात्मा से न्यारा रहै, जो इनको पूजांत ॥

राम भजै तो राम मिलै, देव भजै सो देव ।

भूत भजै सो भूत भवै, सुनो सकल सुर भेव ॥”

स्पष्ट हुआ कि श्री ब्रह्मा जी (रजगुण), श्री विष्णु जी (सत्त्वगुण) तथा श्री शिवजी (तमगुण) की पूजा (भक्ति) नहीं करनी चाहिए तथा इसके साथ-साथ भूतों, पितरों की पूजा, (श्राद्ध कर्म, तेरहर्वी, पिण्डोदक क्रिया, सब प्रेत पूजा होती है) भैरव तथा हनुमान जी की पूजा भी नहीं करनी चाहिए।

प्रश्न 18 : क्या क्षर पुरुष (ब्रह्म) की पूजा (भक्ति) करनी चाहिए या नहीं?

उत्तर : यदि पूर्ण मोक्ष चाहते हो जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में बताया

है कि “तत्त्वज्ञान प्राप्ति के पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर फिर कभी संसार में जन्म नहीं लेता।” तो क्षर पुरुष (ब्रह्म) “जो संसार रूपी वृक्ष की डार है” की पूजा (भवित) नहीं करनी चाहिए।

प्रश्न 19 : पूर्व में जितने ऋषि-महर्षि हुए हैं, वे सब ब्रह्म की पूजा करते और कराते थे। “ओम्” (ॐ) नाम को सबसे बड़ा तथा उत्तम मन्त्र जाप करने का बताते थे, क्या वे अज्ञानी थे? यदि ब्रह्म की भवित उत्तम नहीं है तो गीता में कोई प्रमाण बताएं।

उत्तर : पूर्व में बताया गया है कि यथार्थ आध्यात्म ज्ञान स्वयं परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) धरती पर सशरीर प्रकट होकर ठीक-ठीक बताता है। देखें प्रमाण वेद मन्त्रों में इसी पुस्तक के पृष्ठ 101 पर। परमेश्वर द्वारा बताए ज्ञान को सूक्ष्मवेद (तत्त्वज्ञान) कहा गया है। तत्त्वज्ञान में परमात्मा ने बताया है कि :-

गुरु बिन काहू न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भुस छड़े मूढ़ किसाना ।

गुरु बिन बेद पढ़ै जो प्राणी, समझे ना सार रहे अज्ञानी ॥

जिन ऋषियों व महर्षियों को सत्त्वगुरु नहीं मिला। उनकी यह दशा थी कि वेद पढ़ते थे परन्तु वेदों का सार नहीं समझ सके। उदाहरण के लिये श्री देवी पुराण (सचित्र मोटा टाईप, गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित) के पृष्ठ 414 पर (चौथे स्कन्द में) लिखा है कि सत्ययुग के ब्राह्मण (महर्षि) वेद के पूर्ण विद्वान होते थे और श्री देवी (दुर्गा) की पूजा करते थे।

❖ विचार करें :- श्रीमद्भगवत् गीता चारों वेदों का सारांश है। आप जी गीता जी को तो जानते ही हो, पढ़ते भी होंगे। क्या गीता में कहीं नहीं लिखा है कि ‘श्री देवी’ की पूजा करो? इसी प्रकार चारों वेदों में कहीं नहीं लिखा है कि दुर्गा (श्री देवी) की पूजा करो, तो क्या समझा वेदों को उन महर्षियों ने? क्या खाक विद्वान थे सत्ययुग के महर्षि? उन्हीं महर्षियों का मनमाना विधान है कि ऊँ (ओम्) नाम सबसे बड़ा अर्थात् उत्तम है। ब्रह्म पूजा (भवित) सर्वश्रेष्ठ है। प्रिय पाठको! जो ब्रह्म की पूजा ईस्ट देव मानकर करते थे, वे अज्ञानी थे। उनकी ब्रह्म साधना अनुच्छम गति देने वाली है।

गीता में प्रमाण : श्रीमद्भगवत् अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में तो बताया है कि जो तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्म, सत्तगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर) की पूजा करने वाले राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझे भी नहीं भजते। यह गीता ज्ञान दाता ने कहा है। फिर गीता अध्याय 7 के ही श्लोक 16 से 18 तक में गीता ज्ञान दाता (ब्रह्म) ने कहा है कि मेरी भवित चार प्रकार से करते हैं। अर्थार्थी, आर्थ, जिज्ञासु तथा ज्ञानी। फिर कहा कि ज्ञानी मुझे अच्छा लगता है, ज्ञानी को मैं अच्छा लगता हूँ। (गीता अध्याय 7

इलोक 18) इस श्लोक में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि ये ज्ञानी आत्मा हैं तो उदार (अच्छी) परन्तु ये सब मेरी अनुत्तम गति अर्थात् घटिया गति में आश्रित हैं। इस श्लोक (गीता अध्याय 7 श्लोक 18) में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म स्वयं स्वीकार कर रहा है कि मेरी भक्ति से होने वाली गति अनुत्तम (अश्रेष्ठ = घटिया) है।

गीता अध्याय 7 श्लोक 19 में कहा है कि :-

बहुनाम्, जन्मानाम्, अन्ते, ज्ञानवान्, माम्, प्रपद्यते,
वासुदेवः, सर्वम्, इति, सः, महात्मा, सुदुर्लभः ॥ ।

अनुवाद :- गीता ज्ञान दाता ब्रह्म कह रहा है कि मेरी भक्ति बहुत-बहुत जन्मों के अन्त में कोई ज्ञानी आत्मा करता है अन्यथा अन्य देवी देवताओं व भूत, पितरों की भक्ति में जीवन नाश करते रहते हैं। गीता ज्ञान दाता ने अपनी भक्ति से होने वाले लाभ अर्थात् गति को भी गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम (घटिया) बता दिया है। इसलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 19 में कह रहा है कि :-

यह बताने वाला महात्मा मुश्किल से मिलता है कि “वासुदेव” ही सब कुछ है। यही सबका सृजनहार है। यही पापनाशक, पूर्ण मोक्षदायक, यही पूजा के योग्य है। यही (वासुदेव ही) कुल का मालिक परम अक्षर ब्रह्म है। केवल इसी की भक्ति करो, अन्य की नहीं।

गीता ज्ञान दाता ने भी स्वयं कहा है कि “हे अर्जुन! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा। उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन परमधाम (सत्यलोक) को प्राप्त होगा।” (यह गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में प्रमाण है) फिर गीता अध्याय 18 श्लोक 46 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि “जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति हुई है, जिससे यह समर्स्त जगत व्याप्त है। उस परमेश्वर की अपने स्वाभाविक कर्म करते-करते पूजा करके मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त हो जाता है। फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्त्वज्ञान को समझकर उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए। जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में नहीं आता, जिस परमेश्वर से संसार रूपी वृक्ष की प्रवृत्ति विस्तार को प्राप्त हुई है अर्थात् जिस परमेश्वर ने सर्व की रचना की है, उसी की पूजा करो।

प्रश्न 20 : गीता ज्ञान दाता ने अपनी गति को अनुत्तम क्यों कहा?

उत्तर : गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 2 श्लोक 12 गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में कहा है कि अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। मेरी उत्पत्ति को ऋषि-महर्षि तथा देवता नहीं जानते। तू और मैं तथा ये राजा व सैनिक बहुत बार पहले भी जन्मे हैं, आगे भी जन्मेंगे। पाठक जन विचार करें! जब ब्रह्म कह रहा है कि मेरा भी जन्म-मरण होता है तो ब्रह्म के पुजारी को गीता अध्याय 15 श्लोक 4 वाली गति (मोक्ष) प्राप्त

नहीं हो सकती जिसमें जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त हो जाता है। जब तक जन्म-मरण है, तब तक परमशान्ति नहीं हो सकती। उसके लिए गीता ज्ञानदाता ने असमर्थता व्यक्त की है। गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि परमशान्ति के लिए उस परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) की शरण में जा, उसी की कृप्या से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा। गीता अध्याय 8 श्लोक 5 व 7 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मेरी भक्ति करेगा तो युद्ध भी करना पड़ेगा, जहाँ युद्ध है, वहाँ शान्ति नहीं होती, परम शान्ति का घर दूर है। इसलिए गीता ज्ञान दाता ने अपनी गति को (ऊँ नाम के जाप से होने वाला लाभ) अनुत्तम (घटिया) बताया है।

प्रश्न 21 : आपने प्रश्न नं. 13 के उत्तर में कहा है कि पूर्ण मोक्ष की प्राप्ति के लिए ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश तथा देवी और क्षर ब्रह्म व अक्षर ब्रह्म की साधना करनी पड़ती है। दूसरी ओर कह रहे हो कि ब्रह्मा, विष्णु, शिव अन्य देवता हैं, क्षर ब्रह्म भी पूजा (भक्ति) योग्य नहीं है। केवल परम अक्षर ब्रह्म की ही पूजा (भक्ति) करनी चाहिए?

उत्तर : मैं नहीं कह रहा, अपने सद्ग्रन्थ कह रहे हैं, पहले तो यह स्पष्ट करते हैं कि पूजा तथा साधना में क्या अन्तर है?

प्राप्य वस्तु की चाह पूजा कही जाती है तथा उसको प्राप्त करने के प्रयत्न को साधना कहते हैं।

उदाहरण : जैसे हमने जल प्राप्त करना है। यह हमारा प्राप्य है। हमें जल की चाह है। जल की प्राप्ति के लिए हैण्डपम्प लगाना पड़ेगा। हैण्डपम्प लगाने के लिए जो-जो उपकरण प्रयोग किए जाएंगे, बोकी लगाई जाएंगी, यह प्रयत्न है। इसी प्रकार परमेश्वर का वह परमपद प्राप्त करना हमारी चाह है, जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में नहीं आता। हमारा प्राप्य परमेश्वर तथा उनका सनातन परम धाम है। उस साधना से पूज्य वस्तु परमात्मा प्राप्त होगा। जैसे प्रश्न 13 के उत्तर में स्पष्ट किया है, वही सटीक उदाहरण है। उस पूर्ण मोक्ष के लिए तीन बार में दीक्षा क्रम पूरा करना होता है।

1. प्रथम नाम दीक्षा = ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश, देवी के मन्त्रों की साधना दी जाती है।

2. दूसरी बार में क्षर ब्रह्म तथा अक्षर ब्रह्म के दो अक्षर मन्त्र जाप दिए जाते हैं जिसको सन्तों ने “सत् नाम” कहा है। गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में तीन नाम हैं, “ओम्-तत्-सत्” इस सतनाम में दो अक्षर होते हैं, एक “ओम्” (ऊँ) दूसरा “तत्” है। (यह सांकेतिक अर्थात् गुप्त नाम है जो उपदेश के समय उपदेशी को ही बताया जाता है)

3. तीसरी बार में सारनाम की दीक्षा दी जाती है जिस मन्त्र को गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में “सत्” कहा है, यह भी सांकेतिक है। उपदेश लेने वाले को दीक्षा के समय बताया जाता है। इस प्रकार पूर्ण मोक्ष प्राप्त होता है।

प्रश्न 22 : जो साधना हम पहले कर रहे हैं, क्या वह त्यागनी पड़ेगी?

उत्तर : यदि शास्त्रविधि रहित है तो त्यागनी पड़ेगी। यदि अनाधिकारी से दीक्षा ले रखी है, उसका कोई लाभ नहीं होना। पूर्ण गुरु से साधना की दीक्षा लेनी पड़ेगी।

प्रश्न 23 : गीता अध्याय 18 श्लोक 47 में तथा गीता अध्याय 3 श्लोक 35 में कहा है :-

श्रेयान् स्वधर्मः विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात् ।

स्वधर्मे निधनम् श्रेयः परधर्मः, भयावहः ॥ (गीता अध्याय 3 श्लोक 35)

अच्छी प्रकार आचरण में लाए हुए दूसरे के धर्म से गुणरहित भी अपना धर्म अति उत्तम है। अपने धर्म में तो मरना भी कल्याणकारक है और दूसरे का धर्म भय को देने वाला है।

उत्तर : यह अनुवाद गलत है। यदि यह बात सही है कि अपना धर्म चाहे गुणरहित हो तो भी उसे नहीं त्यागना चाहिए तो फिर श्रीमद्भगवत् गीता का ज्ञान 18 अध्यायों के 700 श्लोकों में लिखने की क्या आवश्यकता थी? एक यह श्लोक पर्याप्त था कि अपनी साधना जैसी भी हो उसे करते रहो, चाहे वह गुणरहित (लाभ रहित) भी क्यों न हो। फिर गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में यह क्यों कहा कि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव की पूजा राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख लोग मुझे नहीं भजते। गीता ज्ञान दाता ने उन साधकों से उनका धर्म अर्थात् धार्मिक साधना त्यागने को कहा है तथा गीता अध्याय 7 के ही श्लोक 20 से 23 में कहा है कि जो मेरी पूजा न करके अन्य देवताओं की पूजा करते हैं, वे अज्ञानी हैं। उनकी साधना से शीघ्र समाप्त होने वाला सुख (स्वर्ग समय) प्राप्त होता है। फिर अपनी धार्मिक पूजा अर्थात् धर्म भी त्यागने को कहा है। पूर्ण लाभ के लिए परम अक्षर ब्रह्म का धर्म अर्थात् धार्मिक साधना ग्रहण करने के लिए कहा है।

❖ गीता अध्याय 3 श्लोक 35 का यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :-

अनुवाद : (विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्) दूसरों के गुण रहित अर्थात् लाभ रहित अच्छी प्रकार चमक-धमक वाले धर्म अर्थात् धार्मिक कर्म से (स्वधर्मः) अपना शास्त्रविधि अनुसार धार्मिक कर्म (श्रेयान्) अति उत्तम है। (स्वधर्मे) अपने शास्त्रविधि अनुसार धर्म-कर्म के संघर्ष में (निधनम्) मरना भी (श्रेयः) कल्याणकारक है। (परधर्म) दूसरों का धार्मिक कर्म (भयावहः) भय को देने वाला है। भावार्थ है कि जैसे जागरण वगैरह होता है तो उसमें बड़ी सुरीली तान में सुरीले गीत गाए जाते हैं। तड़क-भड़क भी होती है। अपने शास्त्रविधि अनुसार धर्म-कर्म में केवल

नाम-जाप या सामान्य तरीके से आरती की जाती है। किसी भी वेद या गीता में श्री देवी जी की पूजा तथा जागरण करने की आज्ञा नहीं है। जिस कारण शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण हुआ, इसलिए व्यर्थ है। दूसरों का शास्त्रविधि रहित धार्मिक कर्म देखने में अच्छा लगता है, उसमें लोग-दिखावा अधिक होता है तो सत्य साधना करने वाले को दूसरों के धार्मिक कर्म को देखकर डर बन जाता है कि कहीं हमारी भक्ति ठीक न हो। परन्तु तत्व ज्ञान को समझने के पश्चात् यह भय समाप्त हो जाता है। तत्व ज्ञान में बताया है कि :-

दुर्गा ध्यान पड़े जिस बगड़म्, ता संगति ढूबै सब नगरम् ।

दम्भ करें डूंगर चढ़ै, अन्तर झीनी झूल ।

जग जाने बन्दगी करें, बोवें सूल बबूल ॥

इसलिए निर्गुण अर्थात् लाभरहित धार्मिक साधना को त्यागकर सत्य साधना शास्त्रविधि अनुसार करने से ही कल्याण होगा ।

प्रश्न 24 :- मैंने पारखी संत श्री अभिलाष दास के विचार सुने थे। वे कह रहे थे कि संसार का कोई रचने वाला भगवान वगैरह नहीं है। यह नर-मादा के संयोग से बनता है। फिर समाप्त हो जाता है। कोई भगवान नहीं है। जीव ही ब्रह्म है, जीव ही कर्ता है, अभिलाष दास के ये विचार उचित हैं या अनुचित?

उत्तर :- इसका उत्तर श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 16 श्लोक 6 से 10 में विस्तार से दिया गया है। कहा है कि जो आसुरी प्रकृति के लोग होते हैं, वे कहा करते हैं कि संसार बिना ईश्वर के हैं, स्त्री-पुरुष से उत्पन्न हैं। इसका कोई कर्ता नहीं है। ऐसे व्यक्ति संसार का नाश अर्थात् बुरा करने के लिए ही जन्म लेते हैं। सच्चाई यह है कि परमात्मा सर्व संसार का सृजनहार है। जीव ब्रह्म नहीं है। ब्रह्म का अर्थ प्रभु (स्वामी) होता है। जैसे (1) ब्रह्म (जिसको क्षर पुरुष भी कहा गया है) 21 ब्रह्माण्डों का स्वामी है। (2) अक्षर ब्रह्म (जिसको अक्षर पुरुष भी कहा गया है, गीता अध्याय 15 श्लोक 16) यह 7 शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है। (3) पूर्ण ब्रह्म (जिसको गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में परम अक्षर ब्रह्म कहा है) असँख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी है। यह कुल का मालिक है। यह कहना कि कोई भगवान नहीं है, संसार केवल स्त्री-पुरुष या नर-मादा से उत्पन्न होता है, समाप्त हो जाता है। जीव ही कर्ता है अर्थात् जीव ही ब्रह्म है, यह पूर्णतया अनुचित है।

प्रश्न 25 : श्रीमद्भगवत् गीता में ज्ञान दाता ने अध्याय 8 श्लोक 5 तथा 7 में कहा है कि जो पुरुष अन्त काल में भी मेरा स्मरण करता हुआ शरीर त्यागकर जाता है, वह मुझे प्राप्त होता है। इसलिए अर्जुन! सब समय में मेरा स्मरण कर, युद्ध भी कर, मुझे ही प्राप्त होगा। इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि उस परमात्मा की शरण में जा। गीता ज्ञान दाता ने घुमा-फिराकर कहा है कि मेरी ही साधना स्मरण कर, आप अन्य परमात्मा बता रहे हो, वह विश्वसनीय

नहीं है। क्या गीता में कहीं और भी लिखा है गीता ज्ञान दाता से अन्य परमात्मा की भक्ति साधना करने के लिए?

उत्तर : गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि जो साधक केवल जरा (वृद्ध अवस्था) तथा मरण (मृत्यु) से छूटने के लिए प्रयत्नशील हैं, वे “तत् ब्रह्म” से परीचित हैं। अर्जुन ने गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में पूछा कि “तत् ब्रह्म” क्या है? गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 8 श्लोक 3 में बताया कि वह “परम अक्षर ब्रह्म” है। गीता अध्याय 8 श्लोक 5 व 7 में तो गीता ज्ञान दाता ने अपनी साधना-स्मरण करने को कहा है। (गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 4 श्लोक 5 व 10 अध्याय 10 श्लोक 2 में अपना जन्म-मरण भी कहा है। कहा है कि मेरी भक्ति से परमशान्ति नहीं हो सकती, युद्ध भी करना पड़ेगा। गीता ज्ञान दाता का यह भी कहना है कि जन्म-मरण में सदा रहेगा।) तुरन्त ही गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9 तथा 10, इन तीन श्लोकों में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य “परम अक्षर ब्रह्म” की भक्ति करने को कहा है कि हे पार्थ! परमेश्वर की साधना के अभ्यास योग से युक्त अन्य किसी देव या प्रभु में अपनी आस्था न रखकर एक परमेश्वर का अनन्य चित्त से स्मरण करता हुआ मनुष्य (परमम् दिव्यम् पुरुषम् याति) उस परम अलौकिक परमेश्वर अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को ही प्राप्त होता है। (गीता अध्याय 8 श्लोक 8)

जो साधक परम अक्षर ब्रह्म, अनादि, सब का संचालक, कन्द्रोलर, सूक्ष्म से सूक्ष्म सबके धारण-पोषण करने वाले अचिन्त स्वरूप सूर्य के समान प्रकाशमान अविद्या से अति परे शुद्ध चिदानन्द परमेश्वर का स्मरण करता है। (गीता अध्याय 8 श्लोक 9)

वह भक्ति साधनायुक्त साधक अन्तकाल में भी भक्ति की शक्ति से भृकुटी के मध्य में प्राणों अर्थात् श्वांसों को अच्छी प्रकार स्थापित करके फिर निश्चल मन से स्मरण करता हुआ उस (दिव्य परम पुरुषम्) अलौकिक परम पुरुष अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म (जो गीता ज्ञान दाता से अन्य है) को ही प्राप्त होता है। यह प्रमाण गीता के इसी अध्याय 8 श्लोक 11 से 22 में भी है। गीता अध्याय 8 श्लोक 11 में कहा है कि तत्वदर्शी अर्थात् वेद को ठीक से जानने वाले जिसे अविनाशी कहते हैं, उस परम पद को तेरे लिए कहता हूँ। गीता अध्याय 8 श्लोक 12 में वर्णन है कि उसको प्राप्त करने की साधना श्वांसों से नाम-स्मरण करने से होती है।

गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मुझ ब्रह्म का केवल एक ओम् (ॐ) अक्षर है, इसका स्मरण मरते दम तक करना है। वह इस मन्त्र से होने वाली परम गति अर्थात् ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है।

गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्म लोक में गए साधक भी पुनः लौटकर संसार में जन्म लेते हैं, फिर मरते हैं। यह पूर्ण मोक्ष नहीं है। गीता

अध्याय 8 श्लोक 14 में कहा है कि जो मेरी साधना स्मरण करता है, उसके लिए मैं सुलभ हूँ।

गीता अध्याय 8 श्लोक 15 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मुझे प्राप्त होकर तो सदा पुनर्जन्म होता है जो दुःखों का घर, क्षण भंगुर जीवन है और जो साधक परम अक्षर ब्रह्म की साधना भक्ति करते हैं वे परम सिद्धि को प्राप्त होकर अमर हो जाते हैं, वे पुनः जन्म-मरण को प्राप्त नहीं होते।

गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि ब्रह्मलोक तक सब लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् ब्रह्मलोक तक सब लोकों में गए साधक सदा जन्म-मृत्यु के चक्र में रहते हैं। हे अर्जुन! जो यह नहीं जानते, वे मुझे प्राप्त होकर भी जन्म-मृत्यु के चक्र में सदा रहते हैं क्योंकि गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 2 श्लोक 12, अध्याय 4 श्लोक 5, अध्याय 10 श्लोक 2 में स्वयं कहा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। आगे भी होते रहेंगे, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। मेरी उत्पत्ति (जन्म) को न देवता जानते हैं, न महर्षिजन और न सिद्ध जानते हैं।

गीता अध्याय 8 श्लोक 17 में अक्षर पुरुष (पर ब्रह्म) के दिन-रात का वर्णन है। बताया है कि (ब्रह्माणः) परब्रह्म का एक दिन एक हजार युग का होता है, इतनी ही रात्रि होती है। परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष का वर्णन गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में है। उसी का प्रकरण गीता अध्याय 8 श्लोक 17-18-19 में है।

नोट : अधिक जानकारी के लिए कृप्या पढ़ें प्रश्न नं. 9 में गीता अध्याय 8 श्लोक 17 से 19 में अक्षर पुरुष की जानकारी है, इसे भी अव्यक्त कहा गया है। इसका दिन समाप्त होने के पश्चात् सर्व प्राणी जो क्षर पुरुष के 21 ब्रह्माण्डों में हैं, नाश में आ जाते हैं, रात्रि पूरी होने के पश्चात् पुनः दिन में संसार में जीव उत्पन्न होते हैं।

गीता अध्याय 8 श्लोक 20 में कहा है कि यह अक्षर पुरुष भी अव्यक्त कहा जाता है। परंतु इस अव्यक्त से दूसरा जो विलक्षण सनातन अव्यक्त भाव है, वह परम दिव्य पुरुष अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म तो सब प्राणियों के (क्षर पुरुष, अक्षर पुरुष तथा इनके अन्तर्गत जितने भी जीव हैं, इन सब के) नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता।

गीता अध्याय 8 श्लोक 21 में कहा है कि जो अव्यक्त (अक्षर) अविनाशी इस नाम से कहा गया है, उस परम पुरुष की प्राप्ति को परम गति कहते हैं। जिस सनातन अव्यक्त परम पुरुष को प्राप्त होकर वापिस जन्म-मरण में नहीं आते। वह मेरे धाम से श्रेष्ठ धाम है। पहले मैं भी उसी में रहता था। इसलिए कहा है कि वह मेरा भी परम धाम है क्योंकि गीता ज्ञान दाता भी उस परम सनातन धाम अर्थात् सत्यलोक से निष्कासित है। (इसकी पूर्ण जानकारी के लिए कृप्या पढ़ें

सृष्टि रचना इसी पुस्तक में।)

गीता अध्याय 8 श्लोक 22 में स्पष्ट है, गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! जिस परमात्मा के अन्तर्गत सर्वभूत अर्थात् प्राणी हैं, (क्षर पुरुष तथा इसके 21 ब्रह्माण्डों के प्राणी तथा अक्षर पुरुष तथा इसके अन्तर्गत जितने प्राणी आते हैं, वे तथा परम अक्षर पुरुष के असँख्य ब्रह्माण्डों में जितने प्राणी हैं, वे परम अक्षर ब्रह्म के अन्तर्गत हैं।) और जिस परम अक्षर पुरुष से यह सर्व जगत परिपूर्ण अर्थात् जिसने सर्व को उत्पन्न किया है, जिसकी सत्ता सर्व के ऊपर है, वह सनातन अव्यक्त परम पुरुष तो अनन्य भक्ति से प्राप्त करने योग्य है। भावार्थ है कि परम अक्षर ब्रह्म को प्राप्त करने के लिए केवल इसी की भक्ति (पूजा) करनी चाहिये। अन्य किसी प्रभु में आरथा नहीं रखनी चाहिए। इसी को अनन्य भक्ति अर्थात् पूजा कहते हैं।

केवल परम अक्षर ब्रह्म की पूजा करना अनन्य भक्ति कहलाती है। यदि गीता अध्याय 8 श्लोक 22 का सही अनुवाद करें तो स्पष्ट है कि :-

पुरुषः, सः, परः, पार्थ, भक्ताया, लभ्यः, तु, अनन्या,

यस्य, अन्तःस्थानि, भूतानि, येन, सर्वम्, इदम्, ततम्

अनुवाद :- (सः) वह (परः) दूसरा (पुरुषः) परमात्मा तो अनन्य भक्ति से प्राप्त होने योग्य है, जिसके अन्तर्गत सर्व प्राणी हैं और जिसने सर्व जगत की उत्पत्ति की है, जो सर्व का पालन करता है। सरलार्थ समाप्त (गीता अध्याय 8 श्लोक 22) इसके मूल पाठ में यानि संस्कृत में लिखा है = सः परः पुरुषः = पर का अर्थ गीता अध्याय 8 श्लोक 20 में परे किया है यानि अन्य। यहाँ (गीता अध्याय 8 श्लोक 22 में) भी अन्य लिया जाता तो स्पष्ट हो जाता है कि गीता ज्ञान दाता से अन्य कोई समर्थ प्रभु है। जिसकी शरण में जाने के लिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है।

उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता ने श्रीमद्भगवत् गीता में अनेकों स्थानों पर अपने से अन्य परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) की भक्ति करने को कहा है। उसी से पूर्ण मोक्ष सम्भव है। जन्म-मरण का चक्र सदा के लिए समाप्त हो जाता है। प्रमाण :- गीता अध्याय 7 श्लोक 19, 29, गीता अध्याय 18 श्लोक 46,61,62,66, गीता अध्याय 3 श्लोक 9, गीता अध्याय 8 श्लोक 3, 8, 9, 10, 20 से 22, गीता अध्याय 4 श्लोक 31-32, गीता अध्याय 15 श्लोक 1,4,17, गीता अध्याय 2 श्लोक 17,59, गीता अध्याय 3 श्लोक 14,15,19 और गीता अध्याय 5 श्लोक 14,15,16,19,20,24,25,26 में भी यह प्रमाण है।

प्रश्न :- हमने सर्व सन्तों तथा हमारे हिन्दू धर्म के धर्मगुरुओं से तो यही सुना है कि गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी ने अर्जुन को सुनाया। हमें तो यही बताया गया है कि श्री कृष्ण जी पूर्ण परमात्मा हैं। श्री विष्णु जी ही स्वयं अवतार धारण करके

देवकी जी के गर्भ से जन्मे थे। इनके अतिरिक्त कोई परमात्मा नहीं है। आप जी के सत्संग सुने हैं, उनमें आप ने बहुत अटपटी-सी बात कही है कि गीता ज्ञान दाता से अन्य है पूर्ण परमात्मा। उसका प्रमाण शास्त्र में दिखाओ-बताओ तो विश्वास हो सकता है।

उत्तर :- आपजी को उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर में यही प्रमाण दिखाए हैं। आपको अभी भी शंका है। उसका कारण है कि पहली बात तो यह कि हिन्दू धर्मगुरुओं को अपने ही शास्त्रों का ज्ञान नहीं। यदि ज्ञान होता तो उपरोक्त शास्त्रविरुद्ध व्याख्या आप जी को नहीं सुनाते। दूसरी बात यह है कि धार्मिक गुरु एक अध्यापक के समान होता है। जिस अध्यापक को अपने पाठ्यक्रम (सलेबस) का ही ज्ञान नहीं है तो वह शिक्षक अज्ञानी माना जाता है तथा विद्यार्थियों के जीवन के साथ खिलवाड़ कर रहा है क्योंकि सलेबस के विपरीत ज्ञान विद्यार्थियों को रटा रहा है। ऐसे शिक्षक से बचना चाहिए। उसको त्याग देने में ही विद्यार्थियों का हित है।

आपको श्रीमद्भगवत् गीता में से ढेर सारे प्रमाण बताते हैं कि पूर्ण परमात्मा गीता ज्ञान दाता से अन्य है, वही उपासना योग्य है। उसी की भक्ति से पूर्ण मोक्ष प्राप्त होता है। यहाँ गीता के कुछ श्लोक लिखता हूँ, आप इनको गीता शास्त्र में स्वयं देख सकते हैं। यथार्थ रूप में जानने के लिए मेरे द्वारा किया गया श्री मद्भगवत् गीता का अनुवाद प्राप्त करें। पुस्तक का नाम है "गहरी नजर गीता में", इसको हमारी Web Site से डाउनलोड कर सकते हैं।

(Web Site का नाम है = www.jagatgururampalji.org)

गीता अध्याय 18 श्लोक 46,61,62,66, अध्याय 7 श्लोक 19, 29, अध्याय 8 श्लोक 3, 8, 9, 10, 20, 21,22, अध्याय 4 श्लोक 31-32, अध्याय 15 श्लोक 1, 4, 16, 17, अध्याय 2 श्लोक 17, 59, अध्याय 3 श्लोक 14-15, 19, अध्याय 5 श्लोक 14,15,16, 19, 20, 24, 25, 26, अध्याय 6 श्लोक 7, अध्याय 11 श्लोक 55, अध्याय 12 श्लोक 1 से 5। उपरोक्त गीता श्लोकों में प्रमाण है कि गीता ज्ञान दाता से अन्य कोई पूर्ण परमात्मा है। उसके विषय में तथा उसकी प्राप्ति के लिए भक्ति की साधना से गीता ज्ञान दाता भी अनभिज्ञ (अपरीचित) है। प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में हैं। गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि (4/32), यज्ञो अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों का विस्तृत ज्ञान (ब्रह्मणः मुखे) सच्चिदानन्द घन ब्रह्म के मुख कमल से उच्चरित वाणी में है जो परमात्मा स्वयं पृथ्वी पर प्रकट होकर अपने मुख से बोलता है, उसे तत्त्वज्ञान कहते हैं, उसी को सूक्ष्म वेद भी कहते हैं। उस ज्ञान को बाद में तत्त्वदर्शी सन्त ही जानते हैं। उस ज्ञान में पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति तथा स्थिति का सम्पूर्ण ज्ञान होता है।

(नोट:- गीता अनुवादकों ने गीता अध्याय 4 श्लोक 32 के अनुवाद में कुछ

त्रुटि की है जैसे "ब्रह्मणः" शब्द का अर्थ "वेद" किया है जो अनुचित है। "ब्रह्मणः" शब्द का यथार्थ अर्थ गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में किया है। ("ब्रह्मणः" = सचिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् पूर्ण परमात्मा)

(पाठकों से विशेष निवेदन :- आप जी गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित गीता में प्रमाण मिलाएं, विशेषकर "पदच्छेद, अन्वय साधारण भाषा टीका सहित" अनुवादक श्री जयदयाल गोयन्दका तथा श्री रामसुख दास जी द्वारा अनुवादित गीता में देखें।)

गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जिस ज्ञान को परमात्मा स्वयं अपने मुख कमल से बोलता है, वह तत्त्वज्ञान है। उसमें विस्तरित जानकारी यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों की कही है, उस ज्ञान को तू तत्त्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ। उनको दण्डवत् प्रणाम करने से तथा विज्रमतापूर्वक प्रश्न करने से वे तत्त्वज्ञान को जानने वाले महात्मा आपको तत्त्वज्ञान बताएँगे।

इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता को तत्त्वज्ञान की जानकारी नहीं है। तत्त्वज्ञान श्री मद्भगवत् गीता में नहीं है। यदि तत्त्वज्ञान गीता ज्ञान दाता को होता तो एक अध्याय और बोल देते।

ऊपर लिखे श्री मद्भगवत् गीता जी के श्लोकों में स्पष्ट है कि गीता ज्ञान दाता से अन्य कोई समर्थ अविनाशी, पूर्ण मोक्ष दाता, वास्तव में "परमात्मा" सब का धारण-पोषण करने वाला, जिसकी शरण में जाने से सनातन परमधाम (शाश्वतम् रथानम्) प्राप्त होता है तथा परम शान्ति प्राप्त होती है। उस परमपद में जाने के पश्चात् साधक कभी लौटकर संसार में नहीं आते अर्थात् जन्म-मृत्यु सदा के लिए समाप्त हो जाती है। अब उपरोक्त गीता के श्लोकों में से कुछेक का अनुवाद करके स्पष्ट करता हूँ।

गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे भारत! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा, उसकी कृपा से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त हो जाएगा। हिन्दू धर्म के सन्त, मण्डलेश्वर, धर्मगुरु कहते हैं कि श्री कृष्ण जी अपनी ही शरण में जाने को कह रहे हैं। उन धर्मगुरुओं का यह कहना बिल्कुल अनुचित है क्योंकि गीता अध्याय 2 श्लोक 7 में कहा है कि हे श्री कृष्ण, मैं (अर्जुन) आपकी शरण में हूँ, आपका शिष्य हूँ। जो हमारे हित में हो, वही राय मुझे दीजिए। गीता अध्याय 4 श्लोक 3 में कहा है कि हे अर्जुन! तू मेरा भक्त है। इस गीता के उल्लेख से स्पष्ट हुआ कि अर्जुन तो पहले से ही श्री कृष्ण जी की शरण में था। इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 का भावार्थ है कि गीता ज्ञान देने वाला अपने से अन्य परमेश्वर की शरण में जाने को कह रहा है। यह भी सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता से कोई अन्य "परमेश्वर" है।

अन्य प्रमाण :- गीता अध्याय 8 श्लोक 1 के प्रश्न का उत्तर गीता ज्ञान दाता

ने श्लोक नं. 3 में दिया है कि वह "परम अक्षर ब्रह्म" है। फिर अध्याय 8 के ही श्लोक 5 तथा श्लोक 7 में तो अपनी भक्ति करने को कहा है। फिर श्लोक 8, 9, 10 में परम अक्षर ब्रह्म की भवित करने की राय दी है। गीता अध्याय 4 श्लोक 5 में, अध्याय 2 श्लोक 17 में, अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता ने अपनी स्थिति स्पष्ट की है कि यदि मेरी भक्ति करेगा तो जन्म-मृत्यु तेरे भी सदा बने रहेंगे और मेरे भी। गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में तत्त्वदर्शी सन्त की पहचान बताई है कि जो व्यक्ति संसार रूपी वृक्ष के सर्व भाग मूल सहित तत्त्व से जानता है, (सः वेदवित्) वह वेद के तात्पर्य को जानने वाला है अर्थात् वह तत्त्वदर्शी सन्त है। फिर अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्त्वदर्शी सन्त मिलने के पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद को खोजना चाहिए, जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी जन्म-मृत्यु के चक्र में नहीं आते। गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में उसका वर्णन किया है कि अर्जुन तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा। उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परम शान्ति तथा सनातन परम धाम को प्राप्त हो जाएगा। यह परम शान्ति है क्योंकि साधक को पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता। सदा के लिए अमर लोक (सनातन परम धाम) में निवास करेंगे। वहाँ नैष्कर्म्य मोक्ष प्राप्त होता है जिसका भावार्थ है कि सत्यलोक (सनातन परम धाम) में बिना कार्य (कर्म) किए ही सब सुविधाएँ तथा पदार्थ प्राप्त होते हैं और अपने पुण्य कभी समाप्त नहीं होते, वैसे तो श्री ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश, दुर्गा, ब्रह्म तथा परब्रह्म की भक्ति से भी नैष्कर्म्य मोक्ष प्राप्त होता है, वह कुछ समय तक ही रहता है जो प्रत्येक देवता के लोक में बने स्वर्ग (होटल) में प्राप्त होता है। परन्तु वहाँ प्राणी को अपने पुण्यों का प्रतिफल ही प्राप्त होता है। पुण्यों के समाप्त होने के पश्चात् पुर्णजन्म तथा मृत्यु का चक्र पुनः प्रारम्भ हो जाएगा। ("नैष्कर्म्य" मुक्ति का वर्णन गीता अध्याय 3 श्लोक 4 तथा अध्याय 18 श्लोक 49 में है।)

जिस सनातन परम धाम तथा शान्ति की प्राप्ति के लिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 तथा अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है, वह गीता ज्ञान दाता से अन्य पूर्ण परमात्मा है। गीता अध्याय 8 श्लोक 5 तथा 7 में तो गीता ज्ञान दाता ने अपनी भक्ति करने को कहा है। उससे तो जन्म-मृत्यु दोनों की बनी रहेगी। इसलिए फिर गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10 में उस परमेश्वर की भक्ति करने के लिए कहा है जिसका वर्णन गीता अध्याय 18 श्लोक 62 तथा अध्याय 15 श्लोक 4 में है। फिर गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 18 में कहा है (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरुष बताए हैं :-

1 :- क्षर पुरुष, यह स्वयं गीता ज्ञान दाता है, इसे क्षर ब्रह्म भी कहते हैं। यह केवल 21 ब्रह्माण्डों का प्रभु है।

2 :- अक्षर पुरुष, इसे परब्रह्म भी कहते हैं। यह केवल 7 शंख ब्रह्माण्डों का प्रभु है।

3 :- परम अक्षर पुरुष है, जिसे परम अक्षर ब्रह्मा, परमेश्वर, सत्य पुरुष, अविनाशी परमात्मा भी कहते हैं जो असँख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी है। यहाँ पर अर्थात् गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10 तथा अध्याय 20 श्लोक 22 में परम अक्षर पुरुष के विषय में वर्णन तथा अध्याय 8 श्लोक 18 में अक्षर पुरुष के विषय में वर्णन है।)

जिस समय अक्षर पुरुष का एक दिन समाप्त होता है जो एक हजार युगों का होता है। ध्यान रहे गीता अध्याय 8 श्लोक 17 में मूल पाठ में केवल सहस्र युग लिखा है न कि संहस्रचतुर्युग। इसलिए अक्षर पुरुष के एक दिन के समाप्त होने पर सर्व प्राणी क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष के कुछ क्षेत्र के नष्ट हो जाते हैं। क्षर पुरुष व इसके सर्व (21) ब्रह्माण्ड के सब प्राणी नष्ट हो जाते हैं। जब दिन प्रारम्भ होता है तो पुनः सब जीव अपने कर्मानुसार उत्पन्न होते हैं तथा मरते हैं। फिर गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 20 में कहा है कि परन्तु इस अव्यक्त अर्थात् अक्षर पुरुष से (परः) परे जो अन्य सनातन अव्यक्त भाव अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म है, वह परमेश्वर तो सब प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता है। फिर गीता अध्याय 8 श्लोक 21 में कहा है कि उसे अविनाशी अव्यक्त कहा गया है, उसी को परमेश्वर कहा गया है। उसी धाम की प्राप्ति से परम गति अर्थात् परमशान्ति प्राप्त होती है जिसे प्राप्त होकर साधक फिर वापिस नहीं आते जिसके विषय में गीता अध्याय 18 श्लोक 62 तथा अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है। गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि वह धाम मेरे धाम से परम अर्थात् श्रेष्ठ है, इसलिए उसे सनातन परम धाम कहते हैं। (नोट:- इस गीता अध्याय 8 श्लोक 21 के अनुवाद में गलती की है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि वह मेरा परम धाम है। वास्तव मूल पाठ में लिखा है "तत् धाम परमम् मम" इस में "मम" शब्द में हलन्त (मम) नहीं है। प्रमाण के लिए उन्हीं गीता अनुवादकों ने गीता अध्याय 3 श्लोक 23 में "मम" का अर्थ करते समय अर्थ किया है, मम् = "मेरा ही"। इसी प्रकार इस अध्याय 8 श्लोक 21 में मम का अर्थ मेरे से परम धाम है, सही है। फिर गीता अध्याय 8 श्लोक 22 में स्पष्ट किया है कि पुरुषः सः परः = (सः) वह (परः) दूसरा (पुरुषः) परमेश्वर तो अनन्य भक्ति से प्राप्त होने योग्य है जिसके अन्तर्गत सर्व प्राणी आते हैं। जिसने सर्व संसार की रचना (उत्पत्ति) की है। गीता अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में गीता ज्ञान दाता से अन्य परम पुरुष का वर्णन है, इसलिए गीता ज्ञान दाता उस धाम को अपना नहीं कह सकता। उसने अपने धाम यानि लोक, परम अर्थात् श्रेष्ठ धाम उस परमेश्वर का धाम बताया है, यह सही अर्थ है।

विचार करें :- गीता अध्याय 8 श्लोक 20 में "परः" शब्द का अर्थ "परे" किया है अर्थात् अव्यक्त से (परः) = परे अर्थात् दूसरा सनातन अव्यक्त भाव वाला

परमेश्वर है। इसी प्रकार गीता के इस अध्याय 8 श्लोक 22 में कहा है कि (सः) वह (परः) जो परे अर्थात् दूसरा (पुरुषः) परमेश्वर है। उसकी प्राप्ति अनन्य भक्ति से ही सम्भव है।

इसका अन्य प्रमाण :- गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सत्तगुण विष्णु जी तथा तमगुण शंकर जी) की भक्ति करने वालों को राक्षस, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख बताया है तथा गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि ये मुझे नहीं भजते। अपनी भक्ति के विषय में गीता अध्याय 18 श्लोक 16 से 18 में कहा कि मेरी भक्ति से होने वाली गति अनुत्तम (घटिया) है। गीता अध्याय 18 श्लोक 19 में कहा है कि बहुत-बहुत जन्मों के अन्त में किसी जन्म में मेरी भक्ति करते हैं अन्यथा अन्य देवताओं और भैरो-भूतों की पूजा ही करते रहते हैं। परन्तु यह बताने वाला सन्त बहुत दुर्लभ है कि वासुदेव अर्थात् वह पूर्ण परमात्मा जिसका वास अर्थात् सत्ता सबके ऊपर है। वही पूजा के योग्य है, उसी की भक्ति से पूर्ण मोक्ष प्राप्त होता है। वही सर्व सृष्टि का रचनहार है। सबका धारण-पोषण करने वाला है। फिर गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जो साधक मेरे ज्ञान को आधार बनाकर तत्त्वदर्शी सन्तों से ज्ञान प्राप्त करके केवल जरा (वृद्धा अवस्था के दुःख से) तथा मरण (मृत्यु के दुःख से) छूटने के लिए भक्ति करके प्रयत्न करते हैं, वे संसार की सर्व वस्तुओं को नाशवान मानकर इनकी इच्छा नहीं करते, केवल मोक्ष उद्देश्य से ही भक्ति करते हैं। वे (तत् ब्रह्म) उस ब्रह्म को (विदु) जानते हैं, सब कर्मों से परीचित हैं, सर्व आध्यात्म ज्ञान से परीचित हैं। (गीता अध्याय 7 श्लोक 29)

गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने प्रश्न किया कि हे भगवान्! (किम् तत् ब्रह्म) वह ब्रह्म क्या है? जिसको जानकर साधक केवल मोक्ष ही चाहता है। इसका उत्तर गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में गीता ज्ञान दाता ने दिया है। कहा है कि "वह परम अक्षर ब्रह्म है।" गीता ज्ञान दाता ने इस परम अक्षर ब्रह्म की जानकारी गीता अध्याय 8 में ही श्लोक नं. 8, 9, 10, 20, 21, 22, में भी दी है जो गीता ज्ञान दाता से अन्य है। गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में कहा है कि जिस परमेश्वर ने सम्पूर्ण जगत् की रचना की है, जिससे यह जगत् व्याप्त है (अर्थात् जिसकी शक्ति से सर्व ब्रह्माण्ड टिके हैं, रुके हैं) वह वास्तव में अविनाशी परमात्मा है जिसका नाश करने में कोई समर्थ नहीं है। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में भी कहा है कि पुरुषोत्तम तो अन्य है (गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में दो पुरुष कहे हैं, क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष)। उत्तम पुरुष इन से अन्य है, अर्थात् श्रेष्ठ परमेश्वर) जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सब का धारण-पोषण करता है। वह परमात्मा कहा जाता है। वही वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है। (गीता अध्याय 15 श्लोक 17), फिर गीता अध्याय 2 के ही श्लोक 59 में भी गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य

परमात्मा के विषय में कहा है। प्रसंग गीता अध्याय 2 श्लोक 53 से चला है। जिसमें कहा है कि 'हे अर्जुन' जिस समय भांति-भांति के भ्रमित करने वाले ज्ञान के वचनों से विचलित हुई तेरी बुद्धि जब परमात्मा में अटल तथा स्थिर ठहर जाएगी, तब तू योग को प्राप्त होगा (गीता अध्याय 2 श्लोक 53), फिर गीता अध्याय 2 श्लोक 59 में कहा है कि कुछ व्यक्ति निराहार रहकर (भोजन त्यागकर) केवल फलाहार या दूधाहार ही करते हैं उनके कुछ समय के लिए विषय-विकार तो निवृत हो जाते हैं, परन्तु संसार के पदार्थों से आसक्ति निवृत नहीं होती। शास्त्रानुसार साधना करने से उस अन्य परमात्मा का साक्षात्कार होता है, जिससे विषय-विकार तथा आसक्ति भी निवृत हो जाती है। गीता अध्याय 2 श्लोक 59 के मूल पाठ में "परम्" शब्द जिस का अर्थ है "पर" अर्थात् दूसरा होता है। उदाहरण के लिए गीता अध्याय 7 श्लोक 13 में मूल पाठ में यही "परम्" शब्द है। इसमें गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि तीनों गुणों (रजगुण श्री ब्रह्मा जी, सतगुण श्री विष्णु जी तथा तमगुण श्री शंकर जी) के भाव से सारा संसार मोहित हो रहा है, इनसे परे मुझे नहीं जानता। (गीता अध्याय 7 श्लोक 13) इसमें परम् = पर = परे अर्थात् दूसरा अर्थ हुआ। इसी प्रकार गीता अध्याय 2 श्लोक 59 में "परम्" का अर्थ पर = परे अर्थात् दूसरा जानें क्योंकि गीता अध्याय 11 श्लोक 55 तथा गीता अध्याय 12 श्लोक 1 से 6 में प्रमाण है। गीता अध्याय 11 श्लोक 55 में संकेत किया है कि मत् कर्मकृत् = शास्त्रानुकुल भक्ति कर्म मेरे लिए (मत् परम्) मेरे से श्रेष्ठ परमात्मा के लिए करता हुआ (मत् भक्त) मेरा भक्त मुझे ही प्राप्त होता है। क्योंकि जब तक तत्त्वदर्शी सन्त नहीं मिलता, तब तक वेदों अनुसार ज्ञान से "ऊँ" नाम का जाप पूर्ण परमात्मा का मानकर करते हैं। जिससे ब्रह्म लोक में चले जाते हैं। इसलिए कहा है कि मेरा भक्त मेरे से अन्य पूर्ण परमात्मा की भक्ति करके भी मुझे ही प्राप्त होता है (गीता अध्याय 11 श्लोक 55)

फिर गीता अध्याय 12 श्लोक 1 में स्पष्ट है कि अर्जुन ने प्रश्न किया कि जो भक्त पूर्वोक्त प्रकार से (गीता अध्याय 11 श्लोक 55 में संकेत है) जो (त्वम्) आपको तथा जो (अव्यक्तम् अक्षरम्) अविनाशी अव्यक्त ("जिस का वर्णन गीता अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में है") उसको भजते हैं, उनमें से उत्तम भक्ति वाला कौन-सा भक्त है? (गीता अध्याय 12 श्लोक 1)

फिर गीता अध्याय 12 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मेरा भक्त जो केवल मेरे ध्यान में लगा है, वह (युक्ततमाः मताः) मेरे विचार से वह सही साधक है। (गीता अध्याय 12 श्लोक 2)

गीता अध्याय 12 श्लोक 3 से 4 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि "जो उस सर्वव्यापी जिसके विषय में मैं भी नहीं जानता, जो सदा एक रस रहने वाला स्थाई, अचल, अव्यक्त अर्थात् परोक्ष अविनाशी परम अक्षर ब्रह्म की निरन्तर

उपासना करते हैं, सब प्राणियों के हित के लिए कामना करने वाले साधक सब में समान भाव रखने वाले साधक मुझको ही प्राप्त होते हैं। भावार्थ है कि जिस सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म का ज्ञान गीता ज्ञान दाता को भी नहीं है, उसका ज्ञान तत्त्वदर्शी सन्तों को होता है। तत्त्वदर्शी सन्त न मिलने से ब्रह्म के ऊँ (ओम) नाम को परम अक्षर ब्रह्म का नाम जाप मानकर साधना करते हैं। वे तथा परमेश्वर कबीर जी ने "सोहं" मन्त्र का आविष्कार करके साधकों को बताया है। परन्तु सारनाम फिर भी गुप्त ही रखा है। सूक्ष्म वेद में लिखा है :-

सोहं शब्द हम जग में लाए। सार शब्द हम गुप्त छिपाएं ॥

सोहं ऊपर और सतसुकृत एक नाम।

सब हंसों का बास है, नहीं बस्ती नहीं ठाम ॥

सतगुरु सोहं नाम दे, गुज्ज बीरज विस्तार।

बिन सोहं सीझौ नहीं, मूल मन्त्र निज सार ॥

"जो साधक 'सोहं' नाम का जाप करते हैं, यह परब्रह्म (अक्षर पुरुष जो गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में प्रमाण है) उसका जाप है। सारनाम मिले बिना "सोहं" तथा "ऊँ" पूर्ण मोक्षदायक नहीं है। "ऊँ" का जाप ब्रह्म (गीता ज्ञान दाता) का है। ब्रह्मलोक में महाइन्द्र का लोक प्राप्त होता है जो ब्रह्म लोक में ही बना है तथा "सोहं" नाम के जाप की भक्ति कमाई से ब्रह्मलोक में ही बने नकली सत्यलोक को प्राप्त होता है। साधना काल में साधक यह भी कहता रहता है "सब प्रणियों का भला हो"

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः ।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिचत् दुखभाग भवेत् ॥

भावार्थ :- "सब सुखी हों, सब अरोग्य अर्थात् स्वस्थ हों, सबका भला हो, कोई दुख किसी को न हो।" यह मंगलकामना का मन्त्र बनाकर आशीर्वाद देता है, दुआ (प्रार्थना) करता रहता है। जिससे इस साधक की पुण्य कमाई तथा भक्ति धन दुआ आशीर्वाद के माध्यम से समाप्त हो जाते हैं। तत्त्वदर्शी सन्त का अनुयायी यह गलती कभी नहीं करता। इसलिए कहा है कि उस परम अक्षर ब्रह्म का साधक भी मुझे ही प्राप्त होता है क्योंकि भक्ति आशीर्वाद तथा सर्व की मंगलकामना करके समाप्त कर दी, कुछ महास्वर्ग (ब्रह्मलोक) में खा-खर्ची, फिर जन्म-मरण तथा 84 लाख प्राणियों के चक्र में गिर जाता है।

राजा जनक के जीवन से सिद्ध करते हैं :-

त्रेतायुग में जनक जी एक धार्मिक राजा थे। इनकी पुत्री सीता जी थी जो त्रिलोकीनाथ श्री विष्णु उर्फ श्री रामचन्द्र पुत्र श्री दशरथ जी की पत्नी थी। सतयुग में राजा जनक जी का जीव ही राजा अम्बरीष थे जो श्री विष्णु जी के परम भक्त थे। साथ-साथ वेदों के अनुसार "ऊँ" नाम का जाप करते थे जो ब्रह्म

साधना है। जिसके परिणामस्वरूप लाखों वर्ष श्री विष्णु जी के लोक में बने स्वर्ग में अपनी भक्ति के सुख को भोगा। फिर लाखों वर्ष ब्रह्म लोक में ब्रह्म साधना के सुख को भोगा। फिर त्रेतायुग में पुनर्जन्म जनक का हुआ जो एक धार्मिक राजा थे। अपने जीवन काल में अनेकों यज्ञ (धार्मिक अनुष्ठान) किए। श्री विष्णु जी की भक्ति की ब्रह्म साधना भी की। जब संसार छोड़कर चलने लगे तो एक विमान स्वर्ग से आया, राजा जनक जी को बैठाकर उड़ चला। रास्ते में एक नरक था जिसमें 12 करोड़ जीव अपनी करनी का दण्ड भोग रहे थे, हा-हा-कार मची थी। जनक जी ने देवदूतों से पूछा कि यह किन दुखियों की चिल्लाहट है? विमान रोको, विमान रुक गया। देवदूतों ने बताया राजन! यह एक नरक है। इसमें प्राणी अपने पापकर्मों का दण्ड भोग रहे हैं। जनक जी ने कहा इनको इस नरक से निकाल दो। मुझसे देखा नहीं जा रहा। देवदूतों ने कहा जनक जी यहाँ आप का राज्य नहीं है। यहाँ धर्मराज की आज्ञा चलती है। जनक जी ने कहा कि या तो इनको छोड़ दो या फिर मुझे भी इसी नरक में डाल दो। देवदूतों ने बताया इसका समाधान धर्मराज ही कर सकते हैं। राजा जनक जी ने कहा धर्मराज से मेरी बात कराओ। धर्मराज वहीं उपस्थित हो गए तथा सर्व स्थिति जानने के पश्चात् बोले कि मैं आपको इस नरक में नहीं डाल सकता और न ही मैं इन 12 करोड़ जीवों को नरक से निकाल सकता। एक उपाय बताता हूँ। आप (जनक जी) अपने कुछ भक्ति धन (पुण्य तथा मन्त्र जाप का भक्ति धन) इन 12 करोड़ जीवों को प्रदान कर दो। तब इन्हें आप के साथ ही स्वर्ग भेज दूँगा। जनक जी ने दयावश होकर अपनी आधी भक्ति कमाई उन 12 करोड़ जीवों को दे दी। वे 12 करोड़ आत्माएं राजा जनक के द्वारा दिए पुण्यों के आधार से स्वर्ग में चली गई और राजा जनक ने भी स्वर्ग में (विष्णु लोक वाले स्वर्ग में, फिर ब्रह्म लोक वाले महास्वर्ग में) निवास करके अपने पुण्यों का भोग भोगा।

कथा सार :- जिन 12 करोड़ जीवों को राजा जनक जी ने अपने आधे पुण्य दान किए थे, वे 12 करोड़ जीवों को बराबर-बराबर बाँट दिये। उन पुण्यों के फलस्वरूप वे आत्माएं स्वर्ग में रही। फिर उन पुण्यों के समाप्त होने पर पुनः उसी नरक में डाल दी गई। जो पापकर्म शोष बचे थे, वे फिर भोगने पड़े। राजा जनक जी के साथ बहुत बड़ा धोखा हुआ। उसके आधे पुण्य तो दान करने से समाप्त हुए और आधे ऊपर स्वर्ग में भोगकर समाप्त हुए, पुनः जन्म-मरण के चक्र में गिरे। वही जनक जी वाला जीव कलयुग में सिक्ख गुरु श्री नानक देव साहेब जी हुए। श्री नानक जी को सुल्तानपुर शहर में बेर्इ नदी के घाट पर पूर्ण परमात्मा एक जिन्दा साधु के वेश में मिले। उनको उस सनातन परम धाम (सत्यलोक = सच्च खण्ड) में ले गए। फिर तीसरे दिन वापिस उसी बेर्इ नदी के घाट पर छोड़ा। सर्व तत्त्वज्ञान कराया, उनके पूर्व अनेकों अच्छे जीवन के जन्म दिखाए, उनको

सत्यनाम (जो दो अक्षर का मन्त्र है जिसमें एक औंकार (ॐ) है तथा दूसरा गुप्त है, उपदेशी को ही बताया जाता है) तब श्री नानक देव साहेब जी का पूर्ण मोक्ष हुआ। यदि परमात्मा तत्त्वदर्शी सन्त रूप में प्रकट होकर तत्त्वज्ञान नहीं बताते तो श्री नानक देव जी वाले जीव का जन्म-मरण चक्र कभी समाप्त नहीं होता। वह सत्य साधना मेरे पास (सन्त रामपाल जी के पास) है। प्रसंग चल रहा है कि भावना में बहकर आशीर्वाद द्वारा अपनी भक्ति धन कभी नष्ट नहीं करना चाहिए। आपने कोई भी बुद्धिमान धनवान व्यक्ति अपने नोटों को अन्य किसी को बाँटता नहीं देखा होगा। यदि किसी की सहायता करना चाहें तो उसे कमाने का तरीका बताएँ। जिससे वह अपने पैरों पर खड़ा होकर धनी बन सके। इसी प्रकार भक्तजन जिसकी सहायता करना चाहें तो उसको पूर्ण गुरु से दीक्षा दिलाकर भक्ति धन कमाने की प्रेरणा दें।

गीता अध्याय 12 श्लोक 5 में कहा है कि "जिनकी आस्था सच्चिदानन्द धन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म में है और जो उसी को (चेतसा) जानने वाले हैं, उनको अधिकतर (क्लेशः) शंका के कारण ज्ञान का झगड़ा बना रहता है? उन मानव शरीरधारियों के लिए इस कारण से दुखपूर्वक प्राप्त की जाने वाली गति है। भावार्थ वही है कि तत्त्वदर्शी सन्त न मिलने के कारण कबीर पंथी (धीसा दास पंथी, गरीबदास पंथी, दादू पंथी, नेकीराम पंथी थे। सब कबीर पंथी कहलाते हैं।) भी कठिन तपस्या करते हैं। व्रत-मौनव्रत, अन्य कठिन साधना वाले पाखण्ड ही करते हैं। इसलिए कहा है कि उस पूर्ण परमात्मा की साधना क्लेशयुक्त तथा दुःखपूर्वक प्राप्त होने योग्य है। वास्तव में सर्व साधना जो शास्त्रानुकूल है, वह बहुत आसान है।

प्रमाण:- यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 15 में ब्रह्म साधना के लिए कहा है कि:-

वायुः अनिलम् अमृतम् अथ इदम् भस्मान्तम् शरीरम्।

ओम् कृतम् स्मर, किलबे स्मर कृतुः स्मर ॥

भावार्थ :- ब्रह्म साधना का ऊँ (ओम्) नाम है। इससे मिलने वाला अमृतम् अर्थात् मोक्ष प्राप्ति के लिए 'ऊँ' नाम का जाप (वायुः अनिलम्) श्वांस-उश्वांस से पूरी लगन के साथ शरीर नष्ट होने तक (क्रतम्) कार्य करते-करते (स्मर) स्मरण कर, (किलबे स्मर) पूरी कसक अर्थात् किलबिलाहट यानि विलाप जैसी स्थिति से स्मरण कर, (कृतुः स्मर) मनुष्य जीवन का मूल कार्य जानकर स्मरण कर। (यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 15)

फिर युजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 17 में वेद ज्ञान दाता ने (यही गीता ज्ञान दाता है) कहा है कि वह पूर्ण परमात्मा तो ऊपर के लोक में परोक्ष है अर्थात् अव्यक्त है। (अहम् श्वम् ब्रह्म ओम्) मैं ब्रह्म हूँ, दिव्य आकाश रूपी ब्रह्म लोक में मैं रहता हूँ, मेरा ऊँ नाम है। यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 में वेद ज्ञान दाता ने कहा कि

"कोई तो परमात्मा को (सम्भवात्) उत्पन्न होने वाला अवतार रूप में साकार मानता है, कोई (असम्भवात्) उत्पन्न न होने वाला अर्थात् निराकार मानता है। वह परमात्मा उत्पन्न होता है या नहीं या जैसा है, उसका ज्ञान (धीराणाम्) तत्त्वदर्शी सन्तजन बताते हैं, उनसे (श्रुणुः) सुनो। (यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10), यही प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में है कि परमात्मा के विषय में सम्पूर्ण ज्ञान तत्त्वदर्शी सन्त बताते हैं। उनकी खोज कर, उनसे निष्कपट भाव से तथा दण्डवत प्रणाम करके विनम्रता से प्रश्न करने से वे तत्त्वदर्शी सन्त तेरे को तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे। सूक्ष्म वेद में भी कहा कि :-

नाम उठत नाम बैठत, नाम सोवत जाग रे।

नाम खाते नाम पीते, नाम सेती लाग रे॥

“गीता में दो प्रकार का ज्ञान है”

भावार्थ :- परमात्मा की साधना केवल नाम के जाप से होती है, उस नाम का जाप कार्य करते-करते करो, सोने से पहले, सुबह उठते ही, खाना खाते समय, पेय पदार्थ पीते समय अर्थात् सर्व कार्य करते-2 नाम का स्मरण करो। भावार्थ है कि हठयोग न करके कर्मयोग में साधना करो।

गीता का जो ज्ञान वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अर्थर्ववेद) तथा सूक्ष्म वेद जो सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् सत्य पुरुष ने अपने मुख कमल से तत्त्वज्ञान बोला है, उससे मेल नहीं करता है तो वह गलत ज्ञान है। वह गीता ज्ञान दाता का अपना मत है, वह स्वीकार्य नहीं है। गीता ज्ञान दाता ने कई श्लोकों में (गीता अध्याय 13 श्लोक 2, अध्याय 7 श्लोक 18, अध्याय 6 श्लोक 36, अध्याय 3 श्लोक 31 तथा अध्याय 18 श्लोक 70 में) कहा है कि ऐसा मेरा मत है, मेरा विचार है। श्रीद्भगवत् गीता में 95 प्रतिशत वेद ज्ञान है, 5 प्रतिशत गीता ज्ञान दाता का अपना मत है। यदि वह वेदों से मेल खाता है तो ठीक है, अन्यथा व्यर्थ है। उदाहरण के लिए गीता अध्याय 2 श्लोक 37-38 प्रर्याप्त है। गीता अध्याय 2 श्लोक 37 में तो लाभ-हानि बता रहा है। कहा है कि या तो तू युद्ध में मरकर स्वर्ग को प्राप्त होगा अथवा युद्ध जीतकर पृथ्वी का राज भोगेगा। इसलिए हे अर्जुन! युद्ध के लिए खड़ा हो जा। (गीता अध्याय 2 श्लोक 37) फिर गीता अध्याय 2 श्लोक 38 में ही तुरन्त इसके विपरीत कहा है कि जय-पराजय अर्थात् हार-जीत, सुख-दुःख को समान समझकर युद्ध के लिए तैयार हो जा। इस प्रकार युद्ध करने से तू पाप को प्राप्त नहीं होगा। (गीता अध्याय 2 श्लोक 38)

गीता अध्याय 11 श्लोक 33 में भी स्पष्ट किया है कि "तू उठ, यश को प्राप्त कर। शत्रुओं को जीतकर धन-धान्य से सम्पन्न राज्य को भोग। मैंने तेरे सामने वाले योद्धाओं को पहले ही मार रखा है, तू केवल निमित मात्र बन जा।

“पाण्डवों द्वारा की गई यज्ञ”

महाभारत ग्रन्थ में एक प्रकरण आता है कि कुरुक्षेत्र के मैदान में युद्ध हुआ, करोड़ों सैनिक मारे गए, करोड़ों बहनें विधवा हो गई, करोड़ों बच्चे अनाथ हो गए। पाण्डव युद्ध जीत गए। कौरवों का सर्वनाश हो गया। दिल्ली (इन्द्रप्रस्थ) की गद्दी पर श्री युधिष्ठिर को बैठाकर श्री कृष्ण जी “द्वारका” चले गये। युधिष्ठिर राजा को भयंकर स्वप्न आने लगे जिसमें सिर कटे व्यक्ति उनके महल में प्रवेश करते दिखाई लेने लगे। करोड़ों बच्चे पिता जी! - पिता जी! कहकर चिल्लाते दिखाई देने लगे, करोड़ों सैनिकों की विधवाएँ हाय कन्त! - हाय कन्त! कह-कहकर बिलखती-तड़फती अपने सिर के बालों को नौचती दिखाई देने लगी। उनकी वह तड़फ मानो कह रही हो कि महलों के सुख को भोगने के लिए हमारे सुहाग उजाड़ने वाले इन बच्चों सहित हमें भी मार डाल, तेरा ऐश्वर्य पूर्ण हो जाएगा। कितने दिन रहोगे इस राज सिंहासन पर? एक दिन सुबह के समय राजा युधिष्ठिर स्नान करने के लिए गंगा तट पर गया, वहाँ पर कई हजारों की सेंख्या में महिलाएं भी अपने सुहाग की चूड़ियाँ जो विधवा होने पर तोड़ी जाती हैं, उनको जल प्रवाह करने उस घाट पर गई हुई थी, रो रही थी, सुबक रही थी, कुछ चक्कर खा कर गिर रही थी, उसके बेटे-बेटियाँ उस विधवा माँ के ऊपर गिरकर रो रहे थे। कुछेक को दो-दो महिलाएं जो वृद्ध थी, हाथ का सहारा देकर चल रही थी तथा सब रो रही थी। यह विकराल दृश्य देखकर राजा युधिष्ठिर बिना स्नान किए ही वापिस लौट गए। सारा दिन वही दृश्य औँखों के सामने घूमने लगा। कुछ नहीं खाया-पीया, रात्रि में सोने लगा तो वही दृश्य औँखों के सामने था। जैसे-तैसे सोया तो वही स्वप्न आने लगे जो पहले दो-तीन दिन से दिख रहे थे। राजा युधिष्ठिर न सो पा रहा था, न रो पा रहा था, न कुछ खा रहा था, केवल नाम-मात्र आहार करता था। औँखें फटी-फटी-सी, चेहरा डरा-डरा-सा रहता था। द्रोपदी कई दिन से यह दशा अपने बड़े पति की देख रही थी। कई बार कारण भी पूछा। परन्तु उत्तर होता था कुछ नहीं - कुछ नहीं। जब द्रोपदी को संतोषजनक उत्तर नहीं मिला और युधिष्ठिर जी की दशा दिन-प्रतिदिन बिगड़ती देखकर उसे अन्य पाण्डवों को बताना पड़ा। चारों पाण्डव (भीम, अर्जुन, नकुल तथा सहदेव) युधिष्ठिर जी के पास गए तथा विनम्रतापूर्वक परेशानी का कारण पूछा। युधिष्ठिर ने उस समय भी कहा कुछ नहीं। जब बड़ा भाई जीवित है तो छोटों को टेंशन (चिन्ता) नहीं करनी चाहिए। लेकिन अर्जुन ने कहा कि बड़े भाई क्या हम बच्चे हैं? क्या हम अपना भाई नहीं मानते? युधिष्ठिर की औँखों से औंसू झलक गए और चारों को बाँहों में लेकर सीने व गले से लगाकर फिर उनके मुख पर हाथ रखकर कहने लगा कि ऐसा मत कहो, आप मेरे भाई ही नहीं मेरी जिन्दगी हो और पिता

जी की धरोहर हो, परन्तु ऐसी कोई बात नहीं है जो आप से छुपाऊँ। सहदेव ने आँखों में पानी भर के कहा कि बड़े भईया! लगता है राजा बनकर आप बैर्डमान-धोखेबाज बन गए हो। हमसे अवश्य कुछ हेराफेरी-बैर्डमानी कर रहे हो, सच-सच बता दो हम चारों की कसम। नहीं तो हम भी खाना-पीना त्याग देंगे। युधिष्ठिर को उस छोटे भाई के प्यार भरे उलाहनों ने विवश कर दिया उनके सामने अपना दुःख व्यक्त करने के लिए। तब जो-जो स्वप्न तथा गंगा दरिया तट पर दृश्य देखे थे, सब बताए। पाण्डवों के गुरु श्री कृष्ण जी थे। (प्रमाण गीता अध्याय 2 श्लोक 7 तथा गीता अध्याय 4 श्लोक 3 में)

इसलिए पाँचों पाण्डव द्वारका पहुँचे तथा युधिष्ठिर जी की परेशानी से श्री कृष्ण जी को परीचित कराया तथा इस संकट के आने का कारण तथा निदान (समाधान) पूछा। श्री कृष्ण जी ने देख-सोचकर बताया कि युधिष्ठिर के ऊपर बुरी आत्माओं का साया है तथा युद्ध में किए बन्धुघात का पाप सिर चढ़ा है।

समाधान :- श्री कृष्ण जी ने बताया कि एक अश्वमेध यज्ञ करो। पूरी पृथ्वी के साधु-सन्त, ऋषि-महर्षि, ब्राह्मण, अपने रिस्तेदार तथा स्वर्ग लोक के सर्व देवताओं को उस यज्ञ में भण्डारा भोजन कराओ। एक पंचायण (पंचानन्) अर्थात् पंचमुखी शंख लाओ। उसको एक सुसज्जित मेज पर रखा जाएगा। जब सर्व उपस्थित मेहमान भोजन कर लेंगे, तब यह शंख अपने आप आवाज करेगा। तब तुम्हारे ये तीन ताप का संकट समाप्त होगा। यदि शंख ने आवाज नहीं की तो यज्ञ सम्पूर्ण नहीं होगी, संकट बना रहेगा। यह सुनकर अर्जुन को मानो साँप सूंघ गया हो। उसका दिमाग फटने को हो गया। सोचने लगा कि जब युद्ध की तैयारी थी, मैं युद्ध से मना कर रहा था। तब भगवान युद्ध करने को बार-बार प्रेरित कर रहे थे। कहा था कि तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा, तू तो निमित मात्र है। तेरे दोनों हाथों में लड्डू हैं। अब कह रहे हैं कि युद्ध में किए नरसंहार का पाप ही तुम्हारे संकट का कारण है। समाधान भी ऐसा बताया कि उस समय के करोड़ों रूपये (वर्तमान के अरबों रूपये) खर्च होने हैं। यह विचार करके अर्जुन विष की घूंट पी गया कि यदि मैं आज श्री कृष्ण जी से प्रश्न करके पूछूँगा कि गीता ज्ञान देते समय आप कह रहे थे कि युद्ध करो, तुम पाप को प्राप्त नहीं होगे। अब वही युद्ध में किया पाप ही संकट का कारण बताया है। भाई युधिष्ठिर यह सोचेगा कि खरबों रूपये मेरे इलाज पर खर्च होने हैं अर्जुन इसीलिए श्री कृष्ण जी से वाद-विवाद कर रहा है, यह मेरा इलाज नहीं कराना चाहता। जरा-सी भी भनक युधिष्ठिर भाई को लग गई तो यह मर सकता है, इलाज नहीं कराएगा। यह विचार करके अर्जुन ने यज्ञ की तिथि तथा स्थान पूछकर यज्ञ की तैयारी की। उस यज्ञ में तेतीस (33) करोड़ देवता, 88 हजार ऋषि, 12 करोड़ ब्राह्मण, 56 करोड़ यादव, (अर्जुन की ससुराल वाले द्वारका से) नौ नाथ, 84 सिद्ध महात्मा, अन्य अनेकों सामान्य

जनता जन आए तथा भोजन खाया। परन्तु शंख ने आवाज नहीं की। फिर सन्त सुदर्शन (सुपच) जी को बुलाया गया, तब वह शंख बजा, यज्ञ सम्पूर्ण हुई। उस समय करुणामय नाम से प्रकट परमात्मा जो तत्त्वदर्शी सन्त की लीला करने प्रत्येक युग में आते हैं, आए हुए थे। सुदर्शन उनका शिष्य था तथा सत्यनाम (सतनाम, जो दो अक्षर का है, एक ऊँ दूसरा तत्) की भक्ति करता था। जिस कारण से पाण्डवों की यज्ञ सफल हुई थी तथा वह तीन ताप से आया संकट पाण्डवों का समाप्त हुआ था जो न श्री कृष्ण जी के भोजन करने से तथा न उपरोक्त महानुभावों के भोजन करने से समाप्त हुआ। श्री सुदर्शन जी उस परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण परमात्मा की भक्ति करता था। सूक्ष्म वेद में कहा है :-

तुम कौन राम का जपते जापम् । ताते कर्टे ना तुम्हरे तीनों तापम् ॥

भावार्थ :- आप कौन से राम की भक्ति का नाम जपते हैं, जिससे आप के तीन ताप भी समाप्त नहीं होते, मोक्ष तो बहुत दूर की बात है। इसलिए मेरे (सन्त रामपाल के) पास वह सत्य साधना है, दो अक्षर का सत्यनाम है। आओ और दीक्षा लेकर अपना कल्याण कराओ।

अब उसी प्रसंग पर आते हैं कि गीता में दो तरह का ज्ञान है, एक तो गीता ज्ञान दाता ने युद्ध कराने के लिए अपने दौव-पैच लड़ाए हैं, वे वेद विरुद्ध होने से तथा सत्य से परे होने से स्वीकार्य नहीं है, वह इसका मत है। इसलिए गीता अध्याय 12 श्लोक 5 में कहा है कि उस सच्चिदानन्द घन ब्रह्म की भक्ति क्लेश व दुःखपूर्वक प्राप्त होती है। जबकि वेद में लिखा है कि तत्त्वदर्शी सन्त मिलने के पश्चात् उस परमात्मा (पूर्णब्रह्म) की भक्ति कार्य करते-करते नाम जाप साधना करके की जाती है, बहुत ही सरल है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता ने जो अपना मत बताया है, यदि वह वेदों (चार वेद हैं:- 1. ऋग्वेद, 2. यजुर्वेद, 3. सामवेद, 4. अर्थर्ववेद तथा पाँचवा है सूक्ष्म वेद।) से मेल नहीं खाता है तो वह व्यर्थ ज्ञान है। वह गीता ज्ञान दाता के घर का है, वह हमने ग्रहण नहीं करना है, वह हमने नहीं मानना है।

अन्य प्रमाण :- गीता अध्याय 12 श्लोक 8 से 19 तक में अपना मत बताया है। गीता अध्याय 12 श्लोक 8 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मुझमें मन लगा, मेरे में बुद्धि लगा, मुझे प्राप्त होगा। इसी प्रकार (ऊर्ध्वम्) ऊपर वाले अव्यक्त की भक्ति करेगा तो उसे प्राप्त होगा, इसमें कोई संशय नहीं है। (गीता अध्याय 12 श्लोक 8)

गीता अध्याय 12 श्लोक 9 में गीता ज्ञान दाता कहता है कि यदि मेरी प्राप्ति चाहता है और यदि तू मन को मुझमें लगाने में समर्थ नहीं है तो हे धनंजय! “अर्जुन!” अभ्यास योग अर्थात् नाम-जाप तथा नित्य पाठ करना आदि-आदि अभ्यास साधना कहलाती है, को करके मुझे प्राप्त करने की इच्छा कर।

गीता अध्याय 12 श्लोक 10 में गीता ज्ञान दाता कहता है कि यदि नाम-जाप नित्य पाठ आदि-आदि अभ्यास करने में भी समर्थ नहीं है तो (मत् कर्म परमः) मेरे लिए श्रेष्ठ कर्म करने वाला हो जा। इस प्रकार मेरे लिए शुभ कर्म करता हुआ भी सिद्धि को प्राप्त कर लेगा।

गीता अध्याय 12 श्लोक 11 में गीता ज्ञान दाता कहता है कि यदि (मद्योगम = मत् योगम) मेरे द्वारा बताई गई भक्ति साधना पर आश्रित होकर उपरोक्त साधना करने में भी तू समर्थ नहीं है तो (यतात्मवान् = यत आत्मवान्) यति आत्मा वाला हो जा। "यति" का अर्थ है अपनी पत्नी के अतिरिक्त किसी भी स्त्री के प्रति विषय विकारवश होकर मन में कभी द्वेष उत्पन्न न होता हो, उसे यति पुरुष कहते हैं। जैसे श्री रामचन्द्र जी को यति अर्थात् सन्त भाषा में "जति" कहा जाता है। श्री सुखदेव = शुकदेव पुत्र श्री व्यास को भी यति = जति माना गया है तथा सीता पत्नी श्री रामचन्द्र को "सती" माना गया है। इसलिए कहा है कि यतात्मवान् अर्थात् यति पुरुष बनकर सर्व कर्मों के फल त्यागकर। (गीता अध्याय 12 श्लोक 11)

गीता अध्याय 12 श्लोक 12 में गीता ज्ञान दाता कहता है कि (अभ्यासात्) नाम जाप, नित्य पढ़ आदि-आदि जो अभ्यास किया जाता है, उससे श्रेष्ठ ज्ञान है अर्थात् जिज्ञासु बनकर ज्ञान प्राप्त कर। ज्ञान से ध्यान अर्थात् हठ साधना करके समाधि लगाना यहाँ गीता ज्ञान दाता के मतानुसार ध्यान कहा है। जिसका अनुसरण सर्व ऋषिजन किया करते थे। जिसे वर्तमान में Meditation (मैडिटेशन) कहते हैं। ध्यान से श्रेष्ठ सर्व कर्मों का फल का त्याग है क्योंकि त्याग से तत्काल शान्ति प्राप्त हो जाती है।

गीता अध्याय 12 श्लोक 13-14 में गीता ज्ञान दाता कहता है कि जो व्यक्ति सब प्राणियों से द्वेष भाव रहित है। सब का मित्र है और दयालु है। जैसे राजा जनक था। समता रहित अहंकार से रहति सुख-दुःख में समान रहता है, क्षमावान् है, जो (योगी) साधक निरन्तर संतुष्ट है। (यतात्मा) यति पुरुष हैं, दृढ़ निश्चय वाला है अर्थात् जो मैंने ज्ञान अपना मत या वेद ज्ञान बताया है, उसको दृढ़ निश्चय से पालन करता है। वह मुझ पर समर्पित मेरा भक्त मुझे प्रिय है।

इसी प्रकार गीता अध्याय 12 श्लोक 15 से 19 तक में अपना मत कहा है जो केवल नास्तिकता की ओर ले जाने वाला है। जैसे ऊपर किए गए उल्लेख में (गीता अध्याय 12 श्लोक 8 से 12 तक) कहा है कि:-

मुझ में मन लगा, यदि मन नहीं लगा सकता तो नाम, जाप तथा नित्य पाठ आदि का अभ्यास किया कर। अभ्यास का अर्थ है नित्य प्राप्ति बार-बार कर्म करना। नाम-जाप, नित्य पाठ करके मुझे प्राप्त करने की इच्छा कर। यदि नाम जाप, नित्य पाठ भी नहीं कर सकता तो मेरे लिए अर्थात् परमात्मा के लिए कर्म

करने वाला हो जा। उदाहरण के लिए जैसे धार्मिक कर्म करते हैं। कहीं कम्बल बाँट दिए, कहीं भोजन भण्डारा कर दिया, कहीं मन्दिर बना दिया, कहीं प्याऊ बनवा दी, पक्षियों को अनाज डाल दिया आदि-आदि भगवान के प्राप्ति किए कर्म कहलाते हैं। इनके करने से कुछ सिद्धी प्राप्त हो जाएगी। प्रिय पाठको! ध्यान से विचारो, इस श्लोक में इन कर्मों से होने वाला फल भी बता दिया है कि “सिद्धी” प्राप्त हो जाती है। फिर साधक स्वयं झाड़-फूंक, जन्त्र-मन्त्र, आशीर्वाद तथा दुआ-बद्दुआ देने योग्य हो जाता है और महर्षि प्रसिद्ध हो जाता है। (गीता अध्याय 12 श्लोक 10)

यदि भगवान के लिए कर्म भी नहीं कर सकता है तो यति (जति) पुरुष बनकर कर्म फल को त्याग कर।

विचार करें :- जब भगवान के लिए धार्मिक कर्म करेगा ही नहीं तो कौन से कर्म शेष हैं जिनके फल का त्याग करेगा। इसे कहते हैं ऊवा-बाई का ज्ञान, बिना सिर-पैर का ज्ञान। (गीता अध्याय 12 श्लोक 11) फिर गीता अध्याय 12 श्लोक 12 में तो कमाल ही कर दिया। कहा है कि अभ्यास अर्थात् नाम जाप नित्य पाठ रूपी अभ्यास से ज्ञान श्रेष्ठ है जो गीता ज्ञान दाता अपना मत बता रहा है, यहाँ पर इस ज्ञान की चर्चा है। ज्ञान से ध्यान (Meditation) अर्थात् हठपूर्वक एक स्थान पर एकान्त में आसन (गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 में बताई विधि जो गीता ज्ञान दाता का मत है) पर बैठकर करना श्रेष्ठ है। ध्यान से सब धार्मिक कर्मों का फल त्यागने से तुरन्त शान्ति मिल जाती है। गीता अध्याय 12 श्लोक 11 में सब धार्मिकता वाले कर्म भी त्यागने का आदेश है। इस प्रकार का यह ज्ञान जो साधकों को नास्तिकता की ओर धकेल रहा है। यह गीता ज्ञान दाता का शास्त्रविरुद्ध ज्ञान है, जिस कारण से साधक शास्त्रविधि को त्याग कर मनमाना आचरण करने लग गए और अपना अनमोल मनुष्य जीवन व्यर्थ करते हैं। यदि ये ज्ञान उचित होता कि भगवान में मन न लगे तो अभ्यास (नाम जाप, नित्य पाठ) कर, अभ्यास न कर सके तो भगवान के लिए कर्म कर, भगवान के लिए कर्म न कर सके तो सर्व कर्मों का फल त्याग दें तो चार वेदों की तथा श्री मद्भगवत् गीता के अन्य 650 श्लोकों की (क्योंकि लगभग 50 श्लोकों में गीता ज्ञान दाता मत वाला ज्ञान है) क्या आवश्यकता थी। यही 4-5 श्लोक पर्याप्त थे। इस प्रकार गीता ज्ञान दाता ने जो अपना मत बताया है, जो वेदों के विरुद्ध है, वह स्वीकार करने योग्य नहीं है। गीता अध्याय 12 श्लोक 20 में अपने अज्ञान को छुपाने के लिए फिर कहा है कि परन्तु जो (श्रद्धानाः) साधक श्रद्धा के साथ (मत्यरमाः = मत् परमाः) मेरे से श्रेष्ठ परमेश्वर को (पर्युवासते) पूजते हैं, वे मुझे अधिक प्रिय हैं। जैसा कि प्रारम्भ में वर्णन है कि गीता अध्याय 5 श्लोक 14 से 16, 20, 24, 25, 26 में भी प्रमाण है कि गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य प्रभु के विषय में बताया

है। गीता अध्याय 5 श्लोक 14 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि (प्रभु) परमात्मा किसी मनुष्य के न तो कर्तापन की, न कर्मक, न कर्मफल संयोग की उत्पत्ति करता है, किन्तु सर्व प्राणी अपने स्वभाववश कर्म करते हैं।

गीता अध्याय 5 श्लोक 15 :- (विभुः) सर्वव्यापी अर्थात् वासुदेव जिसका गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 में वर्णन है। कहा है कि सर्व प्राणियों की उत्पत्ति अन्न से होती है, अन्न वर्षा से उत्पन्न होता है, वर्षा धार्मिक अनुष्ठानों अर्थात् यज्ञों से होती है। यज्ञ शास्त्रानुकूल धार्मिक कर्मों से उत्पन्न होते हैं। धार्मिक कर्म तो ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष से उत्पन्न होते हैं। ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष को (अक्षरः सम् उद्घ भवम्) अविनाशी परमात्मा अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म से उत्पन्न हुआ जान। इससे सिद्ध होता है कि (सर्वगतम् ब्रह्म) सर्वव्यापी परमात्मा अर्थात् "विभुः" सर्वव्यापी परमेश्वर न किसी के पाप और न शुभ कर्म को ही ग्रहण करता है। उसी से सर्व (जन्तवः) जीव-जन्तु तथा मनुष्य मोहित हो रहे हैं।

गीता अध्याय 5 श्लोक 16 तथा 17 को पढ़ने से स्पष्ट हो जाएगा कि गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमेश्वर के विषय में बताया है। इसी प्रकार गीता अध्याय 5 श्लोक 20, 24, 25, 26 को गीता में अन्य अनुवादकों द्वारा किए सरलार्थ से समझा जा सकता है।

इसी प्रकार गीता अध्याय 6 श्लोक 7 में स्पष्ट "परमात्मा" शब्द मूल पाठ में लिखा है जो गीता ज्ञान दाता से अन्य "परमात्मा" का प्रमाण है क्योंकि गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि श्लोक 16 में वर्णित दो पुरुषों, क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष से अन्य कोई उत्तम पुरुष अर्थात् पुरुषोत्तम है जिसे (परमात्मा इति उदाहृत) परमात्मा कहा जाता है। वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है, वह अविनाशी परमात्मा है। इसमें (गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में) भी "परमात्मा" शब्द है। इस प्रकार गीता के अमृत ज्ञान को समझना है, केवल गीता जी के पढ़ने मात्र से कल्याण नहीं है, इस के अमृत ज्ञान को समझकर इसके अनुसार अपनी धार्मिक क्रियाएं करने से तीनों लाभ हैं जो गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में सुख प्राप्ति, सिद्धि-शक्ति प्राप्ति तथा परम गति अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्ति के लिए बताए हैं।

अब पुनः उसी प्रसंग पर चर्चा करते हैं जो प्रश्नकर्ता ने जानना है कि "गीता ज्ञान दाता से अन्य पूर्ण परमात्मा कौन है तथा उसने अपने से अन्य किस परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है?

उत्तर चल रहा है। यह तो स्पष्ट ही हो चुका है कि गीता ज्ञान दाता से अन्य "परम अक्षर ब्रह्म" है। गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में उस परमेश्वर (परम अक्षर पुरुष) की शरण में जाने के लिए कहा है। गीता अध्याय 18 श्लोक 66, गीता अध्याय 8 श्लोक 28, गीता अध्याय 12 श्लोक 6 से 7 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा

को प्राप्त करने के लिए मेरी भक्ति भी की जाती है, जैसे गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में “ओम् (ऊँ) तत् सत्” नाम का जाप परम अक्षर ब्रह्म की प्राप्ति के लिए है। गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में गीता ज्ञान दाता ने अपनी साधना करने का केवल एक “ओम्” (ऊँ) नाम बताया है। पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति के लिए “ऊँ” नाम का जाप भी साधक करता है। इसलिए गीता अध्याय 8 श्लोक 28 में कहा है :- योगी अर्थात् भक्त तत्त्वज्ञान के द्वारा इस रहस्य को जानकर जो वेदों के अनुसार भक्ति करने से, उसी के अनुसार यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान करने से, तप अर्थात् अपने धर्म पर दृढ़ता से लगे रहने से जो शारीरिक, मानसिक कठिनाई झेलनी पड़ती है, उस तप से तथा दान करने से जो पुण्य फल होता है अर्थात् धार्मिक कर्म से भक्ति फल होता है, उसका (अत्येति) उल्लंघन कर जाता है अर्थात् त्याग जाता है, वह (आद्य) सनातन (परम) अन्य = दूसरे (स्थानम्) धाम को प्राप्त होता है।

गीता अध्याय 12 श्लोक 7 से 8 में कहा है कि :- जो साधक (मत्पराः = मत् पराः) मेरे से दूसरे परमात्मा की भक्ति करने वाले सर्वभक्तजन मेरी भक्ति के सर्व भक्ति कर्म मुझको अर्पण करके मुझमें त्याग जाते हैं। जो अनन्य भक्ति उस मेरे से परे अर्थात् दूसरे को भजते हैं।

गीता अध्याय 12 श्लोक 7 में वर्णन है कि हे अर्जुन! मुझमें चित लगाने वाले, मुझे जानने वाले (आवेशित) आवेश के साथ (चेतासाम्) मुझे चेत चुके हैं, मुझे जान चुके हैं। उन भक्तों का मैं शीघ्र ही संसार समुद्र से (सम् उद्भर्ता = समुद्भर्ता) उसी प्रकार उद्धार कर देता हूँ। गीता अध्याय 18 श्लोक 66 में कहा है कि :- सर्वधर्मान् परित्यज्य माम, एकम शरणम् ब्रज ।

अहम् त्वा सर्वं पापेभ्यः मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

अन्य अनुवादकर्ताओं ने जो अनुवाद इस गीता अध्याय 18 श्लोक 66 का किया है, वह इस प्रकार है जो गलत है :- सम्पूर्ण धर्मों को अर्थात् सम्पूर्ण कर्मों को मुझमें त्यागकर तू केवल एक मुझ सर्वशक्तिमान सर्वाधार परमेश्वर की शरण में (ब्रज) आजा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, शोक मत कर।

विवेचन :- जो अनुवाद किया है कि सम्पूर्ण धर्मों को अर्थात् कर्तव्य कर्मों को मुझमें त्यागकर केवल तू एक मुझ सर्व शक्तिमान सर्वाधार परमेश्वर की शरण में आजा, यह गलत है।

विचार करें :- गीता अध्याय 18 श्लोक 46,62, अध्याय 15 श्लोक 1-4 तथा 17 में सर्व शक्तिमान सर्वाधार परमात्मा तो कोई अन्य कहा है, जिसे गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में परम अक्षर ब्रह्म कहा है। यहाँ अनुवादक ने अपनी ओर से महिमा जोड़ी है जो व्यर्थ है। फिर कहा है कि सम्पूर्ण कर्मों को मुझमें त्यागकर मेरी शरण में आजा। यह भी न्याय संगत बात नहीं है। यदि कोई कहे कि सर्व कर्म मुझमें

छोड़ और मेरी शरण में आजा। इससे भी स्पष्ट है कि सर्व धार्मिक कर्मों की भवित्व कमाई को मुझ में छोड़कर अन्य की शरण में जा। वैसे भी "ब्रज" का अर्थ जाना है, आना नहीं किया जा सकता। जैसे अग्रेंजी के शब्द "Go" का अर्थ जाना है, उसका अर्थ आना नहीं किया जाना चाहिए। फिर अन्य प्रमाण गीता अध्याय 2 श्लोक 7 में अर्जुन ने कहा है कि मैं आप का शिष्य हूँ, आप की शरण में हूँ, मुझे उचित शिक्षा दीजिए। फिर गीता अध्याय 4 श्लोक 3 में कहा है कि तू मेरा भक्त तथा सखा है। यहाँ गीता अध्याय 18 श्लोक 66 में यह अनुवाद करना कि मेरी शरण में आजा, बिल्कुल अनुचित है क्योंकि अर्जुन तो पहले ही श्री कृष्ण की शरण था, ऊपर सिद्ध हो चुका है। तत्त्वज्ञान न होने के कारण अनुवादकों ने अर्थों के अनर्थ कर रखे हैं।

गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि उस परमेश्वर की शरण में जा, उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परम शान्ति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा। गीता अध्याय 18 श्लोक 46 में कहा कि "जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्रणियों की उत्पत्ति हुई है और जिससे यह समस्त जगत् व्याप्त है, उस परमेश्वर की अपने स्वभाविक कर्म करते-करते पूजा करके मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त हो जाता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में स्पष्ट किया है कि श्लोक 16 में कहे दो पुरुषों (क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष) से उत्तम पुरुष तो कोई अन्य ही है जिसे परमात्मा कहा जाता है। वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। वह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है। गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्त्वदर्शी सन्त की प्राप्ति के पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए, जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में नहीं आते। जिस परमेश्वर से संसार रूपी वृक्ष की प्रवृत्ति विस्तार को प्राप्त हुई है, उसी की भवित्व करो।

गीता ज्ञान दाता ने अपनी स्थिति गीता अध्याय 2 श्लोक 17, अध्याय 4 श्लोक 5, अध्याय 10 श्लोक 2 में स्पष्ट कर ही रखी है कि अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, आगे भी होते रहेंगे, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। जिस प्रभु की स्वयं जन्म-मृत्यु होती है तो वह भी अविनाशी नहीं हुआ, उसका उपासक भी जन्मता-मरता रहेगा, वह मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता। गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि जहाँ जाने के पश्चात् पुनः जन्म नहीं होता। वास्तविक अनुवाद इस प्रकार है।

अनुवाद:- ("सर्व धर्मान्") सम्पूर्ण धार्मिक कर्म जो मेरी उपासना के हैं, उनकी भवित्व कमाई है। उन्हें (मम्) मुझको (परित्यज्य) त्यागकर तू (एकम्) उस एक जिसके समान दूसरा नहीं है, अद्वितीय सर्व शक्तिमान परमेश्वर अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की (शरणम्) शरण में (ब्रज) जा। (अहम् त्वा) मैं तुझे (सर्व पापेभ्यः)

सम्पूर्ण पापों से (मोक्षियिष्यामि) मुक्त कर दूँगा, (मा शुचः) शोक मत कर। (गीता अध्याय 18 श्लोक 66) गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जो मन्त्र मेरी उपासना के हैं, उन्हें मुझको त्यागकर तू केवल उस एक अर्थात् जिसके समान कोई अन्य शक्ति न हो, अद्वितीय सर्व शक्तिमान परमेश्वर अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की शरण में जा, मैं तुझे सर्व पापों से मुक्त कर दूँगा, शोक मत कर। (गीता अध्याय 18 श्लोक 66)

विश्लेषण :- गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में गीता ज्ञान दाता ने संकेत किया है कि उस (ब्राह्मणः) सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की भवित का “ऊँ तत् सत्” यह तीन मन्त्र का जाप है। इसी का जाप करने का निर्देश है। फिर गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में अपनी उपासना का मन्त्र बताया है कि :- मुझ ब्रह्म की भवित का केवल एक “ओम्” (ऊँ) अक्षर है, जो इसका शरीर त्यागते समय तक उच्चारण करता हुआ शरीर त्यागकर जाता है तो उसको मेरी परम गति (मोक्ष) प्राप्त होती है। “ऊँ” का जाप ब्रह्म का जाप है, इससे ब्रह्मलोक प्राप्त होता है, यही परम गति है जिसे गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अति अनुत्तम अर्थात् अश्रेष्ठ कहा है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्म लोक तक जितने भी लोक हैं, उनमें गए हुए साधक पुनरावृति में हैं अर्थात् ब्रह्म लोक तक गए साधक पुनः जन्म-मृत्यु में रहते हैं, इसलिए उपरोक्त (गीता अध्याय 18 श्लोक 46,62, अध्याय 15 श्लोक 4 तथा 17) किसी समर्थ परमेश्वर की शरण में जाने के लिए कहा है जो “ऊँ तत् सत्” नाम का जाप (गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में तीन मन्त्र ऊँ तत् सत्) है, इसमें जो “ऊँ” नाम है, वह ब्रह्म का जाप है। इसी को गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में क्षर पुरुष कहा है तथा दूसरा जो अक्षर पुरुष कहा है उसका जाप “तत्” मन्त्र का है, यह सांकेतिक है तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि “उत्तम पुरुषः तु अन्यः” पुरुषोत्तम अर्थात् सर्वश्रेष्ठ सर्व शक्तिमान पुरुष तो क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष से अन्य ही है। उसका मन्त्र “सत्” है जो सांकेतिक है। उस परमेश्वर अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म जिसको सन्त भाषा में सत्य पुरुष कहते हैं, के उस परमपद अर्थात् सनातन परम धाम जिसे सन्त भाषा में “सत्यलोक” कहते हैं, मैं जाने के लिए अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करने के लिए गीता अध्याय 17 श्लोक 23 वाले “ऊँ तत् सत्” मन्त्र का जाप करना होता है। अन्य कोई नाम जाप पूर्ण मोक्ष का नहीं है। “तत्-सत्” ये दोनों अन्य मन्त्र हैं जो उपदेश लेने वाले को उपदेश के समय ही सार्वजनिक किए जाते हैं। “ऊँ” नाम का जाप ब्रह्म = क्षर पुरुष का है, गीता ज्ञान दाता का है। इसकी उपासना “ऊँ” नाम के जाप से होती है। “ऊँ” नाम के जाप की कमाई अर्थात् धार्मिक कर्म ब्रह्म को त्यागने होते हैं। हम पहले बिना तत्त्वज्ञान के “ऊँ” नाम के जाप की कमाई ब्रह्म लोक में जाकर समाप्त कर देते थे, पाप शेष रह जाते

थे। उनको नरक में तथा 84 लाख प्रकार के प्राणियों के शरीर में कष्ट उठाकर भोगा करते थे। अब हम "ऊँ" नाम के जाप का भक्ति धन ब्रह्म को त्याग देंगे, इसका फल ब्रह्म लोक में नहीं भोगेंगे, जिसके प्रतिफल में यह ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष हमारे सर्व पापों को समाप्त कर देगा। इस गीता अध्याय 18 श्लोक 66 का यह भावार्थ है। फिर हम "तत्" मन्त्र के जाप की कमाई अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म (गीता ज्ञान दाता से दूसरा ब्रह्म) को त्याग देंगे। उसका 7 शंख ब्रह्माण्ड का क्षेत्र है जिसको पार करके सनातन परम धाम (सत्यलोक) में जाने का किराया देना होता है। वह "तत्" मन्त्र के जाप की कमाई से पूरा हो जाता है। फिर "सत्" मन्त्र जो सत्य पुरुष (परम अक्षर ब्रह्म) का जाप है, इसकी कमाई लेकर हम परमेश्वर के उस परमपद में अर्थात् सनातन परम धाम (सत्य लोक) को प्राप्त हो जाएंगे, जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर संसार में कभी नहीं आते, परमशान्ति अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त होता है। यह सम्पूर्ण भक्ति साधना मेरे (सन्त रामपाल दास) के पास है, आओ और अपना कल्याण कराओ।

यह है यथार्थ गीता के अध्याय 18 श्लोक 66 का अनुवाद। इसलिए कहा है "गीता तेरा ज्ञान अमृत"। उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता से अन्य पूर्ण परमात्मा है। उसी की शरण में जाने के लिए गीता ज्ञान दाता ने (गीता अध्याय 18 श्लोक 62, 66) में कहा है। जिस अनमोल गीता ज्ञान को ठीक से न समझकर उल्टा अर्थ किया है, गीता ज्ञान देने वाला अपनी ही शरण में आने को कह रहा है।

जैसे किसी व्यक्ति का कार्य मुख्यमन्त्री के अधिकार में है और वह मन्त्री के पास खड़ा है, मन्त्री से विनय कर रहा है कि यह कार्य कर दीजिए। मन्त्री बुद्धिमान होता है, वह भ्रमित नहीं करता। वह कहेगा कि यदि आप को यह कार्य कराना है तो आप मुख्यमन्त्री के पास जाएं, उनकी कृपा से ही आपका कार्य हो सकता है। उस मन्त्री ने एक पत्र लिखकर दे दिया। उपरोक्त कि आप उस मुख्यमन्त्री के पास जाइए, उसी की कृपा से आपका यह कार्य सम्भव है। कोई व्यक्ति उसका अर्थ करे कि मन्त्री जी अपने पास आने को ही कह रहा है तो वह गलत अर्थ कर रहा है, मन्त्री के पास तो वह व्यक्ति खड़ा ही है। इसी प्रकार गीता के अमृत ज्ञान को न समझकर "अड़ंगा" अनुवाद करके पाठकों को अज्ञानी सन्तों ने भ्रमित किया है और जन्म-मरण के चक्र में स्वयं भी गिरे हैं तथा अपने भोले अनुयाईयों को भी जन्म-मरण के चक्र में डाले हुए हैं जो उन अज्ञानियों को पूर्ण विद्वान गीता मनीषि माने बैठे हैं। गीता का ज्ञान किसने कहा था, यह पूर्व के प्रश्न-उत्तर में स्पष्ट हो चुका है, पढ़ें प्रश्न 1 का उत्तर :-

प्रश्न 26 : परमात्मा साकार है या निराकार?

उत्तर: परमात्मा साकार है, नर स्वरूप है अर्थात् मनुष्य जैसे आकार का है।

प्रश्न 27 : अव्यक्त का अर्थ निराकार होता है?

उत्तर : नहीं, अव्यक्त का अर्थ साकार होता है। उदाहरण के लिए जैसा सूर्य के सामने बादल छा जाते हैं, उस समय सूर्य अव्यक्त होता है। हमें भले ही दिखाई नहीं देता, परन्तु सूर्य अव्यक्त है, साकार है। जो प्रभु हमारे को सामान्य साधना से दिखाई नहीं देते, वे अव्यक्त कहे जाते हैं।

जैसे गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में गीता ज्ञान दाता ने अपने आपको अव्यक्त कहा है क्योंकि वह श्री कृष्ण में प्रवेश करके बोल रहा था। जब व्यक्त हुआ तो विराट रूप दिखाया था। यह पहला अव्यक्त प्रभु हुआ जो क्षर पुरुष कहलाता है। जिसे काल भी कहते हैं। गीता अध्याय 8 श्लोक 17 से 19 तक दूसरा अव्यक्त अक्षर पुरुष है। गीता अध्याय 8 श्लोक 20 में कहा है कि इस अव्यक्त अर्थात् अक्षर पुरुष से दूसरा सनातन अव्यक्त परमेश्वर अर्थात् परम अक्षर पुरुष है। इस प्रकार ये तीनों साकार(नराकार) प्रभु हैं। अव्यक्त का अर्थ निराकार नहीं होता। क्षर पुरुष (ब्रह्म) ने प्रतिज्ञा कर रखी है कि मैं कभी भी अपने वास्तविक रूप में किसी को भी दर्शन नहीं दूँगा।

प्रमाण : गीता अध्याय 11 श्लोक 47-48 में जिसमें कहा है कि हे अर्जुन! यह मेरा विराट वाला रूप आपने देखा, यह मेरा रूप आपके अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा, मैंने तेरे पर अनुग्रह करके दिखाया है।

गीता अध्याय 11 श्लोक 48 में कहा है कि यह मेरा स्वरूप न तो वेदों में वर्णित विधि से, न जप से, न तप से, न यज्ञ आदि से देखा जा सकता। इससे सिद्ध हुआ कि क्षर पुरुष (गीता ज्ञान दाता) को किसी भी ऋषि-महर्षि व साधक ने नहीं देखा। जिस कारण से इसे निराकार मान बैठे। सूक्ष्म वेद (तत्त्व ज्ञान) में कहा है “खोजत—खोजत थाकिया, अन्त में कहा बैचून। (निराकार) न गुरु पूरा न साधना, सत्य हो रहे जूनमं—जून॥ (जन्म-मरण) अब गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में गीता ज्ञान दाता ने स्पष्ट कर ही दिया है कि मैं अपनी योग माया से छिपा रहता हूँ। किसी के समक्ष नहीं आता, मैं अव्यक्त हूँ। छिपा है तो साकार है। अक्षर पुरुष भी अव्यक्त है, यह ऊपर प्रमाणित हो चुका है। इस प्रभु की यहाँ कोई भूमिका नहीं है। यह अपने 7 शंख ब्रह्माण्डों तक सीमित है। इसलिए इसको कोई नहीं देख सका।

❖ परम अक्षर पुरुष :- इस प्रभु की सर्व ब्रह्माण्डों में भूमिका है। यह सत्यलोक में रहते हैं जो पृथ्वी से 16 शंख कोस (एक कोस लगभग 3 किमी. का होता है) दूर है। इसकी प्राप्ति की साधना वेदों (चारों वेदों) में वर्णित नहीं है। जिस कारण से इस प्रभु को कोई नहीं देख सका। जब यह प्रभु (परम अक्षर ब्रह्म) पृथ्वी पर सशरीर प्रकट होता है तो कोई इन्हें पहचान नहीं पाता। परमात्मा कहते भी हैं कि:-

“हम ही अलख अल्लाह हैं, कुतुब—गोस और पीर।

गरीब दास खालिक धनी, हमरा नाम कबीर।।।”

हम पूर्ण परमात्मा हैं, हम ही पीर अर्थात् सत्य ज्ञान देने वाले सत्गुरु हैं। सर्व सृष्टि का मालिक भी मैं ही हूँ, मेरा नाम कबीर है। परन्तु सर्व साधकों, ऋषियों-महर्षियों ने यही दृढ़ कर रखा होता है कि परमात्मा तो निराकार है। वह देखा नहीं जा सकता। यह पृथ्वी पर विचरने वाला जुलाहा (धाणक) कबीर एक कवि कैसे परम अक्षर ब्रह्म हो सकता है।

उसका समाधान इस प्रकार है :-

विश्व में कोई भी परमात्मा चाहने वाला बुद्धिमान व्यक्ति चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) को गलत नहीं मानता। वर्तमान में आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द को वेदों का पूर्ण विद्वान् माना जाता रहा है। इनका भी यह कहना है कि “परमात्मा निराकार” है। आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द वेदों के ज्ञान को सत्य मानते हैं। इन्होंने स्वयं ही वेदों का हिन्दी अनुवाद किया है। जिसमें स्पष्ट लिखा है कि परमात्मा ऊपर के लोक में रहता है। वहाँ से गति करके (चल कर सशरीर) पृथ्वी पर आता है। अच्छी आत्माओं को मिलता है, उनको यथार्थ भक्ति का ज्ञान सुनाता है। परमात्मा तत्त्वज्ञान अपने मुख कमल से उच्चारण करके लोकोक्तियों, साखियों, शब्दों, दोहों तथा चौपाईयों के रूप में पदों द्वारा बोलता है। जिस कारण से प्रसिद्ध कवि की उपाधि भी प्राप्त करता है। कवियों की तरह आचरण करता हुआ पृथ्वी के ऊपर विचरण करता रहता है। भक्ति के गुप्त मन्त्रों का आविष्कार करके साधकों को बताता है। भक्ति करने के लिए प्रेरणा करता है।

प्रमाण देखें वेदों के निम्न मन्त्रों की फोटोकापियाँ इसी पुस्तक के पृष्ठ 101 पर।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मन्त्र 26-27, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मन्त्र 1-2, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16-20, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मन्त्र 2, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 20 मन्त्र 1 और भी अनेकों वेद मन्त्रों में उपरोक्त प्रमाण है कि परमात्मा मनुष्य जैसा नराकार है। श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में भी प्रमाण है। गीता ज्ञान दाता ने बताया कि हे अर्जुन! परम अक्षर ब्रह्म अपने मुख कमल से तत्त्वज्ञान बोलकर बताता है, उस सच्चिदानन्द घन ब्रह्म की वाणी में यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों की जानकारी विस्तार से कही गई है। उसको जानकर सर्व पापों से मुक्त हो जाएगा। फिर गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि उस ज्ञान को तू तत्त्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ। उनको दण्डवत् प्रणाम करके विनयपूर्वक प्रश्न करने से वे तत्त्वदर्शी सन्त तुझे तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

यह प्रमाण आप को बताए और विशेष बात यह है कि गीता चारों वेदों का सारांश है। इसमें सांकेतिक ज्ञान अधिक है। यह भी स्पष्ट हुआ कि तत्त्वज्ञान गीता ज्ञान से भी भिन्न है। वह केवल तत्त्वदर्शी संत ही जानते हैं जिनको परम अक्षर ब्रह्म स्वयं आकर धरती पर मिलते हैं।

प्रश्न 28 : किन-किन पुण्यात्मा महात्माओं को परमात्मा मिले हैं?

उत्तर : परमात्मा चारों युगों में प्रकट होकर ज्ञान सुनाते हैं। 1. सतयुग में “सत्यसुकृत” नाम से, 2. त्रेता युग में “मुनीन्द्र” नाम से, 3. द्वापर युग में “करुणामय” नाम से, 4. कलयुग में “कबीर” नाम से परमेश्वर प्रकट हुए हैं। सूक्ष्म वेद में कहा है :-

सतयुग में सतसुकृत कह टेरा, त्रेता नाम मुनिन्द्र मेरा ॥

द्वापर में करुणामय कहाया, कलयुग नाम कबीर धराया ॥

“किस-किसको मिला परमात्मा”

कलयुग में परमेश्वर जिन-जिन महान आत्माओं को मिले, उनको तत्त्वज्ञान बताया, उनका मैं संक्षिप्त वर्णन करता हूँ:-

“सन्त धर्मदास जी से प्रथम बार परमेश्वर कबीर जी का साक्षात्कार”

1. श्री धर्मदास जी बाँधवगढ़ (मध्य प्रदेश) के रहने वाले बहुत धनी व्यक्ति थे। उनको भक्ति की प्रेरणा बचपन से ही थी। जिस कारण से एक रुपदास नाम के सन्त को गुरु धारण कर रखा था। हिन्दू धर्म में जन्म होने के कारण सन्त रुपदास जी श्री धर्मदास जी को राम कृष्ण, विष्णु तथा शंकर जी की भक्ति करने को कहते थे। एकादशी का व्रत, तीर्थों पर भ्रमण करना, श्राद्ध कर्म, पिण्डोदक क्रिया सब करने की राय दे रखी थी। गुरु रुपदास जी द्वारा बताई सर्व साधना श्री धर्मदास जी पूरी आस्था के साथ किया करते थे। गुरु रुपदास जी की आज्ञा लेकर धर्मदास जी मथुरा नगरी में तीर्थ-दर्शन तथा स्नान करने तथा गिरीराज (गोवर्धन) पर्वत की परिक्रमा करने के लिए गए थे। परम अक्षर ब्रह्म स्वयं मथुरा में प्रकट हुए। एक जिन्दा महात्मा की वेशभूषा में धर्मदास जी को मिले। श्री धर्मदास जी ने उस तीर्थ तालाब में स्नान किया जिसमें श्री कृष्ण जी बाल्यकाल में स्नान किया करते थे। फिर उसी जल से एक लोटा भरकर लाये। भगवान श्री कृष्ण जी की पीतल की मूर्ति (सालिग्राम) के चरणों पर डालकर दूसरे बर्तन में डालकर चरणामृत बनाकर पीया। फिर सालिग्राम को स्नान कराकर अपना कर्मकाण्ड पूरा किया। फिर एक स्थान को लीपकर अर्थात् गारा तथा गाय का गोबर मिलाकर कुछ भूमि पर पलस्तर करके उस पर स्वच्छ कपड़ा बिछाकर श्रीमद्भगवत् गीता का पाठ करने बैठे। यह सर्व क्रिया जब धर्मदास जी कर रहे

थे। परमात्मा जिन्दा भेष में थोड़ी दूरी पर बैठे देख रहे थे। धर्मदास जी भी देख रहे थे कि एक मुसलमान सन्त मेरी भक्ति क्रियाओं को बहुत ध्यानपूर्वक देख रहा है, लगता है इसको हम हिन्दुओं की साधना मन भा गई है। इसलिए श्रीमद्भगवत् गीता का पाठ कुछ ऊँचे स्वर में करने लगा तथा हिन्दी का अनुवाद भी पढ़ने लगा। परमेश्वर उठकर धर्मदास जी के निकट आकर बैठ गए। धर्मदास जी को अपना अनुमान सत्य लगा कि वास्तव में इस जिन्दा वेशधारी बाबा को हमारे धर्म का भक्ति मार्ग अच्छा लग रहा है। इसलिए उस दिन गीता के कई अध्याय पढ़े तथा उनका अर्थ भी सुनाया। जब धर्मदास जी अपना दैनिक भक्ति कर्म कर चुका, तब परमात्मा ने कहा कि है महात्मा जी, आप का शुभ नाम क्या है? कौन जाति से हैं। आप जी कहाँ के निवासी हैं? किस धर्म-पंथ से जुड़े हैं? कृपया बताने का कष्ट करें। मुझे आपका ज्ञान बहुत अच्छा लगा, मुझे भी कुछ भक्ति ज्ञान सुनाईंए। आप की अति कृपा होंगी।

धर्मदास जी ने उत्तर दिया :- मेरा नाम धर्मदास है, मैं बांधवगढ़ गाँव का रहने वाला वैश्य कुल से हूँ। मैं वैष्णव पंथ से दीक्षित हूँ, हिन्दू धर्म में जन्मा हूँ। मैंने पूरे निश्चय के साथ तथा अच्छी तरह ज्ञान समझकर वैष्णव पंथ से दीक्षा ली है। मेरे गुरुदेव श्री रुपदास जी हैं। आध्यात्म ज्ञान से मैं परिपूर्ण हूँ। अन्य किसी की बातों में आने वाला मैं नहीं हूँ। राम-कृष्ण जो श्री विष्णु जी के ही अवतार हुए हैं तथा भगवान शंकर की पूजा करता हूँ, एकादशी का व्रत रखता हूँ। तीर्थों में जाता हूँ, वहाँ दान करता हूँ। शालिग्राम की पूजा नित्य करता हूँ। यह पवित्र पुस्तक श्रीमद्भगवत् गीता है, इसका नित्य पाठ करता हूँ। मैं अपने पूर्वजों का श्रद्धा भी करता हूँ जो स्वर्गवासी हो चुके हैं। पिण्डदान भी करता हूँ। मैं कोई जीव हिंसा नहीं करता, माँस, मदिरा, तम्बाखू सेवन नहीं करता।

प्रश्न :- परमेश्वर कबीर जी ने पूछा कि आप जिस पुस्तक को पढ़ रहे थे, इसका नाम क्या है?

उत्तर :- धर्मदास जी ने बताया कि यह श्रीमद्भगवत गीता है। हम शुद्ध को निकट भी नहीं आने देते, शुद्ध रहते हैं।

प्रश्न 29 :- (कबीर जी जिन्दा रूप में) आप क्या नाम-जाप करते हो?

उत्तर :- (धर्मदास जी का) हम हरे कृष्ण, कृष्ण-कृष्ण हरे-हरे, ओम् नमः शिवाय, ओम् भगवते वासुदेवाय नमः, राधे-राधे श्याम मिलादे, गायत्री मन्त्र का जाप 108 बार प्रतिदिन करता हूँ। विष्णु सहस्रनाम का जाप भी करता हूँ।

प्रश्न 30 :- (जिन्दा बाबा का) हे महात्मा धर्मदास! गीता का ज्ञान किसने दिया?

उत्तर : (धर्मदास का) भगवान श्री कृष्ण जी ने, यही श्री विष्णु जी हैं।

प्रश्न 31 : (जिन्दा बाबा रूप में परमात्मा का) :- आप जी के पूज्य देव श्री कृष्ण अर्थात् श्री विष्णु हैं। उनका बताया भक्ति ज्ञान गीता शास्त्र है।

एक किसान को वृद्धावस्था में पुत्र प्राप्त हुआ। किसान ने विचार किया कि जब तक पुत्र कृषि करने योग्य होगा, तब तक मेरी मृत्यु हो जाएगी। इसलिए उसने कृषि करने का तरीका अपना अनुभव एक बही (रजिस्टर) में लिख दिया। अपने पुत्र से कहा कि बेटा जब आप युवा हो जाओ तो मेरे इस रजिस्टर में लिखे अनुभव को बास-2 पढ़ना। इसके अनुसार फसल बोना। कुछ दिन पश्चात् पिता की मृत्यु हो गई, पुत्र प्रतिदिन अपने पिता के अनुभव का पाठ करने लगा। परन्तु फसल का बीज व बिजाई, सिंचाई उस अनुभव के विपरीत करता था। तो क्या वह पुत्र अपने कृषि के कार्य में सफलता प्राप्त करेगा?

उत्तर : (धर्मदास का) : इस प्रकार तो पुत्र निर्धन हो जाएगा। उसको तो पिता के लिखे अनुभव के अनुसार प्रत्येक कार्य करना चाहिए। वह तो मूर्ख पुत्र है।

प्रश्न 32 : (बाबा जिन्दा रूप में भगवान जी का) हे धर्मदास जी! गीता शास्त्र आप के परमपिता भगवान कृष्ण उर्फ विष्णु जी का अनुभव तथा आपको आदेश है कि इस गीता शास्त्र में लिखे मेरे अनुभव को पढ़कर इसके अनुसार भक्ति करोगे तो मोक्ष प्राप्त करोगे। क्या आप जी गीता में लिखे श्री कृष्ण जी के आदेशानुसार भक्ति कर रहे हो? क्या गीता में वे मन्त्र जाप करने के लिए लिखा है जो आप जी के गुरुजी ने आप जी को जाप करने के लिए दिए हैं? (हरे राम-हरे राम, राम-राम हरे-हरे, हरे कृष्ण-हरे कृष्ण, कृष्ण-कृष्ण हरे-हरे, ओम नमः शिवाय, ओम भगवते वासुदेवाय नमः, राधे-राधे श्याम मिलादे, गायत्री मन्त्र तथा विष्णु सहस्रनाम) क्या गीता जी में एकादशी का व्रत करने तथा श्राद्ध कर्म करने, पिण्डोदक क्रिया करने का आदेश है?

उत्तर :- (धर्मदास जी का) नहीं है।

प्रश्न 33 :- (परमेश्वर जी का) फिर आप जी तो उस किसान के पुत्र वाला ही कार्य कर रहे हो जो पिता की आज्ञा की अवहेलना करके मनमानी विधि से गलत बीज गलत समय पर फसल बीजकर मूर्खता का प्रमाण दे रहा है। जिसे आपने मूर्ख कहा है। क्या आप जी उस किसान के मूर्ख पुत्र से कम हैं?

धर्मदास जी बोले : हे जिन्दा! आप मुसलमान फकीर हैं। इसलिए हमारे हिन्दू धर्म की भक्ति क्रिया व मन्त्रों को गलत कह रहे हो।

उत्तर : (कबीर जी का जिन्दा रूप में) हे स्वामी धर्मदास जी! मैं कुछ नहीं कह रहा, आपके धर्मग्रन्थ कह रहे हैं कि आप के धर्म के धर्मगुरु आप जी को शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करा रहे हैं जो आपकी गीता के अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी कहा है कि हे अर्जुन! जो भक्ति शास्त्र विधि को त्यागकर मनमाना आचरण कर रहा है अर्थात् मनमाने मन्त्र जाप कर रहा है, मनमाने श्राद्ध कर्म व पिण्डोदक कर्म व व्रत आदि कर रहा है, उसको न तो कोई सिद्धि प्राप्त हो सकती, न सुख ही प्राप्त होगा और न गति अर्थात् मुक्ति मिलेगी, इसलिए

व्यर्थ है। गीता अध्याय 16 श्लोक 24 में कहा है कि इससे तेरे लिए कर्तव्य अर्थात् जो भक्ति कर्म करने चाहिए तथा अकर्तव्य (जो भक्ति कर्म न करने चाहिए) की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण हैं। उन शास्त्रों में बताए भक्ति कर्म को करने से ही लाभ होगा।

धर्मदास जी : हे जिन्दा! तू अपनी जुबान बन्द करले, मुझसे और नहीं सुना जाता। जिन्दा रूप में प्रकट परमेश्वर ने कहा, हे वैष्णव महात्मा धर्मदास जी! सत्य इतनी कड़वी होती है जितना नीम, परन्तु रोगी को कड़वी औषधि न चाहते हुए भी सेवन करनी चाहिए। उसी में उसका हित है। यदि आप नाराज होते हो तो मैं चला। इतना कहकर परमात्मा (जिन्दा रूप धारी) अन्तर्धान हो गए। धर्मदास को बहुत आश्चर्य हुआ तथा सोचने लगा कि यह कोई सामान्य सन्त नहीं था। यह पूर्ण विद्वान लगता है। मुसलमान होकर हिन्दू शास्त्रों का पूर्ण ज्ञान है। यह कोई देव हो सकता है। धर्मदास जी अन्दर से मान रहे थे कि मैं गीता शास्त्र के विरुद्ध साधना कर रहा हूँ। परन्तु अभिमानवश यही सही मान रहे थे। जब परमात्मा अन्तर्धान हो गए तो पूर्ण रूप से टूट गए कि मेरी भक्ति गीता के विरुद्ध है। मैं भगवान की आज्ञा की अवहेलना कर रहा हूँ। मेरे गुरु श्री रूपदास जी को भी वास्तविक भक्ति विधि का ज्ञान नहीं है। अब तो इस भक्ति को करना, न करना बराबर है, व्यर्थ है। बहुत दुखी मन से इधर-उधर देखने लगा तथा अन्दर से हृदय से पुकार करने लगा कि मैं कैसा नासमझ हूँ। सर्व सत्य देखकर भी एक परमात्मा तुल्य महात्मा को अपनी नासमझी तथा हठ के कारण खो दिया। हे परमात्मा! एक बार वही सन्त फिर से मिले तो मैं अपना हठ छोड़कर नम्र भाव से सर्वज्ञान समझूँगा। दिन में कई बार हृदय से पुकार करके रात्रि में सो गया। सारी रात्रि करवट लेता रहा। सोचता रहा हे परमात्मा! यह क्या हुआ। सर्व साधना शास्त्रविरुद्ध कर रहा हूँ। मेरी आँखें खोल दी उस फरिस्ते ने। मेरी आयु 60 वर्ष हो चुकी है। अब पता नहीं वह देव (जिन्दा रूपी) पुनः मिलेगा कि नहीं। प्रातः काल वक्त से उठा। पहले खाना बनाने लगा। उस दिन भक्ति की कोई क्रिया नहीं की। पहले दिन जंगल से कुछ लकड़ियाँ तोड़कर रखी थी। उनको चूल्हे में जलाकर भोजन बनाने लगा। एक लकड़ी मोटी थी। वह बीचो-बीच थोथी थी। उसमें अनेकों चीटियाँ थीं। जब वह लकड़ी जलते-जलते छोटी रह गई तब उसका पिछला हिस्सा धर्मदास जी को दिखाई दिया तो देखा उस लकड़ी के अन्तिम भाग में कुछ तरल पानी-सा जल रहा है। चीटियाँ निकलने की कोशिश कर रही थी, वे उस तरल पदार्थ में गिरकर जल रही थी। कुछ अगले हिस्से में अग्नि से जलकर मर रही थी। धर्मदास जी ने विचार किया। यह लकड़ी बहुत जल चुकी है, इसमें अनेकों चीटियाँ जलकर भष्म हो गई हैं। उसी समय अग्नि बुझा दी। विचार करने लगा कि इस पापयुक्त भोजन को मैं नहीं खाऊँगा। किसी

साधु सन्त को खिलाकर मैं उपवास रखूँगा। इससे मेरे पाप कम हो जाएंगे। यह विचार करके सर्व भोजन एक थाल में रखकर साधु की खोज में चल पड़ा। परमेश्वर कबीर जी ने अन्य वेशभूषा बनाई जो हिन्दू सन्त की होती है। एक वृक्ष के नीचे बैठ गए। धर्मदास जी ने साधु को देखा। उनके सामने भोजन का थाल रखकर कहा कि हे महात्मा जी! भोजन खाओ। साधु रूप में परमात्मा ने कहा कि लाओ धर्मदास! भूख लगी है। अपने नाम से सम्बोधन सुनकर धर्मदास को आश्चर्य तो हुआ परंतु अधिक ध्यान नहीं दिया। साधु रूप में विराजमान परमात्मा ने अपने लोटे से कुछ जल हाथ में लिया तथा कुछ वाणी अपने मुख से उच्चारण करके भोजन पर जल छिड़क दिया। सर्वभोजन की चींटियाँ बन गई। चींटियों से थाली काली हो गई। चींटियाँ अपने अण्डों को मुख में लेकर थाली से बाहर निकलने की कोशिश करने लगी। परमात्मा भी उसी जिन्दा महात्मा के रूप में हो गए। तब कहा कि हे धर्मदास वैष्णव संत! आप बता रहे थे कि हम कोई जीव हिंसा नहीं करते, आपसे तो कसाई भी कम हिंसक है। आपने तो करोड़ों जीवों की हिंसा कर दी। धर्मदास जी उसी समय साधु के चरणों में गिर गया तथा पूर्व दिन हुई गलती की क्षमा माँगी तथा प्रार्थना कि की हे प्रभु! मुझ अज्ञानी को क्षमा करो। मैं कहीं का नहीं रहा क्योंकि पहले वाली साधना पूर्ण रूप से शास्त्र विरुद्ध है। उसे करने का कोई लाभ नहीं, यह आप जी ने गीता से ही प्रमाणित कर दिया। शास्त्र अनुकूल साधना किस से मिले, यह आप ही बता सकते हैं। मैं आप से पूर्ण आध्यात्मिक ज्ञान सुनने का इच्छुक हूँ। कृपया मुझ किंकर पर दया करके मुझे वह ज्ञान सुनाएं जिससे मेरा मोक्ष हो सके।

“व्रत करना गीता अनुसार कैसा है”

परमेश्वर (जिन्दा साधु के रूप में) बोले कि हे धर्मदास! आप एकादशी का व्रत करते हो। श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 6 श्लोक 16 में मना किया है कि हे अर्जुन! यह योग (भक्ति) न तो अधिक खाने वाले का और न ही बिल्कुल न खाने वाले का अर्थात् यह भक्ति न ही व्रत रखने वाले, न अधिक सोने वाले की तथा न अधिक जागने वाले की सफल होती है। इस श्लोक में व्रत रखना पूर्ण रूप से मना है। देख अपनी गीता खोलकर, धर्मदास जी को गीता के श्लोक याद भी थे क्योंकि प्रतिदिन पाठ किया करता था। फिर भी सोचा कि कहीं जिन्दा सन्त नाराज न हो जाए, इसलिए गीता खोलकर अध्याय 6 श्लोक 16 पढ़ा तथा स्वीकारा कि आपने मेरी आँखें खोल दी जिन्दा। आप तो परमात्मा के स्वरूप लगते हो।

“श्राद्ध-पिण्डदान गीता अनुसार कैसा है?”

आप श्राद्ध व पिण्डदान करते हो। गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में स्पष्ट किया है कि भूत पूजने वाले भूतों को प्राप्त होंगे। श्राद्ध करना, पिण्डदान करना यह भूत पूजा है, यह व्यर्थ साधना है।

“श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रुची ऋषि का मत”

मार्कण्डेय पुराण में “रौच्य ऋषि के जन्म” की कथा आती है। एक रुची ऋषि था। वह ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदों अनुसार साधना करता था। विवाह नहीं कराया था। रुची ऋषि के पिता, दादा, परदादा तथा तीसरे दादा सब पितर (भूत) योनि में भूखे-प्यासे भटक रहे थे। एक दिन उन चारों ने रुची ऋषि को दर्शन दिए तथा कहा कि आप ने विवाह क्यों नहीं किया। विवाह करके हमारे श्राद्ध करना। रुची ऋषि ने कहा कि हे पितामहो! वेद में इस श्राद्ध आदि कर्म को अविद्या कहा है, मूर्खों का कार्य कहा है। फिर आप मुझे इस कर्म को करने को क्यों कह रहे हो?

पितरों ने कहा कि यह बात सत्य है कि श्राद्ध आदि कर्म को वेदों में अविद्या अर्थात् मूर्खों का कर्म ही कहा है। इससे सिद्ध हुआ कि वेदों में तथा वेदों के ही संक्षिप्त रूप गीता में श्राद्ध-पिण्डोदक आदि भूत पूजा के कर्म को निषेध बताया है, नहीं करना चाहिए। उन मूर्ख ऋषियों ने अपने पुत्र को भी श्राद्ध करने के लिए विवश किया। उसने विवाह कराया, उससे रौच्य ऋषि का जन्म हुआ, बेटा भी पाप का भागी बना लिया।

❖ जैसे गायत्री मन्त्र करते हो, वह यजुर्वेद के अध्याय 36 का मन्त्र 3 है जिसके आगे “ओम्” अक्षर नहीं है। यदि “ओम्” अक्षर को इस वेद मन्त्र के साथ जोड़ा जाता है तो परमात्मा का अपमान है क्योंकि ओम् (ऊँ) अक्षर तो ब्रह्म का जाप है। यजुर्वेद अध्याय 36 मन्त्र 3 में परम अक्षर ब्रह्म की महिमा है। यदि कोई अज्ञानी व्यक्ति पत्र तो लिख रहा है प्रधानमन्त्री को और लिख रहा है सेवा में ‘मुख्यमन्त्री जी’ तो वह प्रधानमन्त्री का अपमान कर रहा है। फिर बात रही इस मन्त्र यजुर्वेद के अध्याय 36 मन्त्र 3 को बार-बार जाप करने की, यह क्रिया मोक्षदायक नहीं है। मन्त्र का मूल पाठ इस प्रकार है :-

भूर्भवः स्वः तत् सवितु वरेणीयम् भूगो देवस्य धीमहि धीयो योनः प्रयोदयात्।

अनुवाद :- (भूः) स्वयंभू परमात्मा है (भवः) सर्व को वचन से प्रकट करने वाला है (स्वः) सुख धाम सुखदाई है। (तत्) वह (सवितुः) सर्व का जनक परमात्मा है। (वरेणीयम्) सर्व साधकों को वरण करने योग्य अर्थात् अच्छी आत्माओं के भक्ति योग्य है। (भूगो) तेजोमय अर्थात् प्रकाशमान (देवस्य) परमात्मा का (धीमहि) उच्च विचार रखते हुए अर्थात् बड़ी समझ से (धी यो नः

प्रचोदयात) जो बुद्धिमानों के समान विवेचन करता है, वह विवेकशील व्यक्ति मोक्ष का अधिकारी बनता है।

भावार्थ : परमात्मा स्वयंभू है, सर्व का सृजनहार है। उस उज्जवल परमेश्वर की भक्ति श्रेष्ठ भक्तों को यह विचार रखते हुए करनी चाहिए कि जो पुरुषोत्तम (सर्व श्रेष्ठ परमात्मा) है, जो सर्व प्रभुओं से श्रेष्ठ है, उसकी भक्ति करें जो सुखधाम अर्थात् सर्वसुख का दाता है।

उपरोक्त मन्त्र का यह हिन्दी अनुवाद व भावार्थ है। इस की संस्कृत या हिन्दी अनुवाद को पढ़ते रहने से मोक्ष नहीं है क्योंकि यह तो परमात्मा की महिमा का एक अंश है अर्थात् हजारों वेद मन्त्रों में से एक मन्त्र है। यदि कोई चारों वेदों को भी पढ़ता रहे तो भी मोक्ष नहीं। मोक्ष होगा वेदों में वर्णित ज्ञान के अनुसार भक्ति क्रिया करने से। उदाहरण :- विद्युत की महिमा है कि बिजली अंधेरे को उजाले में बदल देती है, बिजली ट्यूबवेल चलाती है जिससे फसल की सिंचाई होती है। बिजली ऑटा पीसती है, आदि-आदि बहुत से गुण बिजली के लिखे हैं। यदि कोई व्यक्ति प्रतिदिन बिजली के गुणों का पाठ करता रहे तो उसे बिजली का लाभ प्राप्त नहीं होगा। लाभ प्राप्त होगा बिजली का कनेक्शन लेने से। कनेक्शन कैसे प्राप्त हो सकता है? उस विधि को प्राप्त करके फिर बिजली के गुणों का लाभ प्राप्त हो सकता है। केवल बिजली की महिमा को गाने मात्र से नहीं।

इसी प्रकार वेद मन्त्रों में अर्थात् श्रीमद् भगवत् गीता (जो चारों वेदों का सार है) में मोक्ष प्राप्ति के लिए जो ज्ञान कहा है, उसके अनुसार आचरण करने से मोक्ष लाभ अर्थात् परमेश्वर प्राप्ति होती है।

प्रश्न 34 :- (धर्मदास जी का) हे जिन्दा! मुझे तो यह भी ज्ञान नहीं है कि गीता में मोक्ष प्राप्ति का ज्ञान कौन-सा है? मैंने गीता को पढ़ा है, समझा नहीं। हमारे धर्मगुरुओं ने जो भक्ति बताई, उसे श्रद्धा से करते आ रहे हैं। वर्षों से चला आ रहा भक्ति का शास्त्र विरुद्ध प्रचलन सर्वभक्तों को सत्य लग रहा है। क्या गीता में लिखी भक्ति विधि पर्याप्त है?

उत्तर (जिन्दा बाबा का) :- गीता में केवल ब्रह्म स्तर की भक्तिविधि लिखी है। पूर्ण मोक्ष के लिए परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करनी होगी। गीता में पूर्ण विधि नहीं है, केवल संकेत है। जैसे गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में कहा है कि “सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की प्राप्ति के लिए “ऊँ, तत्, सत्” इस मन्त्र का निर्देश है। इसके स्मरण की विधि तीन प्रकार से है। इस मन्त्र में ऊँ तो क्षर पुरुष अर्थात् ब्रह्म का मन्त्र तो स्पष्ट है परन्तु “पर ब्रह्म” (अक्षर पुरुष) का मन्त्र “तत्” है जो सांकेतिक है, उपदेशी को तत्त्वदर्शी सन्त बताएगा। “सत्” यह मन्त्र पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर ब्रह्म) का है जो सांकेतिक है, इसको भी तत्त्वदर्शी सन्त उपदेशी को बताता है। तत्त्वदर्शी सन्त के पास पूर्ण मोक्ष

मार्ग होता है। जो न वेदों में है, न गीता में तथा न पुराणों या अन्य उपनिषदों में है। तत्त्वज्ञान की सत्यता को प्रमाणित करने के लिए गीता तथा वेद सहयोगी हैं। जो भक्तिविधि वेद-गीता में है, वही तत्त्वज्ञान में भी है। सूक्ष्मवेद अर्थात् तत्त्वज्ञान में वेदों तथा गीता वाली भक्तिविधि तो है ही, इससे भिन्न पूर्ण मोक्ष वाली साधना भी है। उदाहरण के लिए दसरीं कक्षा का पाठ्यक्रम गलत नहीं है, परंतु अधूरा है। B.A., M.A. वाले सलेबस में दसरीं वाला ज्ञान भी होता है, उससे आगे का भी होता है। यही दशा वेदों-गीता तथा सूक्ष्मवेद के ज्ञान में अंतर की जानें।

प्रश्न 35 :- (धर्मदास जी का) गीता तथा वेदों में यह कहाँ प्रमाण है कि पूर्ण मोक्ष मार्ग तत्त्वदर्शी सन्त के पास ही होता है, वेदों व गीता में नहीं है। हे प्रभु जिन्दा! मेरी शंका का समाधान कीजिए, आप का ज्ञान हृदय को छूता है, सत्य भी है परन्तु विश्वास तो प्रत्यक्ष प्रमाण देखकर ही होता है।

उत्तर :- (जिन्दा परमेश्वर जी का) गीता अध्याय 4 श्लोक 25 से 30 में गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि हे अर्जुन! सर्व साधक अपनी साधना व भक्ति को पापनाश करने वाली अर्थात् मोक्षदायक जान कर ही करते हैं। यदि उनको यह निश्चय न हो कि तुम जो भक्ति कर रहे हो, यह शास्त्रानुकूल नहीं है तो वे साधना ही छोड़ देते। जैसे कई साधक देवताओं की पूजा रूपी यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान करके ही पूजा मानते हैं। अन्य ब्रह्म तक ही पूजा करते हैं। कई केवल अग्नि में घृत आदि डालकर अनुष्ठान करते हैं जिसको हवन कहते हैं। (गीता अध्याय 4 श्लोक 25)

❖ अन्य योगीजन अर्थात् भक्तजन आँख, कान, मुँह बन्द करके क्रियाएं करते हैं। उसी में अपना मानव जीवन हवन अर्थात् समाप्त करते हैं। (गीता अध्याय 4 श्लोक 26)

❖ अन्य योगीजन अर्थात् भक्तजन श्वांसों को आना-जाना ध्यान से देखकर भक्ति साधना करते हैं जिससे वे आत्मसंयम साधना रूपी अग्नि में अपना जीवन हवन अर्थात् मानव जीवन पूरा करते हैं, जिसे ज्ञान दीप मानते हैं अर्थात् अपनी साधना को श्रेष्ठ मानते हैं। (गीता अध्याय 4 श्लोक 27)

❖ कुछ अन्य साधक द्रव्य अर्थात् धन से होने वाले यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान करते हैं जैसे भोजन भण्डारा करना, कम्बल-कपड़े बॉटना, धर्मशाला, प्याऊ बनवाना, यह यज्ञ करते हैं। कुछ तपस्या करते हैं, कुछ योगासन करते हैं। इसी को परमात्मा प्राप्ति की साधना मानते हैं। कितने ही साधक अहिंसा आदि तीक्ष्ण व्रत करते हैं। जैसे मुख पर पट्टी बाँधकर नंगे पैरों चलना, कई दिन उपवास रखना आदि-आदि। अन्य योगीजन अर्थात् साधक स्वाध्याय अर्थात् प्रतिदिन किसी वेद जैसे ग्रन्थ से कुछ मन्त्रों (श्लोकों) का पाठ करना, यह ज्ञान यज्ञ कहलाती है, करते रहते हैं। इन्हीं क्रियाओं को मोक्षदायक मानते हैं। (गीता

अध्याय 4 श्लोक 28)

❖ दूसरे योगीजन अर्थात् भक्तजन प्राण वायु (श्वांस) अपान वायु में पहुँचाने वाली क्रिया करते हैं। अन्य योगीजन इसके विपरीत अपान वायु को प्राण वायु में पहुँचाने वाली क्रिया करते हैं। कितने ही साधक अल्पाहारी रहते हैं। कुछ योगिक क्रियाएं करते हैं। जैसे प्राणायाम में लीन साधक पान-अपान की गति को रोककर श्वांस कम लेते हैं। इसी में अपना मानव जीवन हवन अर्थात् समर्पित कर देते हैं। ये सभी उपरोक्त (अध्याय 4 श्लोक 25 से 30 तक) साधक अपने-अपने यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों को करके मानते हैं कि हम पाप का नाश करने वाली साधना भवित कर रहे हैं। (गीता अध्याय 4 श्लोक 30)

❖ यदि साधक की साधना शास्त्रानुकूल हो तो हे कुरुश्रेष्ठ अर्जुन! इस यज्ञ से बचे हुए अमृत भोग को खाने वाले साधक सनातन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को प्राप्त होते हैं और यज्ञ अर्थात् शास्त्रानुकूल साधना न करने वाले पुरुष के लिए तो यह पृथ्वीलोक भी सुखदायक नहीं होता, फिर परलोक कैसे सुखदायक हो सकता है अर्थात् उस शास्त्रानुकूल साधक को कोई लाभ नहीं होता। यही प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी है। (गीता अध्याय 4 श्लोक 31)

❖ गीता ज्ञान दाता ने ऊपर के 25 से 30 तक श्लोकों में स्पष्ट किया है कि जो साधक जैसी साधना कर रहा है, उसे मोक्षदायक तथा सत्य मानकर कर रहा है। परन्तु गीता अध्याय 4 के ही श्लोक 32 में बताया कि “यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों का यथार्थ ज्ञान परम अक्षर ब्रह्म स्वयं अपने मुख कमल से बोलकर ज्ञान देता है, वह सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की वाणी कही गई है। उसे तत्त्वज्ञान भी कहते हैं। उसी को पाँचवां वेद (सूक्ष्म वेद) भी कहते हैं। उस तत्त्वज्ञान में भवित्विधि विस्तार के साथ बताई गई है। उसको जानकर साधक सर्व पापों से मुक्त हो जाता है अर्थात् पूर्ण मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।

नोट : गीता अध्याय 4 श्लोक 32 के अनुवाद में सर्व अनुवादकों ने एक जैसी ही गलती कर रखी है। “ब्रह्मणः” शब्द का अर्थ वेद कर रखा है। “ब्रह्मणः मुखे” का अर्थ वेद की वाणी में” किया है जो गलत है। उन्हीं अनुवादकों ने गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में “ब्रह्मणः” का अर्थ सच्चिदानन्द घन ब्रह्म किया है जो उचित है। इसलिए गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में भी “ब्रह्मणः” का अर्थ सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म करना उचित है।

❖ गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि उस ज्ञान को (जो परमात्मा अपने मुख कमल से बोलकर सुनाता है जो तत्त्वज्ञान है उसको) तू तत्त्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ। उनको दण्डवत प्रणाम करने से, कपट छोड़कर नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से तत्त्वदर्शी सन्त तुझे तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

❖ इससे यह भी सिद्ध हुआ कि गीता वाला ज्ञान पूर्ण नहीं है, परन्तु गलत भी नहीं है। गीता ज्ञानदाता को भी पूर्ण मोक्षमार्ग का ज्ञान नहीं है क्योंकि तत्त्वज्ञान की जानकारी गीता ज्ञानदाता को नहीं है जो परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) ने अपने मुख से बोला होता है। उसको तत्त्वदर्शी सन्तों से जानने के लिए कहा है।

❖ यही प्रमाण यजुर्वेद अध्याय 4 मन्त्र 10 में भी है। कहा है कि परम अक्षर ब्रह्म को कोई तो 'सम्भवात्' अर्थात् राम-कृष्ण की तरह उत्पन्न होने वाला साकार कहते हैं। कोई 'असम्भवात्' अर्थात् परमात्मा उत्पन्न नहीं होता, वह निराकार है। परमेश्वर उत्पन्न होता है या नहीं उत्पन्न होता, वास्तव में कैसा है? यह ज्ञान 'धीराणाम्' तत्त्वदर्शी सन्त बताते हैं, उनसे सुनो।

प्रश्न 36 :- (धर्मदास जी का) हे प्रभु! हे जिन्दा! तत्त्वदर्शी सन्त की क्या पहचान है तथा प्रमाणित सद्ग्रन्थों में कहाँ प्रमाण है? आपका ज्ञान आत्मा के आर-पार हो रहा है। गीता का शब्द-शब्द यथार्थ भावार्थ आप जी के मुख कमल से सुनकर युगों की प्यासी आत्मा कुछ तृप्त हो रही है, गदगद हो रही है। उत्तर :- (जिन्दा परमेश्वर जी का) परमेश्वर ने बताया कि पहले तो तत्त्वज्ञान के लक्षण सुन तत्त्वदर्शी सन्त अर्थात् पूर्ण ज्ञानी सत्गुरु के :-

गुरु के लक्षण चार बखाना, प्रथम वेद शास्त्र को ज्ञाना (ज्ञाता)।

दूजे हरि भक्ति मन कर्म बानी, तीसरे समदृष्टि कर जानी।

चौथे वेद विधि सब कर्मा, यह चार गुरु गुण जानो मर्मा।

भावार्थः- जो तत्त्वदर्शी सन्त (पूर्ण सत्गुरु) होगा उसमें चार मुख्य गुण होते हैं:-

1. वह वेदों तथा अन्य सभी ग्रन्थों का पूर्ण ज्ञानी होता है।

2. दूसरे वह परमात्मा की भक्ति मन-कर्म-वचन से स्वयं करता है, केवल वक्ता-वक्ता नहीं होता, उसकी करणी और कथनी में अन्तर नहीं होता।

3. वह सर्व अनुयाईयों को समान दृष्टि से देखता है। ऊँच-नीच का भेद नहीं करता।

4. चौथे वह सर्व भक्तिकर्म वेदों के अनुसार करता तथा कराता है अर्थात् शास्त्रानुकूल भक्ति साधना करता तथा कराता है। यह ऊपर का प्रमाण तो सूक्ष्म वेद में है जो परमेश्वर ने अपने मुखकमल से बोला है। अब आप जी को श्रीमद्भगवत् गीता में प्रमाण दिखाते हैं कि तत्त्वदर्शी सन्त की क्या पहचान बताई है?

श्रीमद्भागवत गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में स्पष्ट है:-

ऊर्ध्व मूलम् अधः शाखम् अश्वत्थम् प्राहुः अव्ययम्।

छन्दासि यस्य प्रणानि, यः तम् वेद सः वेदवित् ॥

अनुवाद : ऊपर को मूल (जड़) वाला, नीचे को तीनों गुण रूपी शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रूपी पीपल का वृक्ष जानो, इसे अविनाशी कहते हैं क्योंकि उत्पत्ति-प्रलय चक्र सदा चलता रहता है जिस कारण से इसे अविनाशी

कहा है। इस संसार रुपी वृक्ष के पत्ते आदि छन्द हैं अर्थात् भाग (Parts) हैं। (य तम् वेद) जो इस संसार रुपी वृक्ष के सर्वभागों को तत्त्व से जानता है, (सः) वह (वेदवित्) वेद के तात्पर्य को जानने वाला है अर्थात् वह तत्त्वदर्शी सन्त है। जैसा कि गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है कि परम अक्षर ब्रह्म स्वयं पृथ्वी पर प्रकट होकर अपने मुख कमल से तत्त्वज्ञान विस्तार से बोलते हैं। परमेश्वर ने अपनी वाणी में अर्थात् तत्त्वज्ञान में बताया है:-

कबीर, अक्षर पुरुष एक पेड़ है, क्षर पुरुष वाकि डार।

तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार ॥

भावार्थ :- जमीन से बाहर जो वृक्ष का हिस्सा है, उसे तना कहते हैं। तना तो जानों अक्षर पुरुष, तने से कई मोटी डार निकलती हैं। उनमें से एक मोटी डार जानों क्षर पुरुष। उस डार से तीन शाखा निकलती हैं, उनको जानों तीनों देवता (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव-शंकर जी) और इन शाखाओं को पत्ते लगते हैं, उन पत्तों को संसार जानो।

गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 में सांकेतिक विवरण है। तत्त्वज्ञान में विस्तार से कहा गया है। पहले गीता ज्ञान के आधार से ही जानते हैं।

गीता अध्याय 15 श्लोक 2 में कहते हैं कि संसार रुपी वृक्ष की तीनों गुण (रजगुण ब्रह्माजी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शंकर जी) रुपी शाखाएं हैं। ये ऊपर (स्वर्ग लोक में) तथा नीचे (पाताल लोक) फैली हुई हैं।

नोट :- रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर हैं। देखें प्रमाण प्रश्न नं. 7 में। तीनों शाखाएं ऊपर-नीचे फैली हैं, का तात्पर्य है कि गीता का ज्ञान पृथ्वी लोक पर बोला जा रहा था। तीनों देवता की सत्ता तीन लोकों में है। 1. पृथ्वी लोक, 2. स्वर्ग लोक तथा 3. पाताल लोक। ये तीन मन्त्री हैं, एक-एक विभाग के मन्त्री हैं। रजगुण विभाग के श्री ब्रह्मा जी, सतगुण विभाग के श्री विष्णु जी तथा तमगुण विभाग के श्री शिव जी।

गीता अध्याय 15 श्लोक 3 में कहा है कि हे अर्जुन! इस संसार रुपी वृक्ष का स्वरूप जैसे यहाँ (विचार काल में) अर्थात् तेरे और मेरे गीता के ज्ञान की चर्चा में नहीं पाया जाता अर्थात् मैं नहीं बता पाऊँगा क्योंकि इसके आदि और अन्त का मुझे अच्छी तरह ज्ञान नहीं है। इसलिए इस अतिदृढ़ मूल वाले अर्थात् जिस संसार रुपी वृक्ष की मूल है, वह परमात्मा भी अविनाशी है तथा उनका स्थान सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अकह लोक, ये चार ऊपर के लोक भी अविनाशी हैं। इन चारों में एक ही परमात्मा भिन्न-भिन्न रूप बनाकर सिंहासन पर विराजमान हैं। इसलिए इसको “सुदृढमूलम्” अति दृढ़ मूल वाला कहा है, इसे तत्त्वज्ञान रुपी शस्त्र से काटकर अर्थात् तत्त्वदर्शी सन्त से तत्त्वज्ञान समझकर।

फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि उसके पश्चात् परमेश्वर के

उस परमपद अर्थात् सत्यलोक की खोज करनी चाहिए, जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। जिस परमेश्वर से संसार रुपी वृक्ष की प्रवृत्ति विस्तार को प्राप्त हुई है अर्थात् जिस परमेश्वर ने सर्व संसार की रचना की है। उसी परमेश्वर की भक्ति को पहले तत्त्वदर्शी सन्त से समझो! गीता ज्ञान दाता अपनी भक्ति को भी मना कर रहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन प्रभु बताये हैं। क्षर पुरुष, अक्षर पुरुष ये दोनों नाशवान हैं। तीसरा परम अक्षर पुरुष है जो संसार रुपी वृक्ष का मूल (जड़) है। वह वास्तव में अविनाशी है। जड़ (मूल) से ही वृक्ष के सर्व भागों “तना, डार-शाखाओं तथा पत्तों” को आहार प्राप्त होता है। वह परम अक्षर पुरुष ही तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। उसी (मूल) मालिक की पूजा करनी चाहिए। इस विवरण में तत्त्वदर्शी सन्त की पहचान तथा गीता ज्ञान दाता की अल्पज्ञता अर्थात् तत्त्वज्ञानहीनता स्पष्ट है।

“जिन्दा बाबा का दूसरी बार अन्तर्धान होना”

(धर्मदास जी ने कहा) :- हे जिन्दा! आप यह क्या कह रहे हो कि श्री विष्णु जी तीनों लोकों में केवल एक विभाग के मन्त्री हैं। आप गलत कह रहे हो। श्री विष्णुजी तो अखिल ब्रह्माण्ड के स्वामी हैं। ये ही श्री ब्रह्मा जी रूप में उत्पत्ति करते हैं। विष्णु रूप होकर संसार का पालन करते हैं तथा शिव रूप होकर संहार करते हैं। ये तो कुल के मालिक हैं, यदि फिर से आपने श्री विष्णु जी को अपमानित किया तो ठीक बात नहीं रहेगी।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा :-

मूर्ख के समझावते, ज्ञान गाँठि का जाय।

कोयला होत न उजला, भावें सौ मन साबुन लाय॥

इतना कहकर परमेश्वर जिन्दा रूपधारी अन्तर्धान हो गए। दूसरी बार परमेश्वर को खोने के पश्चात् धर्मदास बहुत उदास हो गए। भगवान विष्णु में इतनी अटूट आस्था थी कि आँखों प्रमाण देखकर भी झूठ को त्यागने को तैयार नहीं थे।

कबीर, जान बूझ साची तजै, करे झूठ से नेह।

ताकि संगति हे प्रभु, स्वपन में भी ना देह॥

कुछ देर के पश्चात् धर्मदास की बुद्धि से काल का साया हटा और अपनी गलती पर विचार किया कि सब प्रमाण गीता से ही प्रत्यक्ष किए गए थे। जिन्दा बाबा ने अपनी ओर से तो कुछ नहीं कहा। मैं कितना अभाग हूँ कि मैंने अपने हठी व्यवहार से देव स्वरूप तत्त्वदर्शी सन्त को खो दिया। अब तो वे देव नहीं मिलेंगे। मेरा जीवन व्यर्थ जाएगा। यह विचार करके धर्मदास सिंहर उठा अर्थात्

भय से काँपने लगा। खाना भी कम खाने लगा, उदास रहने लगा तथा मन-मन में अर्जी लगाने लगा है देव! हे जिन्दा बाबा! एक बार दर्शन दे दो। भविष्य में ऐसी गलती कभी नहीं करूँगा। मैं आपसे करबद्ध प्रार्थना करता हूँ। मुझ मूर्ख की ओच्छी-गन्दी बातों पर ध्यान न दो। मुझे फिर मिलो गुसाँई। आप का ज्ञान सत्य, आप सत्य, आप जी का एक-एक वचन अमृत है। कृपया दर्शन दो नहीं तो अधिक दिन मेरा जीवन नहीं रहेगा।

तीसरे दिन परमेश्वर कबीर जी एक दरिया के किनारे वृक्ष के नीचे बैठे थे। आसपास कुछ आवारा गायें भी उसी वृक्ष के नीचे बैठी जुगाली कर रही थीं। कुछ दरिया के किनारे घास चर रही थी। धर्मदास की दृष्टि दरिया के किनारे पिताम्बर पहने बैठे सन्त पर पड़ी, देखा आस-पास गायें चर रही हैं। ऐसा लगा जैसे साक्षात् भगवान् कृष्ण अपने लोक से आकर बैठे हों। धर्मदास उत्सुकता से सन्त के पास गया तथा देखा यह तो कोई सामान्य सन्त है। फिर भी सोचा चरण स्पर्श करके फिर आगे बढ़ूँगा। धर्मदास जी ने जब चरणों का स्पर्श किया, मस्तक चरणों पर रखा तो ऐसा लगा कि जैसे रुई को छुआ हो। फिर चरणों को हाथों से दबा-दबाकर देखा तो उनमें कहीं भी हड्डी नहीं थी। उपर चेहरे की ओर देखा तो वही बाबा जिन्दा उसी पहले वाली वेशभूषा में बैठा था। धर्मदास जी ने चरणों को दृढ़ करके पकड़ लिया कि कहीं फिर से न चले जाएं और अपनी गलती की क्षमा याचना की। कहा कि हे जिन्दा! आप तो तत्त्वदर्शी सन्त हो। मैं एक भ्रमित जिज्ञासु हूँ। जब तक मेरी शंकाओं का समाधान नहीं होगा, तब तक मेरा अज्ञान नाश कैसे होगा? आप तो महाकृपालु हैं। मुझ किंकर पर दया करो। मेरा अज्ञान हटाओ प्रभु।

प्रश्न 37 (धर्मदास जी का) :- हे जिन्दा! यदि श्री विष्णु जी पूर्ण परमात्मा नहीं है तो कौन है पूर्ण परमात्मा, कृप्या गीता से प्रमाण देना?

उत्तर :- कृप्या पढ़ें प्रश्न नं. 15 का उत्तर जो जिन्दा रूपधारी परमेश्वर ने धर्मदास को पुनः सुनाया।

प्रश्न 38 :- धर्मदास जी ने पूछा कि क्या श्री विष्णु जी और शंकर जी की पूजा करनी चाहिए?

उत्तर :- (जिन्दा बाबा का) :- नहीं करनी चाहिए।

प्रश्न 39 (धर्मदास जी का) :- कृप्या गीता से प्रमाणित कीजिए।

उत्तर :- कृप्या पढ़ें प्रश्न नं. 17 का उत्तर। धर्मदास को प्रभु ने सुनाया, गीता शास्त्र से प्रत्यक्ष प्रमाण देखकर धर्मदास की आँखें खुली की खुली रह गईं। जैसे किसी को सदमा लग गया हो। झूठ कह नहीं सकता, स्वीकार करने से लिए अभी वक्त लगेगा।

जिन्दा रूपधारी परमेश्वर ने धर्मदास को सम्बोधित करते हुए कहा कि हे

वैष्णव महात्मा! कौन-सी दुनिया में चले गये, लौट आओ। मानो धर्मदास नींद से जागा हो। सावधान होकर कहा, कुछ नहीं-कुछ नहीं। कृप्या और ज्ञान सुनाओ ताकि मेरा भ्रम दूर हो सके। परमेश्वर कबीर जी ने सृष्टि की रचना धर्मदास जी को सुनाई, कृप्या पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 128 पर।

सृष्टि रचना सुनकर धर्मदास जी को ऐसा लगा मानो पागल हो जाऊँगा क्योंकि जो ज्ञान आजतक हिन्दू धर्मगुरुओं, ऋषियों, महर्षियों-सन्तों से सुना था, वह निराधार तथा अप्रमाणित-सा लग रहा था। जिन्दा बाबा हिन्दू सद्ग्रन्थों से ही प्रमाणित कर रहे थे। शंका का कोई स्थान नहीं था। मन-मन में सोच रहा था कि कहीं मैं पागल तो नहीं हो जाऊँगा?

प्रश्न 40 :- (धर्मदास जी का) : हे जिन्दा! क्या हिन्दू धर्म के गुरुओं को शास्त्रों का ज्ञान नहीं है?

उत्तर :- (जिन्दा महात्मा का) :- क्या यह बताने की भी आवश्यकता शेष है?

प्रश्न 41 :- (धर्मदास जी का) : यह कैसे हो सकता है कि हिन्दू धर्म के किसी सन्त, गुरु, महर्षि को सत्य आध्यात्म ज्ञान नहीं? यह कहकर धर्मदास जी के मन में आया कि किसी महामण्डलेश्वर से ज्ञान पता करना चाहिए। एक रमते फकीर के पास क्या मिलेगा? यह बात मन में सोच ही रहा था कि परमेश्वर जिन्दा जी ने धर्मदास जी के मन का दोष जानकर कहा कि आप अपने महामण्डलेश्वरों से ज्ञान प्राप्त करलो। यह कहकर परमेश्वर तीसरी बार अन्तर्धर्यान हो गए। धर्मदास जी ठगे से रह गए और अपने मन के दोष को जिन्दा महात्मा के मुखकमल से सुनकर बहुत शर्मसार हुए। जब प्रभु अन्तर्धर्यान हो गए तो बहुत व्याकुल हो गया। परन्तु धर्मदास जी को आशा थी कि हमारे महामण्डलेश्वरों के पास तत्त्वज्ञान अवश्य मिलेगा। यदि जिन्दा बाबा (मुसलमान) के ज्ञान को तत्त्वज्ञान मानकर साधना स्वीकार करना तो ऐसा लग रहा है जैसे धर्म परिवर्तन करना हो। यह समाज में निन्दा का कारण बनेगा। इसलिए अपने हिन्दू महात्माओं से तत्त्वज्ञान जानकर श्रेष्ठ शास्त्रानुकूल भवित करनी ही उचित रहेगी। इस बार धर्मदास जी को जिन्दा बाबा का अचानक चला जाना खटका नहीं क्योंकि उसकी गलतफहमी थी कि हिन्दू इतना बड़ा तथा पुरातन धर्म है, क्या कोई भी तत्त्वदर्शी सन्त नहीं मिलेगा? धर्मदास जी एक वैष्णव महामण्डलेश्वर श्री ज्ञानानन्द जी वैष्णव के आश्रम में गया। उस समय श्री ज्ञानानन्द जी का बहुत बोलबाला था। वह स्वामी रामानन्द जी काशी वाले का शिष्य था। परन्तु उस समय स्वामी रामानन्द जी तो परमेश्वर कबीर जी का शिष्य/गुरु बन चुका था। वह अपने ज्ञान को अज्ञान मान चुका था। स्वामी रामानन्द जी ने अपने सर्वऋषि शिष्यों से बोल दिया था कि मेरे द्वारा बताया ज्ञान व्यर्थ है और यह साधना शास्त्रविरुद्ध है। आप सब परमेश्वर कबीर जी से दीक्षा ले लें। परन्तु जाति का अभिमान, शिष्यों में प्रतिष्ठा,

ज्ञान के स्थान पर अज्ञान का भण्डार जीव को सत्य स्वीकार करने नहीं देता ।
कबीर, राज तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह ।

मान बड़ाई ईर्ष्या, दुर्लभ तजना येह ॥

धर्मदास जी ने श्री ज्ञानान्द जी से प्रश्न किया है कि स्वामी जी क्या भगवान विष्णु से भी ऊपर कोई प्रभु है। श्री ज्ञानानन्द जी ने उत्तर दिया कि श्री विष्णु स्वयं परम ब्रह्म परमात्मा है। इनसे ऊपर कौन हो सकता है? श्री कृष्ण जी भी श्री विष्णु जी स्वयं ही थे। उन्होंने ही श्रीमद्भगवत् गीता का ज्ञान दिया। आप को किसने भ्रमित कर दिया? धर्मदास जी पूछता है कि गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा कि तत् ब्रह्म क्या है? गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में भगवान ने कहा है कि वह “परम अक्षर ब्रह्म” है। यह तो भगवान कृष्ण से अन्य प्रभु हुआ। ज्ञानानन्द स्वामी बोला, लगता है कि तेरे को उस काशी वाले जुलाहे का जादू चढ़ा हुआ है। चल-चल अपना काम कर। भगवान कृष्ण से अन्य कोई प्रभु नहीं है। धर्मदास जी को पता चल गया कि इसके पास वह ज्ञान नहीं है जो जिन्दा बाबा ने प्रमाणों सहित बताया है। धर्मदास निराश होकर वहाँ से चल दिया। धर्मदास जी को यह नहीं पता था कि काशी वाला जुलाहा वह बाबा जिन्दा ही है। फिर धर्मदास को पता चला कि एक मोहनगिरी नाम के महामण्डलेश्वर हैं, उनके पास जाकर भगवान की चर्चा करनी शुरू की। पहले एक रुपया दक्षिणा चढ़ाई जिस कारण से मोहनगिरी ने उनको निकट बैठाया और बताया कि भगवान शिव सर्व सृष्टि के रचने वाले हैं। इनसे बढ़कर संसार में कोई प्रभु नहीं है। “ओम् नमः शिवाय” मन्त्र का जाप करो। धर्मदास जी प्रणाम करके चल पड़े। सोचा इनका कितना अच्छा नाम है, ज्ञान धेल्ले (एक पैसे) का नहीं। धर्मदास जी से किसी ने बताया कि एक बहुत बड़ा तपस्वी है। कई वर्षों से खड़ा तप कर रहा है। धर्मदास जी वहाँ गए, वह नाथ पंथ से जुड़ा था। भगवान शिव को समर्थ परमात्मा बताता था। तप करके हठयोग से परमात्मा की प्राप्ति मान रहा था। धर्मदास जी ने विवेक किया कि यदि इतनी घोर कठिन तपस्या से परमात्मा मिलेगा तो हमारे वश से बाहर की बात है। वहाँ से भी आगे चला। पता चला कि एक बहुत बड़ा विद्वान् महात्मा काशी विद्यापीठ से पढ़कर आया है। वेदों का पूर्ण विद्वान् है। धर्मदास जी ने उस महात्मा से पूछा परमात्मा कैसा है? उत्तर मिला-निराकार है। उस निराकार परमात्मा का कोई नाम है? धर्मदास ने पूछा। उत्तर विद्वान् का :- उसका नाम ब्रह्म है। क्या परमात्मा को देखा जा सकता है, धर्मदास जी ने प्रश्न किया? उत्तर मिला परमात्मा निराकार है, उसको कैसे देख सकते हैं। केवल परमात्मा का प्रकाश देखा जा सकता है। प्रश्न:- क्या श्री कृष्ण या विष्णु परमात्मा हैं? उत्तर था कि ये तो सर्गुण देवता हैं, परमात्मा निर्गुण हैं।

गीता और वेद के ज्ञान में क्या अन्तर है? धर्मदास ने प्रश्न किया। ब्राह्मण

का उत्तर था कि गीता चारों वेदों का सारांश है। धर्मदास जी ने पूछा कि भवित्व मन्त्र कौन सा है? उत्तर ब्राह्मण का था कि गायत्री मन्त्र का जाप करो = ओम् भूर्भुवस्वः तत् सवितुः वरेण्यिम् भृगोदेवस्य धीमहि, धीयो यो नः प्रचोदयात्” धर्मदास जी को जिन्दा बाबा ने बताया था कि इस मन्त्र से मोक्ष सम्भव नहीं। धर्मदास जी फिर आगे चला तो पता चला कि सन्त गुफा में रहता है। कई-कई दिन तक गुफा से नहीं निकलता है। उसके पास जाकर प्रश्न किया कि भगवान कैसे मिलता है? उत्तर मिला कि इन्द्रियों पर संयम रखो, इसी से परमात्मा मिल जाता है। नाम जाप से कुछ नहीं होता। खाण्ड (चीनी) कहने से मुँह मीठा नहीं होता। धर्मदास जी को सन्तोष नहीं हुआ। सब सन्तों से ज्ञान चर्चा करके धर्मदास जी को बहुत पश्चाताप् हुआ कि मेरे को उस जिन्दा बाबा पर विश्वास नहीं हुआ कि उसने कहा था किसी भी सन्त महामण्डलेश्वर के पास यथार्थ अध्यात्म ज्ञान नहीं है। किसी भी सन्त महात्मा का ज्ञान प्रमाणित नहीं है। कोई शास्त्र का आधार नहीं है, तब धर्मदास रोने लगा। अपनी अज्ञानता पर पाश्चाताप् करने लगा कि मैं कैसा कलमुँहा हूँ अर्थात् बुरी किस्मत वाला हूँ। मुझे उस परमात्मास्वरूप जिन्दा महात्मा पर विश्वास नहीं आया। अब वह अन्तर्यामी मुझे नहीं मिलेगा क्योंकि मैंने कई बार उनका अपमान कर दिया। अब क्या करूँ, न जीने को मन करता है, आत्महत्या पाप है। बुरी तरह रोने लगा। पछाड़ खाकर अचेत हो गया।

परमात्मा जिन्दा महात्मा के रूप में एक वृक्ष के नीचे बैठ गए। धर्मदास जी सचेत हुआ और हृदय से पुकार की कि हे जिन्दा! एक बार दर्शन दे दो। मैं टूट चुका हूँ। किसी के पास ज्ञान नहीं है। आप की सर्व बातें सत्य हैं। परमात्मा एक बार मुझ अज्ञानी महामूर्ख को क्षमा करो परमेश्वर। आप जिन्दा नहीं परमात्मा हो। आप महाविद्वान हो। आपके ज्ञान का कोई सामना करने वाला नहीं है। मैं जिन्दगी में कभी आप पर अविश्वास नहीं करूँगा। ऐसे विचार कर आगे चला तो देखा एक वृक्ष के नीचे एक साधु बैठा है, कुछ व्यक्ति उसके पास बैठे हैं। धर्मदास जी ने सोचा कि मैं तो उन महामण्डलेश्वरों से मिलकर आया हूँ। जिनके पास कई सैंकड़ों भक्त दर्शनार्थ बैठे रहते हैं। इस छोटे साधु से क्या मिलना? परन्तु अपने आप मन में आया कि कुछ देर विश्राम करना है, यहीं कर लेता हूँ। फिर सोचा कि प्रश्न करता हूँ। पूछा:- हे महात्मा! जी परमात्मा कैसा है? साधु ने उत्तर दिया कि मैं ही परमात्मा हूँ। धर्मदास जी चुप हो गए, सोचा यह तो मजाक कर रहा है। यह तो सन्त भी नहीं है। धीरे-धीरे सर्व व्यक्ति चले गए। जब धर्मदास जी चलने लगे परमात्मा बोले कि हे महात्मा! क्या आपके मण्डलेश्वरों ने नहीं बताया कि परमात्मा कैसा है? धर्मदास जी ने आश्चर्य से देखा कि इस साधु को कैसे पता कि मैं कहाँ-कहाँ भटका हूँ? उसी समय परमात्मा ने वही जिन्दा बाबा वाला रूप बना लिया। धर्मदास जी चरणों में गिरकर बिलख-बिलखकर रोने लगा तथा

कहा कि हे भगवन! किसी के पास ज्ञान नहीं है। मुझ पापी अवगुण हारे को क्षमा करो महाराज! मैंने बड़ी भारी भूल की है। आपने सृष्टि रचना का ज्ञान जो बताया है, उसके सामने सर्व सन्त का ज्ञान ऐसा है जैसे सूरज के सामने दीपक, सब ऊवा-बाई बकते हैं। परमेश्वर ने धर्मदास जी से कहा कि आपने जिन वेदों के पूर्ण विद्वान से प्रश्न किया था कि “परमात्मा कैसा है? उत्तर मिला कि परमात्मा निराकार है। आपने प्रश्न किया था कि क्या परमात्मा देखा जा सकता है? उस अज्ञानी का उत्तर था कि “जब परमात्मा निराकार है तो उसे देखने का प्रश्न ही नहीं है। परमात्मा का प्रकाश देखा जा सकता है।”

विचार करो धर्मदास! यह विचार तो ऐसे व्यक्ति के हैं जैसे किसी नेत्रहीन से कोई प्रश्न करे कि सूर्य कैसा है? उत्तर मिला कि सूर्य निराकार है। फिर प्रश्न किया कि क्या सूर्य को देखा जा सकता है? उत्तर मिले कि सूर्य को नहीं देखा जा सकता, सूर्य का प्रकाश देखा जाता है। उस नेत्रहीन से पूछें कि सूर्य बिना प्रकाश किसका देखा जा सकता है? इसी प्रकार आध्यात्म ज्ञान नेत्रहीन अर्थात् पूर्ण अज्ञानी सन्त ऐसी व्याख्या किया करते हैं कि परमात्मा तो निराकार है, उसका प्रकाश कैसे देखा जा सकता है? परमात्मा का ही तो प्रकाश होगा। धर्मदास जी ने कहा कि हे महात्मा जी! यह विचार तो मेरे दिमाग में भी नहीं आया। आप जी के दिव्य तर्क से मेरी आँखें खुल गईं। जितने भी महामण्डलेश्वर मिले हैं, वे सर्व महाअज्ञानी मिले हैं। हे जिन्दा महात्मा जी! यदि मैं आपके ज्ञान को सुनने के पश्चात् यदि इन मूर्खों से नहीं मिलता तो मेरा भ्रम निवारण कभी नहीं होता, चाहे आप जी कितने ही प्रमाण दिखाते और बताते।

प्रश्न 42 (धर्मदास) :- हे जिन्दा! आप नाराज न होना। मेरे मन में एक शंका है कि क्या भगवान विष्णु जी की भवित अच्छी नहीं?

उत्तर (जिन्दा महात्मा जी का) :- हे धर्मदास! श्रीमद् भगवत् गीता अध्याय 2 श्लोक 46 में प्रमाण है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा हे अर्जुन! बहुत बड़े जलाशय (झील) की प्राप्ति के पश्चात् छोटे जलाशय में व्यक्ति का कितना प्रयोजन रह जाता है। इसी प्रकार पूर्ण ज्ञान और पूर्ण परमात्मा की भवित विद्या व होने वाले लाभ का ज्ञान होने के पश्चात् अन्य ज्ञानों तथा छोटे भगवानों में उतनी ही आस्था रह जाती है जितनी बड़े जलाशय की प्राप्ति के पश्चात् छोटे जलाशय में रह जाती है। छोटे जलाशय का जल अच्छा है, परन्तु पर्याप्त नहीं है। यदि एक वर्ष वर्षा न हो तो छोटे जलाशय का जल सूख जाता है तथा उस पर आश्रित व्यक्ति भी जल के अभाव से कष्ट उठाते हैं, त्राहि-त्राहि मच जाती है। परन्तु बड़े जलाशय (झील) का जल यदि 10 वर्ष भी वर्षा न हो तो भी समाप्त नहीं होता। जिस व्यक्ति को वह बड़ा जलाशय मिल जाएगा तो वह तुरन्त छोटे जलाशय (जोहड़ = तालाब) को छोड़कर बड़े जलाशय के किनारे जा बसेगा।

जिस समय गीता ज्ञान सुनाया गया, उस समय सर्व व्यक्ति तालाबों के जल पर ही आश्रित थे। इसलिए यह उदाहरण दिया था, इसी प्रकार श्री विष्णु सत्तगुण की भवित भले ही अच्छी है, परन्तु पूर्ण मोक्षदायक नहीं है। श्री विष्णु जी भी नाशवान हैं। इनका भी जन्म-मृत्यु होता है। फिर साधक अमर कैसे हो सकता है? इसलिए पूर्ण मोक्ष अर्थात् अमर होने के लिए अमर परमात्मा की ही भवित करनी पड़ेगी।

प्रश्न 43 :- हे जिन्दा महात्मा जी! मैंने आप के ऊपर अविश्वास किया। मैं महापापी हूँ मुझे क्षमा करना।

उत्तर (जिन्दा बाबा जी का) :- हे धर्मदास! मैंने ही आप के मन में यह प्रेरणा की थी। यदि आप उन अपने धर्मगुरुओं की तलाशी न लेते तो आप कभी मेरी बातों पर विश्वास नहीं करते। रह-रहकर तेरे मन को यही बात कचोटती रहती कि ऐसा नहीं हो सकता कि हिन्दू धर्म के किसी महर्षि मण्डलेश्वर व सन्त-महन्त को तत्त्वज्ञान नहीं। अब आप मेरी बातों पर विश्वास करोगे। विचार करो धर्मदास! जब गीता ज्ञान दाता गीता अध्याय 4 श्लोक 32 व 34 में कहता है कि जो ज्ञान परम अक्षर ब्रह्म (परमेश्वर) अपने मुख से सुनाता है, वह तत्त्वज्ञान है। (गीता अध्याय 4 श्लोक 32) उस ज्ञान को तू तत्त्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ। (गीता अध्याय 4 श्लोक 34) इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान देने वाले परमात्मा को ही तत्त्वज्ञान नहीं तो गीता पाठकों व इन प्रभु के उपासकों को ज्ञान कैसे हो सकता है?

गीता अध्याय 2 श्लोक 53 में कहा कि हे अर्जुन! भिन्न-भिन्न प्रकार से भ्रमित करने वाले वचनों से हटकर तेरी बुद्धि एक तत्त्वज्ञान पर स्थिर हो जाएगी, तब तो तू योग (भवित) को प्राप्त होगा। भावार्थ है कि तब तू भक्त बनेगा। इसलिए मैंने धर्मदास तेरे को उन सन्तों-मण्डलेश्वरों के पास जाने के लिए प्रेरित किया था। अब तू योग को प्राप्त होगा। भक्त बन सकेगा।

प्रश्न 44 (धर्मदास जी का) :- क्या पूर्ण मोक्ष के लिए भगवान विष्णु जी तथा भगवान शंकर जी की पूजा को छोड़ना पड़ेगा?

उत्तर (जिन्दा बाबा जी का) :- इन प्रभुओं को नहीं छोड़ना, इनकी पूजा छोड़नी होगी।

प्रश्न 45 (धर्मदास जी का) :- हे जिन्दा! मैं समझा नहीं। इन विष्णु और शंकर प्रभुओं को नहीं छोड़ना और पूजा छोड़नी पड़ेगी। मेरी संकीर्ण बुद्धि है। मैं महाअज्ञानी प्राणी हूँ। कृप्या विस्तार से बताने (समझाने) की कृपा करें।

उत्तर :- (जिन्दा महात्मा जी का) : हे धर्मदास जी! आप इनकी साधना शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण कर रहे हो। जिससे आपजी को लाभ नहीं मिल रहा। इन देवताओं से लाभ लेने के साधना के मन्त्र मेरे पास हैं। जैसे भैंसा है, उसको भैंसा-भैंसा करते रहो, वह आपकी ओर नहीं देखेगा। उसका एक

विशेष मन्त्र हुर्-हुर्, उसको सुनते ही वह तुरंत प्रभावित होता है और आवाज लगाने वाले की ओर खींचा चला आता है। इसी प्रकार इन सर्व आदरणीय देवताओं के निज मन्त्र हैं। जिनसे वे पूर्ण लाभ तथा तुरंत लाभ देते हैं। प्रिय पाठको! वही मन्त्र मेरे पास (संत रामपाल दास) के पास हैं जो परमेश्वर जी ने गुरु जी के माध्यम से मुझे दिए हैं, आओ और प्राप्त करो।

जैसा कि आपको बताया था (प्रश्न नं. 36 के उत्तर में वर्णन किया था) कि यह संसार एक वृक्ष जानो। परम अक्षर पुरुष इसकी जड़ें मानो, अक्षर पुरुष तना जानो, क्षर पुरुष मोटी डार तथा तीनों देवता (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिवजी) इस संसार रूपी वृक्ष की शाखाएं जानों और पात रूप संसार।

यदि आप कहीं से आम का पौधा लेकर आए हो तो गढ़ा खोदकर उसकी जड़ों को उस गढ़े में मिट्टी में दबाओगे और जड़ों की सिंचाई करोगे। तब वह आम का पेड़ बनेगा और उस वृक्ष की शाखाओं को फल लाएंगे। इसलिए वृक्ष की शाखाओं को तोड़ा नहीं जा सकता। परन्तु इनको जड़ के स्थान पर गढ़े में मिट्टी में दबाकर इनकी सिंचाई नहीं की जाती। ठीक इसी प्रकार संसार रूपी वृक्ष की जड़ अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को ईष्ट रूप में प्रतिष्ठित करके पूजा करने से शास्त्रानुकूल साधना होती है जो परम लाभ देने वाली होती है। इस प्रकार किए गए भक्ति कर्मों का फल यही तीनों देवता (संसार वृक्ष की शाखाएं) ही कर्मानुसार प्रदान करते हैं। इसलिए इनकी पूजा छोड़नी होती है। लेकिन इनको छोड़ा (तोड़ा) नहीं जा सकता। यही प्रमाण श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 3 श्लोक 8 से 15 तक में भी है। कहा है कि हे अर्जुन! तू शास्त्रविहित कर्म कर अर्थात् शास्त्रों में जैसे भक्ति करने को कहा है, वैसा भक्ति कार्य कर। यदि घर त्यागकर जंगलों में चला गया अर्थात् तू कर्म सन्यासी हो गया या एक स्थान पर बैठकर हठपूर्वक साधना करने लगेगा तो तेरा शरीर पोषण का निर्वाह भी नहीं होगा। इसलिए कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करते-करते भक्ति कर्म करना श्रेष्ठ है। (गीता अध्याय 3 श्लोक 8)

❖ जो साधक शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करते हैं अर्थात् शास्त्रानुकूल भक्ति कर्मों के अतिरिक्त दूसरे कर्मों में लगा हुआ मनुष्य समुदाय कर्मों के बन्धन में बंधकर जन्म-मरण के चक्र में सदा रहता है। इसलिए हे कुन्तीपुत्र अर्जुन! शास्त्रविरुद्ध भक्ति कर्म जो कर रहा है, उससे आसक्ति रहित होकर शास्त्रानुकूल भक्ति कर्म कर। (गीता अध्याय 3 श्लोक 9)

❖ संसार की रचना करके प्रजापति (कुल के मालिक) ने सर्व प्रथम मनुष्यों की रचना करके साथ-साथ यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों की जानकारी का ज्ञान देते हुए इनसे कहा था कि तुम लोग इस तरह बताए शास्त्रानुकूल कर्मों द्वारा

वृद्धि को प्राप्त होओ। इस प्रकार शास्त्रानुकूल की गई भक्ति तुम लोगों को इच्छित भोग प्राप्त कराने वाली हो। (गीता अध्याय 3 श्लोक 10)

❖ इस प्रकार शास्त्रानुकूल भक्ति द्वारा अर्थात् संसार रूपी वृक्ष की जड़ें (मूल अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म) की सिंचाई अर्थात् पूजा करके देवताओं अर्थात् संसार रूपी वृक्ष की तीनों गुण रूपी शाखाओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिवजी) को उन्नत करो। वे देवता (संसार वृक्ष की शाखा तीनों देवता) आपको कर्मानुसार फल देकर उन्नत करें। इस प्रकार एक-दूसरे से उन्नत करके परम कल्याण अर्थात् पूर्णमोक्ष को प्राप्त हो जाओगे (गीता अध्याय 3 श्लोक 11)

❖ शास्त्रविधि अनुसार किए गए भक्ति कर्मों अर्थात् यज्ञों द्वारा बढ़ाए हुए देवता अर्थात् संसार रूपी वृक्ष की जड़ अर्थात् मूल मालिक (परम अक्षर ब्रह्म) को ईष्ट रूप में प्रतिष्ठित करके भक्ति कर्म से बढ़ी हुई शाखाएं (तीनों देवता) तुम लोगों को बिना माँगे ही कर्मानुसार इच्छित भोग निश्चय ही देते रहेंगे। जैसे आम के पौधे की जड़ की सिंचाई करने से पेड़ बनकर शाखाएं उन्नत हो गई। फिर उन शाखाओं को अपने आप फल लगेंगे। झड़-झड़कर गिरेंगे, व्यक्ति को जो कर्मानुसार धन प्राप्त होता है, वह उपरोक्त विधि से होता है। यदि कोई व्यक्ति उन देवताओं (शाखाओं) द्वारा दिए धन में से पुनः दान-पुण्य नहीं करता अर्थात् जो पुनः शास्त्रानुकूल साधना नहीं करता, केवल अपना ही पेट भरता है, स्वयं ही भोगता रहता है। वह तो परमात्मा का चोर ही है। (गीता अध्याय 3 श्लोक 12)

❖ शास्त्रानुकूल भक्ति की विधि में सर्वप्रथम परमात्मा को भोग लगाया जाता है। भण्डारा करना होता है। पहले परम अक्षर ब्रह्म को ईष्ट रूप में पूजकर भोग लगाकर शेष भोजन को भक्तों में बाँटा जाता है। उस बचे हुए अन्न को सत्संग में उपस्थित अच्छी आत्माएं ही खाती हैं क्योंकि पुण्यात्माएं ही परमात्मा के लिए समय निकालकर धार्मिक अनुष्ठानों में शामिल होते हैं। इसलिए कहा है कि उस यज्ञ से बचे हुए अन्न को खाने वाले सन्तजन सब पापों से मुक्त हो जाते हैं। जो पापी लोग होते हैं, जो तत्त्वदर्शी सन्त के सत्संग में नहीं जाते, उनको ज्ञान नहीं होता। वे पापात्मा अपना शरीर पोषण करने के लिए ही भोजन पकाते हैं, वे तो पाप को ही खाते हैं क्योंकि भोजन खाने से पहले हम भक्त-सन्त सब परम अक्षर ब्रह्म को भोग लगाते हैं। जिस से सारा भोजन पवित्र प्रसाद बन जाता है, जो ऐसा नहीं करते, वे परमात्मा के चोर हैं। भगवान को भोग न लगा हुआ भोजन पाप का भोजन होता है। इसलिए कहा है जो धर्म-कर्म शास्त्रानुकूल नहीं करते, वे पाप के भागी होते हैं। (गीता अध्याय 3 श्लोक 13)

❖ सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं। अन्न वर्षा से होता है। वर्षा यज्ञ अर्थात् शास्त्रानुकूल धार्मिक अनुष्ठान से होती है। यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान

शास्त्रानुकूल कर्मों से होते हैं। (गीता अध्याय 3 श्लोक 14)

❖ कर्म तो ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष से उत्पन्न हुए हैं क्योंकि जहाँ सर्व प्राणी सनातन परम धाम में रहते थे। वहाँ पर बिना कर्म किए सर्व सुख व पदार्थ उपलब्ध थे। यहाँ के सर्व प्राणी अपनी गलती से क्षर पुरुष के साथ आ गए। अब सबको कर्म का फल ही प्राप्त होता है। कर्म करके ही निर्वाह होता है। इसलिए कहा है कि कर्म को ब्रह्म (क्षर पुरुष) से उत्पन्न जान और ब्रह्म को अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न जान। (अधिक जानकारी के लिए पढ़ें सृष्टि रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ नं. 128 पर।)

(नोट : इस श्लोक में “अक्षर” शब्द का अर्थ अविनाशी परमात्मा ठीक है। परन्तु जहाँ क्षर पुरुष, अक्षर पुरुष तथा परम अक्षर पुरुष का वर्णन है, वहाँ अक्षर पुरुष व क्षर पुरुष दोनों नाशवान कहे हैं। वहाँ पर अक्षर का अर्थ वही ठीक है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में वर्णन है, यहाँ ‘अक्षर’ का अर्थ अविनाशी परमात्मा है क्योंकि सृष्टि रचना से स्पष्ट होता है कि ब्रह्म की उत्पत्ति सत्यपुरुष (अविनाशी परमात्मा) ने की थी।) इससे सिद्ध हुआ कि (सर्वगतम् ब्रह्म) अर्थात् जिस परमात्मा की पहुँच सर्व ब्रह्माण्डों में है, जो सर्व का मालिक है, वह परमात्मा सदा ही यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों में प्रतिष्ठित है। भावार्थ है कि परम अक्षर ब्रह्म को ईष्टदेव रूप में प्रतिष्ठित करके धार्मिक अनुष्ठान अर्थात् यज्ञ करने से शास्त्रविधि अनुसार कर्म करने से साधक को भक्ति लाभ मिलता है, जिससे मोक्ष प्राप्त होता है। देखें संसार रूपी पौधे का चित्र इसी पुस्तक के पृष्ठ 77 पर।

देखें यह चित्र पृष्ठ 76 पर, इसमें पौधे की शाखाओं को गढ़े में जमीन में लगाकर दिखाया गया है कि जो तीनों देवों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव) में से किसी की भी पूजा करता है, वह शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण कर रहा है जो गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में अनुचित तथा व्यर्थ बताया है। जिसने सर्वगतम् ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की पूजा नहीं की, उसको ईष्ट रूप में नहीं पूजा, जिस कारण से उस साधक की साधना व्यर्थ है। शाखाओं को सींचने से पौधा नष्ट हो जाता है। अन्य देवताओं की पूजा करना गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15, 20-23 तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 20 से 23 में मना किया हुआ है। (पढ़ें प्रश्न 17 का उत्तर)

“देखें यह चित्र” इसी पुस्तक के पृष्ठ 77 पर सीधा लगाया गया पौधा जो शास्त्रविधि अनुसार साधना है, यही मोक्षदायक है। यही प्रमाण गीता ग्रन्थ में है।

इसलिए हे धर्मदास! श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिवजी को नहीं छोड़ना है। इनकी पूजा ईष्ट रूप में करते हो, वह छोड़नी है। तभी भक्त का पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

गीता अध्याय नं. 15

श्लोक नं. 1 से 4 तथा
श्लोक नं. 16 व 17
का आशय

पूर्ण ब्रह्म कबीर साहेब

शंका
समाधान

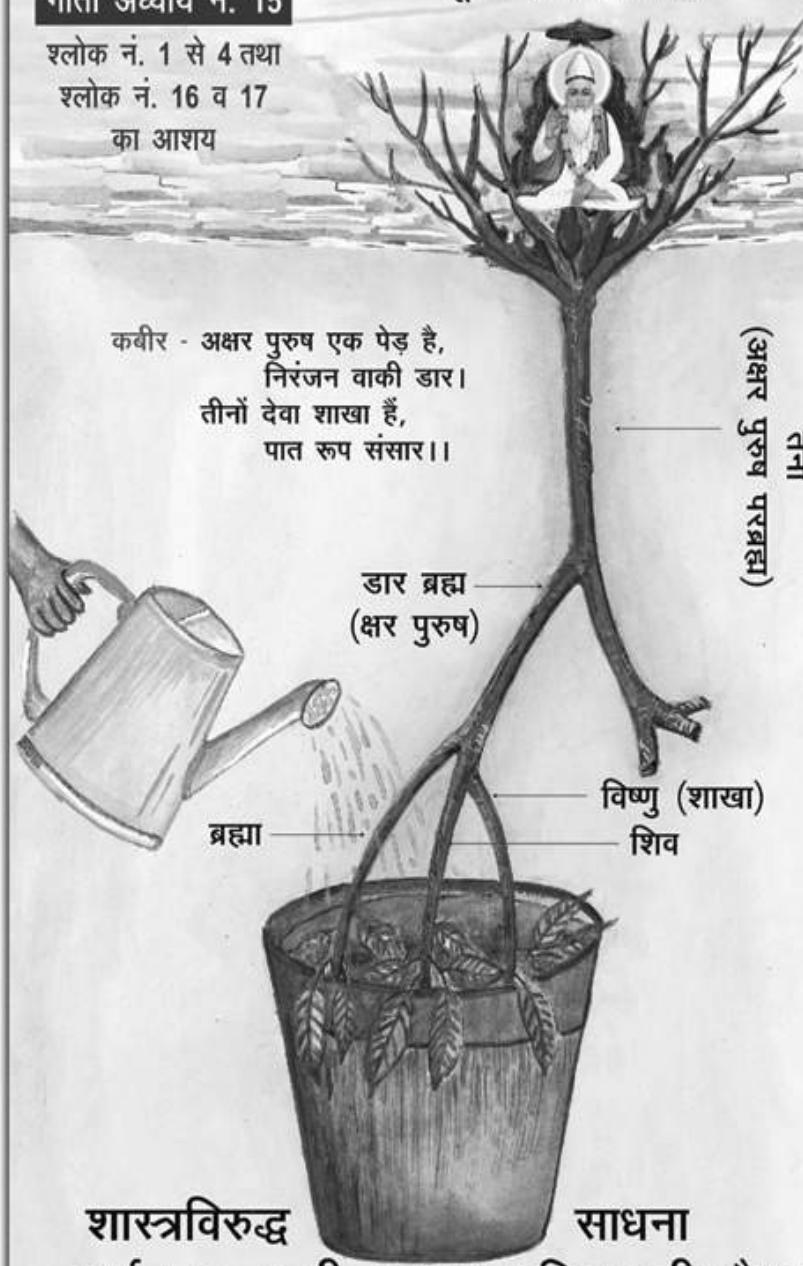
कबीर - अक्षर पुरुष एक पेड़ है,
निरंजन वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं,
पात रूप संसार॥

(अक्षर पुरुष परब्रह्म)

डार ब्रह्म
(क्षर पुरुष)विष्णु (शाखा)
शिव

ब्रह्मा

शास्त्रविरुद्ध साधना
अर्थात् उल्टा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा



गीता अध्याय नं. 15

श्लोक नं. 1 से 4 तथा

श्लोक नं. 16 व 17

का आशय

कबीर-अक्षर पुरुष एक पेड़ है,
निरंजन वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं,
पात रूप संसार॥

तना

(अक्षर पुरुष परब्रह्म)

कबीर साहेब

(मूल जड़)



ब्रह्म

शिव

विष्णु

डार ब्रह्म

(क्षर पुरुष)

साधना

शास्त्रानुकूल
अर्थात् सीधा बीजा हुआ भवित रूपी पौधा

प्रश्न 46 :- (धर्मदास जी का) : हे जिन्दा! आप जी ने तीनों देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिवजी) की भक्ति करने वालों की दशा तो श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15, 20 से 23 तथा अध्याय 9 श्लोक 20 से 23 में प्रत्यक्ष प्रमाणित कर दिया कि तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) की भक्ति करने वाले राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझ (गीता ज्ञान दाता ब्रह्म) को भी नहीं भजते। अन्य देवताओं की भक्ति पूजा करने वालों का सुख समय (स्वर्ग समय) क्षणिक होता है। स्वर्ग की प्राप्ति करके शीघ्र ही पृथ्वी पर जन्म धारण करते हैं। हे महात्मा जी! कृपया कोई संसार में हुए बर्ताव से ऐसा प्रकरण सुनाइए जिससे आप जी की बताई बातों की सत्यता का प्रमाण मिले।

उत्तर :- (जिन्दा जगदीश का) :-

1. **रजगुण ब्रह्मा के उपासकों का चरित्र :** एक हरण्यकशिपु ब्राह्मण राजा था। किसी कारण उसको भगवान विष्णु (सतगुण) से ईर्ष्या हो गई। उस राजा ने रजगुण ब्रह्मा जी देवता को भक्ति करके प्रसन्न किया। ब्रह्मा जी ने कहा कि पुजारी! माँगो क्या माँगना चाहते हो? हरण्यकशिपु ने माँगा कि सुबह मरुँ न शाम मरुँ, बाहर मरुँ न भीतर मरुँ, दिन मरुँ न रात मरुँ, बारह मास में न मरुँ, न आकाश में मरुँ, न धरती पर मरुँ। ब्रह्माजी ने कहा तथास्तु। इसके पश्चात् हरण्यकशिपु ने अपने आपको अमर मान लिया और अपना नाम जाप करने को कहने लगा। जो विष्णु का नाम जपता, उसको मार देता। उसका पुत्र प्रहलाद विष्णु जी की भक्ति करता था। उसको कितना सताया था। हे धर्मदास! कथा से तो आप परीचित हैं। भावार्थ है कि रजगुण ब्रह्मा का भक्त राक्षस कहलाया, कुत्ते वाली मौत मारा गया।

2. **तमगुण शिवजी के उपासकों का चरित्र :** लंका के राजा रावण ने तमगुण शिव की भक्ति की थी। उसने अपनी शक्ति से 33 करोड़ देवताओं को कैद कर रखा था। फिर देवी सीता का अपहरण कर लिया। इसका क्या हश्र हुआ, आप सब जानते हैं। तमगुण शिव का उपासक रावण राक्षस कहलाया, सर्वनाश हुआ। निंदा का पात्र बना।

❖ **अन्य उदाहरण :-** आप जी को भष्मासुर की कथा का तो ज्ञान है ही। भगवान शिव (तमोगुण) की भक्ति भष्मागिरी करता था। वह बारह वर्षों तक शिव जी के द्वार के सामने ऊपर को पैर नीचे को सिर (शीर्षासन) करके भक्ति तपस्या करता रहा। एक दिन पार्वती जी ने कहा हे महादेव! आप तो समर्थ हैं। आपका भक्त क्या माँगता है? इसे प्रदान करो प्रभु। भगवान शिव ने भष्मागिरी से पूछा बोलो भक्त क्या माँगना चाहते हो। मैं तुझ पर अति प्रसन्न हूँ। भष्मागिरी ने कहा कि पहले वचनबद्ध हो जाओ, तब माँगूँगा। भगवान शिव वचनबद्ध हो गए। तब

भष्मागिरी ने कहा कि आपके पास जो भष्मकण्डा(भष्मकड़ा) है, वह मुझे प्रदान करो। शिव प्रभु ने वह भष्मकण्डा भष्मागिरी को दे दिया। कड़ा हाथ में आते ही भष्मागिरी ने कहा कि होजा शिवजी होशियार! तेरे को भष्म करूँगा तथा पार्वती को पत्नी बनाउँगा। यह कहकर अभद्र ढंग से हँसा तथा शिवजी को मारने के लिए उनकी ओर दौड़ा। भगवान शिव उस दुष्ट का उद्देश्य जानकर भाग निकले। पीछे-पीछे पुजारी आगे-आगे ईष्टदेव शिवजी (तमगुण) भागे जा रहे थे।

विचार करें धर्मदास! यदि आपके देव शिव जी अविनाशी होते तो मृत्यु के भय से नहीं डरते। आप इनको अविनाशी कहा करते थे। अब इन्हें अन्तर्यामी भी कहते थे। यदि भगवान शिव अन्तर्यामी होते तो पहले ही भष्मागिरी के मन के गन्दे विचार जान लेते। इससे सिद्ध हुआ कि ये तो अन्तर्यामी भी नहीं हैं।

जिस समय भगवान शिव जी आगे-आगे और भष्मागिरी पीछे-पीछे भागे जा रहे थे, उस समय भगवान शिव ने अपनी रक्षा के लिए परमेश्वर को पुकारा। उसी समय “परम अक्षर ब्रह्मा” जी पार्वती का रूप बनाकर भष्मागिरी दुष्ट के सामने खड़े हो गए तथा कहा है भष्मागिरी! आ मेरे पास बैठ। भष्मागिरी को पता था कि अब शिवजी निकट स्थान पर नहीं रुकेंगे। भष्मागिरी तो पार्वती के लिए ही तो सर्व उपद्रव कर रहा था। हे धर्मदास! आपको सर्व कथा का पता है। पार्वती रूप में परमात्मा ने भष्मागिरी को गण्डहथ नाच नचाकर भस्म किया। भष्मागिरी अपने गन्दे कर्म से भष्मासुर अर्थात् भस्मा राक्षस कहलाया।

इसलिए इन तीनों देवों के पुजारियों को राक्षस रूपभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है।

3. अब सतगुण श्री विष्णु जी के पुजारियों की कथा सुनाता हूँ।

❖ एक समय हरिद्वार में हर की पोड़ियों पर कुंभ का मेला लगा। उस अवसर पर तीनों गुणों के उपासक अपने-अपने समुदाय में एकत्रित हो जाते हैं। गिरी, पुरी, नागा-नाथ ये भगवान तमोगुण शिव के उपासक होते हैं तथा वैष्णव सतगुण भगवान विष्णु जी के उपासक होते हैं। हर की पोड़ियों पर प्रथम स्नान करने पर दो समुदायों “नागा तथा वैष्णवों” का झगड़ा हो गया। लगभग 25 हजार त्रिगुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) के पुजारी लड़कर मर गये, कत्त्वेआम कर दिया। तलवारों, छुरों, कटारी से एक-दूसरे की जान ले ली। सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

तीर तुपक तलवार कटारी, जमधड़ जोर बधावै हैं।

हर पैड़ी हर हेत नहीं जाना, वहाँ जा तेग चलावै हैं॥

काटैं शीश नहीं दिल करुणा, जग में साध कहावै हैं।

जो जन इनके दर्शन कूँ जावै, उनको भी नरक पठावै हैं॥

हे धर्मदास! उपरोक्त सत्य घटनाओं से सिद्ध हुआ कि रजगुण ब्रह्मा जी,

सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिवजी की पूजा करने वालों को गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है।

❖ परमेश्वर जिन्दा जी के मुख कमल से उपरोक्त कथा सुनकर धर्मदास जी का सिर फटने को हो गया। चक्कर आने लगे। हिम्मत करके धर्मदास बोला है प्रभु! आपने तो मुझ ज्ञान के अँधे को आँखें दे दी दाता। उपरोक्त सर्व कथायें हम सुना तथा पढ़ा करते थे परन्तु कभी विचार नहीं आया कि हम गलत रास्ते पर चल रहे हैं। आपका सौ-सौ बार धन्यवाद। आप जी ने मुझ पापी को नरक से निकाल दिया प्रभु!

प्रश्न 47 :- (धर्मदास जी का) : हे जिन्दा महात्मा! आपने बताया और गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में मैंने भी आँखों देखा जिसमें गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने अपनी साधना से होने वाली गति को अनुत्तम अर्थात् घटिया बताया है। उसको भी इसी तरह स्पष्ट करने की कृपया करें। कोई कथा प्रसंग सुनाएं।

उत्तर :- (जिन्दा बाबा वेशधारी परमेश्वर का) :

❖ गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5 तथा 9, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता (ब्रह्म) ने कहा है कि हे अर्जुन! मेरे और तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता मैं जानता हूं। श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्त्वदर्शी सन्त से तत्त्वज्ञान प्राप्त करके परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए, जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर फिर संसार में कभी नहीं आते। जिस परमेश्वर से संसार रूपी वृक्ष की प्रवृत्ति विस्तार को प्राप्त हुई हो अर्थात् जिस परमेश्वर ने सर्व संसार की उत्पत्ति की है। उसी परमेश्वर की भक्ति कर। फिर गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता ने कहा कि हे अर्जुन! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा, उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परमशान्ति तथा सनातन परमधाम को प्राप्त होगा। हे धर्मदास! जब तक जन्म-मरण रहेगा, तब तक परमशान्ति नहीं हो सकती और न ही सनातन परम धाम प्राप्त हो सकता। वास्तव में परमगति उसको कहते हैं जिसमें जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त हो जाए जो ब्रह्म साधना से कभी नहीं हो सकती। इसलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि जो ज्ञानी आत्मा हैं, मेरे विचार में सब नेक हैं। परन्तु वे सब मेरी अनुत्तम (घटिया) गति में ही लीन हैं क्योंकि वे मेरी (ब्रह्म की) भक्ति कर रहे हैं। ब्रह्म की साधना का “ऊँ” मन्त्र है। इससे ब्रह्म लोक प्राप्त होता है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में स्पष्ट है कि ब्रह्मलोक में गए हुए साधक भी पुनः लौटकर संसार में आते हैं। इसलिए उनको परमशान्ति नहीं हो सकती, सनातन परम धाम प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए ब्रह्म साधना से होने वाली गति अर्थात् उपलब्धि अनुत्तम

(घटिया) कही है।

❖ कथा प्रसंग : गीता ज्ञान दाता (ब्रह्म) ने गीता अध्याय 7 श्लोक 16-17 में बताया है कि मेरी भवित चार प्रकार के भक्त करते हैं - 1. आर्थ (संकट निवारण के लिए) 2. अर्थार्थी (धन लाभ के लिए), 3. जिज्ञासु (जो ज्ञान प्राप्त करके वक्ता बन जाते हैं) और 4. ज्ञानी (केवल मोक्ष प्राप्ति के लिए भवित करने वाले)। इनमें से तीन को छोड़कर चौथे ज्ञानी को अपना पक्का भक्त गीता ज्ञान दाता ने बताया है।

❖ ज्ञानी की विशेषता :- ज्ञानी वह होता है जिसने जान लिया है कि मनुष्य जीवन केवल मोक्ष प्राप्ति के लिए ही प्राप्त होता है। उनको यह भी ज्ञान होता है कि पूर्ण मोक्ष के लिए केवल एक परमात्मा की भवित करनी चाहिए। अन्य देवताओं (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिवजी) की भवित से पूर्ण मोक्ष नहीं होता। उन ज्ञानी आत्माओं को गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 में वर्णित तत्त्वदर्शी सन्त न मिलने के कारण उन्होंने वेदों में स्वयं निष्कर्ष निकाल लिया कि “ब्रह्म” समर्थ परमात्मा है, ओम् (ॐ) इसकी भवित का मन्त्र है। इस साधना से ब्रह्मलोक प्राप्त हो जाता है।

ज्ञानी आत्माओं ने परमात्मा प्राप्ति के लिए हठयोग किया। एक स्थान पर बैठकर घोर तप किया तथा ओम् (ॐ) नाम का जाप किया। जबकि वेदों व गीता में हठ करने, घोर तप करने वाले मूर्ख दम्भी (राक्षस) बताए हैं। (गीता अध्याय 3 श्लोक 4 से 9 तथा गीता अध्याय 17 श्लोक 1 से 6)। इनको हठयोग करने की प्रेरणा कहाँ से हुई? श्री देवीपुराण (गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित सचित्र मोटा टाईप) के तीसरे स्कंद में लिखा है कि ब्रह्मा जी ने अपने पुत्र नारद को बताया कि जिस समय मेरी उत्पत्ति हुई, मैं कमल के फूल पर बैठा था। आकाशवाणी हुई कि तप करो-तप करो। मैंने एक हजार वर्ष तक तप किया।

हे धर्मदास! ब्रह्माजी को वेद तो बाद में सागर मन्थन में मिले थे। उनको पढ़ा तो यजुर्वेद अध्याय 40 के मन्त्र 15 में ‘ओम्’ नाम मिला। उसका जाप तथा आकाशवाणी से सुना हठयोग (घोर तप) दोनों मिलाकर ब्रह्मा जी स्वयं करने लगे तथा अपनी सन्तानों (ऋषियों) को बताया। वही साधना ज्ञानी आत्मा ऋषिजन करने लगे। उन ज्ञानी आत्माओं में से एक चुणक ऋषि का प्रसंग सुनाता हूँ जिससे आप के प्रश्न का सटीक उत्तर मिल जाएगा:- एक चुणक नाम का ऋषि था। उसने हजारों वर्षों तक घोर तप किया तथा ओम् (ॐ) नाम का जाप किया। यह ब्रह्म की भवित है। ब्रह्म ने प्रतिज्ञा कर रखी है कि मैं किसी साधना से किसी को भी दर्शन नहीं दूँगा। गीता अध्याय 11 श्लोक 48 में कहा है कि हे अर्जुन! तूने मेरे जिस रूप के दर्शन किए अर्थात् मेरा यह काल रूप देखा, यह मेरा स्वरूप है। इसको न तो वेदों में वर्णित विधि से देखा जा सकता, न किसी जप से, न

तप से, न यज्ञ से तथा न किसी क्रिया से देखा जा सकता। गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में स्पष्ट किया है कि यह मेरा अविनाशी विधान है कि मैं कभी किसी को दर्शन नहीं देता, अपनी योग माया से छिपा रहता हूँ। ये मूर्ख लोग मुझे मनुष्य रूप अर्थात् कृष्ण रूप में मान रहे हैं। जो सामने सेना खड़ी थी, उसकी ओर संकेत करके गीता ज्ञान दाता कह रहा था। कहने का भाव था कि मैं कभी किसी को दर्शन नहीं देता, अब तेरे ऊपर अनुग्रह करके यह अपना रूप दिखाया है।

भावार्थ :- वेदों में वर्णित विधि से तथा अन्य प्रचलित क्रियाओं से ब्रह्म प्राप्ति नहीं है। इसलिए उस चुणक ऋषि को परमात्मा प्राप्ति तो हुई नहीं, सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। ऋषियों ने उसी को भक्ति की अन्तिम प्राप्ति मान लिया। जिसके पास अधिक सिद्धियाँ होंगी, वह अन्य ऋषियों से श्रेष्ठ माना जाने लगा। यही उपलब्धि चुणक ऋषि को प्राप्त थी।

एक मानधाता चक्रवर्ती राजा (जिसका राज्य पूरी पृथ्वी पर हो, ऐसा शक्तिशाली राजा) था। उसके पास 72 अक्षौणी सेना थी। राजा ने अपने आधीन राजाओं को कहा कि जिसको मेरी पराधीनता स्वीकार नहीं, वे मेरे साथ युद्ध करें, एक घोड़े के गले में एक पत्र बाँध दिया कि जिस राजा को राजा मानधाता की आधीनता स्वीकार न हो, वो इस घोड़े को पकड़ ले और युद्ध के लिए तैयार हो जाए। पूरी पृथ्वी पर किसी भी राजा ने घोड़ा नहीं पकड़ा। घोड़े के साथ कुछ सैनिक भी थे। वापिस आते समय ऋषि चुणक ने पूछा कि कहाँ गए थे सैनिको! उत्तर मिला कि पूरी पृथ्वी पर घूम आए, किसी ने घोड़ा नहीं पकड़ा। किसी ने राजा का युद्ध नहीं स्वीकारा। ऋषि ने कहा कि मैंने यह युद्ध स्वीकार लिया। सैनिक बोले हैं कंगाल! तेरे पास दाने तो खाने को हैं नहीं और युद्ध करेगा महाराजा मानधाता के साथ? इतना कहते ही घोड़ा पकड़कर ऋषि ने वृक्ष से बाँध लिया। मानधाता राजा को पता चला तो युद्ध की तैयारी हुई। राजा ने 72 अक्षौणी सेना की चार टुकड़ियाँ बनाई। ऋषि पर हमला करने के लिए एक टुकड़ी 18 अक्षौणी (18 करोड़) सेना भेज दी। दूसरी ओर ऋषि ने अपनी सिद्धि से चार पूतलियाँ बनाई। एक पुतली छोड़ी जिसने राजा की 18 अक्षौणी सेना का नाश कर दिया। राजा ने दूसरी टुकड़ी छोड़ी। ऋषि ने दूसरी पुतली छोड़ी, उसने दूसरी टुकड़ी 18 अक्षौणी सेना का नाश कर दिया। इस प्रकार चुणक ऋषि ने मानधाता राजा की चार पूतलियों से 72 अक्षौणी सेना नष्ट कर दी। जिस कारण से महर्षि चुणक की महिमा पूरी पृथ्वी पर फैल गई।

हे धर्मदास! (जिन्दा रूप धारी परमात्मा बोले) ऋषि चुणक ने जो सेना मारी, ये पाप कर्म ऋषि के संचित कर्मों में जमा हो गए। ऋषि चुणक ने जो ऊँ (ओम) एक अक्षर का जाप किया, वह उसके बदले ब्रह्मलोक में जाएगा। फिर अपना ब्रह्म

लोक का सुख समय व्यतीत करके पृथ्वी पर जन्मेगा। जो हठ योग तप किया, उसके कारण पृथ्वी पर राजा बनेगा। फिर मृत्यु के उपरान्त कुत्ते का जन्म होगा। जो 72 अक्षौणी सेना मारी थी, वह अपना बदला लेगी। कुत्ते के सिर में जख्म होगा और उसमें कीड़े बनकर 72 अक्षौणी सेना अपना बदला चुकाएंगी। इसलिए हे धर्मदास! गीता ज्ञान दाता (ब्रह्म) ने अपनी साधना से होने वाली गति को अनुत्तम (अश्रेष्ठ) कहा है।

प्रश्न 45 (धर्मदास जी का) :- हे जिन्दा! मैंने एक महामण्डलेश्वर से प्रश्न किया था कि गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में भगवान् कृष्ण जी ने किस परमेश्वर की शरण में जाने के लिए कहा है? उस मण्डलेश्वर ने उत्तर दिया था कि भगवान् श्री कृष्ण से अतिरिक्त कोई भगवान् ही नहीं। कृष्ण जी ही स्वयं पूर्ण परमात्मा हैं, वे अपनी ही शरण आने के लिए कह रहे हैं, बस कहने का फेर है। हे जिन्दा जी! कृष्ण मुझ अज्ञानी का भ्रम निवारण करें।

उत्तर : (जिन्दा बाबा परमेश्वर का) :- हे धर्मदास!

ये माला डाल हुए हैं मुक्ता। षटदल उवा—बाई बकता।

आपके सर्व मण्डलेश्वर अर्थात् तथा शंकराचार्य अट-बट करके भोली जनता को भ्रमित कर रहे हैं। गीता ज्ञान दाता गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में अर्जुन को अपनी शरण में आने को कहता है, यह बिल्कुल गलत है क्योंकि गीता अध्याय 2 श्लोक 7 में अर्जुन ने कहा कि 'हे कृष्ण! अब मेरी बुद्धि ठीक से काम नहीं कर रही है। मैं आप का शिष्य हूँ, आपकी शरण में हूँ। जो मेरे हित में हो, वह ज्ञान मुझे दीजिए। हे धर्मदास! अर्जुन तो पहले ही श्री कृष्ण की शरण में था। इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य 'परम अक्षर ब्रह्म' की शरण में जाने के लिए कहा है। गीता अध्याय 4 श्लोक 3 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन तू मेरा भक्त है। इसलिए यह गीता शास्त्र सुनाया है।

गीता ज्ञान दाता से अन्य पूर्ण परमात्मा का अन्य प्रमाण गीता अध्याय 13 श्लोक 11 से 28, 30, 31, 34 में भी है।

श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 13 श्लोक 1 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि शरीर को क्षेत्र कहते हैं जो इस क्षेत्र अर्थात् शरीर को जानता है, उसे "क्षेत्रज्ञ" कहा जाता है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 1)

गीता अध्याय 13 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि :- मैं क्षेत्रज्ञ हूँ। क्षेत्र तथा क्षेत्रज्ञ दोनों को जानना ही तत्त्वज्ञान कहा जाता है, ऐसा मेरा मत है। गीता अध्याय 13 श्लोक 10 में कहा है कि मेरी भक्ति अव्याभिचारिणी होनी चाहिए। जैसे अन्य देवताओं की साधना तो गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 तथा 20 से 23 में व्यर्थ कही हैं। केवल ब्रह्म की भक्ति करें। उसके विषय में यहाँ कहा

है कि अन्य देवता में आसक्त न हों। भावार्थ है कि भक्ति व मुक्ति के लिए ज्ञान समझें, वक्ता बनने के लिए नहीं। इसके अतिरिक्त वक्ता बनने के लिए ज्ञान सुनना अज्ञान है। पतिव्रता स्त्री की तरह केवल मुझमें आस्था रखकर भक्ति करें और मनुष्यो! बैठकर बातें बनाने का स्वभाव नहीं होना चाहिए। एकान्त रथान में रहकर भक्ति करें।

गीता अध्याय 13 श्लोक 11 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि अध्यात्म ज्ञान में रुचि रखकर तत्त्व ज्ञान के लिए सदग्रन्थों को देखना तत्त्वज्ञान है, वह ज्ञान है तथा तत्त्वज्ञान की अपेक्षा कथा कहानियाँ सुनाना, सुनना, शास्त्रविधि विरुद्ध भक्ति करना यह सब अज्ञान है। तत्त्वज्ञान के लिए परमात्मा को जानना ही ज्ञान है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 12 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से "परम ब्रह्म" का ज्ञान कराया है, जो परमात्मा (ज्ञेयम्) जानने योग्य है, जिसको जानकर (अमृतम् अश्नुते) अमरत्व प्राप्त होता है अर्थात् पूर्ण मोक्ष का अमृत जैसा आनन्द भोगने को मिलता है। उसको भली-भाँति कहूँगा। (तत्) वह दूसरा (ब्रह्म) परमात्मा न तो सत् कहा जाता है अर्थात् गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 4 श्लोक 32, 34 में कहा है कि जो तत्त्वज्ञान है, उसमें परमात्मा का पूर्ण ज्ञान है, वह तत्त्वज्ञान परमात्मा अपने मुख कमल से स्वयं उच्चारण करके बोलता है। उस तत्त्वज्ञान को तत्त्वदर्शी सन्त जानते हैं, उनको दण्डवत् प्रणाम करने से, नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्म तत्त्व को भली-भाँति जानने वाले तत्त्वदर्शी सन्त तुझे तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता को परमात्मा का पूर्ण ज्ञान नहीं है। इसलिए कह रहा है कि वह दूसरा परमात्मा जो गीता ज्ञान दाता से भिन्न है। वह न सत् है, न ही असत्। यहाँ पर पर+ब्रह्म का अर्थ सात संख ब्रह्माण्ड वाले परब्रह्म अर्थात् गीता अध्याय 15 श्लोक 16 वाले अक्षर पुरुष से नहीं है। यहाँ (पर माने दूसरा और ब्रह्म माने परमात्मा) ब्रह्म से अन्य परमात्मा पूर्ण ब्रह्म का वर्णन है।

भावार्थ :- गीता अध्याय 13 श्लोक 12 में गीता ज्ञान दाता कह रहा है कि जो मेरे से दूसरा ब्रह्म अर्थात् प्रभु है वह अनादि वाला है। अनादि का अर्थ है जिसका कभी आदि अर्थात् शुरुवात न हो, कभी जन्म न हुआ हो। गीता ज्ञानदाता क्षर पुरुष है, इसे "ब्रह्म" भी कहा जाता है। इसने गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4, 5, 9, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में स्वयं र्खीकारा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञानदाता अनादि वाला "ब्रह्म" अर्थात् प्रभु नहीं है। इससे यह सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 13 के श्लोक 12 में अपने से अन्य अविनाशी परमात्मा की महिमा कही है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 12)

गीता ज्ञान दाता ब्रह्म है, यह एक हजार हाथ-पैर वाला है। इसका संहस्र कमल है अर्थात् हजार पॅखुड़ियों वाला कमल है। गीता अध्याय 11 श्लोक 46 में

अर्जुन ने कहा है कि हे संहस्राबाहु! (हजार हाथों वाले) आप चतुर्भुज रूप में आइए। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञानदाता केवल हजार भुजाओं वाला है। इसलिए गीता अध्याय 13 श्लोक 13 में गीता ज्ञान दाता अपने से अन्य सब और हाथ-पैर वाले, सब और नेत्र सिर और मुख वाले और सब और कान वाले परमात्मा की महिमा कह रहा है। कहा है कि वह परमात्मा संसार में सबको व्याप्त करके अर्थात् अपनी शक्ति से सब रोके हैं और स्वयं सत्यलोक (शाश्वत स्थानम् तिष्ठति) बैठा है।

स्पष्ट हुआ कि गीता ज्ञानदाता से अन्य समर्थ परमात्मा है, वही सब संसार का संचालन, पालन करता है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 13)

गीता के अध्याय 13 श्लोक 14 श्लोक में भी स्पष्ट है कि गीता ज्ञान दाता अपने से अन्य परमात्मा का ज्ञान करा रहा है। कहा है :- सम्पूर्ण इन्द्रियों के विषयों को जानने वाला अर्थात् अन्तर्यामी है। सब इन्द्रियों से रहित है अर्थात् परमात्मा की इन्द्रियों हम मानव तथा अन्य प्राणियों जैसी विकारग्रस्त नहीं है। वह परमात्मा आसक्ति रहित है अर्थात् वह इस काल लोक (इक्कीस ब्रह्माण्डों) की किसी वस्तु-पदार्थ में आसक्ति नहीं रखता क्योंकि उस परमेश्वर का सत्यलोक इस काल के क्षेत्र से असर्वयों गुण उत्तम है। इसलिए वह परमात्मा आसक्ति रहित कहा है। वही सबका धारण-पोषण करने वाला है। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में भी है। वह परमात्मा निर्गुण है, परन्तु सगुण होकर ही अपना महत्व दिखाता है। उदाहरण के लिए :- जैसे आम का पेड़ आम के बीज (गुठली) में निर्गुण अवस्था में होता है। उस बीज को जब बीजा जाता है, तब वह पौधा फिर पेड़ रूप में सगुण होकर अपना महत्व प्रकट करता है। परन्तु परमात्मा सत्यलोक में सर्गुण रूप में बैठा है क्योंकि परमात्मा ने अपने वचन शक्ति से सर्व सृष्टि रचकर विधान बनाकर छोड़ दिया। उस परमात्मा के विधान अनुसार सर्व प्राणी तथा नक्षत्र बनते-बिगड़ते रहते हैं, जीव कर्मानुसार जन्मते-मरते रहते हैं। परमात्मा को कोई टैंशन नहीं। परन्तु जब परमात्मा पृथ्वी पर प्रकट होता है, उस समय सर्व गुणों को भोगता है। जैसे आम के वृक्ष को तो निर्गुण से सर्गुण होने में बहुत समय लगता है। परन्तु परमात्मा के लिए समय सीमा नहीं है। वे तो क्षण में निर्गुण, अगले क्षण में सर्गुण हो सकते हैं। इससे भी सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता से अन्य कोई सबका धारण-पोषण करने वाला परमात्मा है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 15-16 में भी यही प्रमाण है। गीता ज्ञानदाता ने कहा है कि जैसे सूर्य दूर स्थान पर स्थित होते हुए भी यहाँ पृथ्वी पर अपना प्रभाव बनाए है। उसी प्रकार परमात्मा सत्यलोक में स्थित होकर भी सर्व ब्रह्माण्डों पर अपनी शक्ति का प्रभाव बनाए हुए है। सर्व चर-अचर भूतों के बाहर-भीतर है। इसी प्रकार सूक्ष्म होने से हम उसको चर्मदृष्टि से देख नहीं पाते। इसलिए अविज्ञय

अर्थात् हमारे ज्ञान से परे है तथा वही परमात्मा हमारे सभीप में तथा दूर भी वही स्थित है। परमात्मा तो दूर सत्यलोक (शाश्वत स्थान) में है, उसकी शक्ति का प्रभाव प्रत्येक के साथ है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 15)

जैसे सूर्य दूर स्थित है, परन्तु पृथ्वी के ऊपर प्रत्येक प्राणी को अपने साथ दिखाई देता है। जैसे एक स्थान पर कई घड़े जल के भरे रखे हैं तो सूर्य प्रत्येक में दिखाई देता है, टुकड़ों में नहीं दिखता। इसी प्रकार परमात्मा उस व्यक्ति को दिखाई देता है। परमात्मा ऐसे ही एक स्थान पर स्थित है। वह परमात्मा जानने योग्य है। भावार्थ है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मेरे से अन्य परमात्मा का ज्ञान होना चाहिए, वह जानने योग्य है। वही परमात्मा अपने विधानानुसार सर्व का धारण-पोषण, उत्पत्ति तथा मृत्यु करता है। वास्तव में "ब्रह्मा" (सब का उत्पत्तिकर्ता) वही है। वास्तव में विष्णु (सबका धारण-पोषण करने वाला) वही है, वास्तव में शंकर (संहार करने वाला) वही है। अन्य ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर तो केवल एक ब्रह्माण्ड के कर्ता-धरता हैं। परन्तु वह परमात्मा तो सर्व ब्रह्माण्डों का ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर रूप में अकेला ही है। जैसे भारत वर्ष में केन्द्र का भी गृहमन्त्री होता है तथा राज्यों में भी गृहमन्त्री होते हैं।

इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य समर्थ परमात्मा की महिमा बताई है। गीता ज्ञान दाता से अन्य कोई पूर्ण परमात्मा है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 16) गीता अध्याय 13 श्लोक 17 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमात्मा की महिमा कही है जो इस प्रकार है:-

वह दूसरा परमात्मा (परम् ब्रह्म) सब ज्योतियों का भी ज्योति है अर्थात् सर्व प्रकाशस्रोत है, उसी अन्य समर्थ परमात्मा की शक्ति से सब प्रकाशमान हैं। और उस परमात्मा का प्रकाश सर्व से अधिक है। वह परमात्मा माया से अति परे कहा जाता है। वास्तव में निरंजन वही है। जो गीता ज्ञान दाता है, यह माया सहित "ज्योति निरंजन" कहा जाता है। वह परमात्मा ज्ञान का भण्डार है, वह जानने योग्य है, वह (ज्ञानगम्यम्) तत्त्व ज्ञान द्वारा प्राप्त होने योग्य है।

इस गीता अध्याय 13 श्लोक 17 में मूल पाठ में "ज्ञानम् ज्ञेयम् ज्ञान गम्यम्" लिखा है जिसका भावार्थ है कि (ज्ञानम्) जो ज्ञान परमात्मा स्वयं पृथ्वी पर प्रकट होकर तत्त्वज्ञान अपने मुख कमल से बोलता है। इसलिए वह ज्ञान रूप है अर्थात् ज्ञान का भण्डार है। वह परमात्मा (ज्ञेयम् ज्ञानगम्यम्) उसी तत्त्वज्ञान से जानने योग्य तथा उसी तत्त्वज्ञान से प्राप्त करने योग्य है। वह परमात्मा सर्व प्राणियों के हृदय में स्थित है। जैसे सूर्य दूर स्थान पर होते हुए भी प्रत्येक घड़े के जल में दिखाई देता है। वह उन घड़ों में नहीं है।

सूक्ष्म वेद में कहा है कि :- ब्रह्मा विष्णु शिव राई झूमकरा।

नहीं सब बाजी के खम्ब सुनों राई झूमकरा।

सर्व ठाम सब ठौर सुनों राई झूमकरा ।

यही प्रमाण गीता अध्याय 18 श्लोक 61 में भी है कहा है कि हे अर्जुन! शरीर रूप यन्त्र में आरूढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियों को अन्तर्यामी परमेश्वर अपनी माया अर्थात् अपनी शक्ति से उनके कर्मानुसार भ्रमण कराता है अर्थात् संस्कारों के अनुसार अच्छी-बुरी योनियों में धूमाता है। वही सर्व शक्तिमान परमात्मा सर्व प्राणियों के हृदय में स्थित है अर्थात् विराजमान है। इसी प्रकार परमेश्वर की महिमा गीता अध्याय 13 श्लोक 17 में कही है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य पूर्ण परमात्मा की महिमा कही है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 17)

गीता अध्याय 13 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि इस प्रकार क्षेत्र अर्थात् शरीर, ज्ञानम् तत्त्व ज्ञान और ज्ञेयम् अर्थात् जानने योग्य परमात्मा की महिमा मैंने संक्षेप में कही है। मेरा भक्त पहले मुझे ही सर्वेस्वा जानकर मुझ पर आश्रित था। वह इस (विज्ञाय) तत्त्वज्ञान के आधार से मेरे भाव अर्थात् मेरी शक्ति से परीचित होकर तथा उस समर्थ की शक्ति से परीचित होकर (उप पद्यते) उसके उपरान्त भक्ति करके उसी भाव को प्राप्त होता है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 18)

इसी प्रकार गीता अध्याय 13 श्लोक 19 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य पुरुष अर्थात् परमात्मा की महिमा कही है। कहा है कि प्रकृति और पुरुष दोनों ही अनादि हैं। यहाँ पर प्रकृति से तात्पर्य सत्यलोक की प्रकृति से है। जिसको पराशक्ति, परानन्दनी, महान् प्रकृति कहा जाता है। पुरुष का अर्थ पूर्ण परमात्मा है, ये दोनों अनादि हैं। इस प्रकृति का भावार्थ दुर्गा स्त्री रूप की तरह स्त्री रूप प्रकृति से नहीं है। जैसे सूर्य है तो उसकी प्रकृति उष्णता भी साथ ही है। इसी प्रकार सत्यपुरुष तथा उसकी प्रकृति अर्थात् शक्ति दोनों अनादि हैं।

इस प्रकार विकार तथा तीनों गुण जिस से उत्पन्न हुए हैं, वह अन्य प्रकृति है, उससे उत्पन्न हुए हैं, ऐसा जान। गीता अध्याय 7 श्लोक 4-5 में दो प्रकृति कही हैं, एक जड़ और दूसरी चेतन दुर्गा देवी। यहाँ पर दूसरी प्रकृति दुर्गा कही है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 19)

गीता अध्याय 13 श्लोक 20 में भी अन्य (पुरुषः) परमात्मा का वर्णन है। गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित गीता के इस श्लोक के अनुवाद में "पुरुषः" का अर्थ परमात्मा होता है। गीता अध्याय 13 श्लोक 20 का यथार्थ अनुवाद देखें "गहरी नजर गीता में" जो हमारी Web site पर देखी व डाऊनलोड की जा सकती है। Web site का नाम है "www.jagatgururampalji.org"

गीता अध्याय 13 श्लोक 21 में भी अन्य (पुरुषः) परमात्मा का वर्णन है। इसके अनुवाद में गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित में "पुरुषः" का अर्थ पुरुष ही

किया है, यह ठीक है। पुरुषः का अर्थ परमात्मा होता है। प्रकरणवश पुरुषः का अर्थ मनुष्य भी किया जाता है क्योंकि परमात्मा ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुरूप बनाया है। इसलिए कहा जाता है कि” नर नारायण रूप है, तू ना समझ देहि।

“चौरासी लाख प्रकार के जीवों से मानव देह उत्तम है”

गीता अध्याय 13 श्लोक 22 में भी गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमात्मा का प्रत्यक्ष प्रमाण बताया है। गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित गीता में इस श्लोक का अर्थ बिल्कुल गलत किया है।

❖ यथार्थ अनुवाद :- जैसे पूर्व के श्लोकों में वर्णन आया है कि परमात्मा प्रत्येक जीव के साथ ऐसे रहता है, जैसे सूर्य प्रत्येक घड़े के जल में स्थित दिखाई देता है। उस जल को अपनी उष्णता दे रहा है। इसी प्रकार परमात्मा प्रत्येक जीव के हृदय कमल में ऐसे विद्यमान हैं जैसे सौर ऊर्जा सञ्चय जहाँ भी लगा है तो वह सूर्य से उष्णता प्राप्त करके ऊर्जा संग्रह करता है। इसी प्रकार प्रत्येक जीव के साथ परमात्मा रहता है। इसलिए इस श्लोक (गीता अध्याय 13 श्लोक 22) में कहा है कि वह परमात्मा सब प्रभुओं का भी स्वामी होने से “महेश्वर”, सब का धारण-पोषण करने से “कर्ता”, सत्यलोक में बैठा प्रत्येक प्राणी की प्रत्येक गतिविधि को देखने वाला होने से “उपदृष्टा”, जीव परमात्मा की शक्ति से सर्व कार्य करता है। जीव परमात्मा का अंश है। (रामायण में भी कहा है, ईश्वर अंश जीव अविनाशी) जिस कारण से जीव जो कुछ भी अपने किए कर्म का सुख, दुःख भोगता है तो अपने अंश के सुख-दुःख का परमात्मा को भी अहसास होता है। (सूक्ष्म वेद में लिखा है- “कबीर कह मेरे जीव को दुःख ना दिजो कोय, भक्त दुःखाए मैं दुःखी मेरा आपा भी दुःखी होय।”)

इसलिए “भोक्ता” कहलाता है। प्रत्येक प्राणी को गुप्त रूप से उचित राय देता है, जिस कारण से परमात्मा “अनुमन्ता” कहलाता है। परमात्मा शब्द का सम्बिलिंग = परम+आत्मा = श्रेष्ठ आत्मा = परमात्मा। यदि कोई दुःख का भोग भी देता है, सुख का भोग भी देता है। जैसे कर्म करेगा जीव वैसे अवश्य भोगेगा तो वह “परमात्मा” नहीं कहा जा सकता, वह श्रेष्ठ आत्मा नहीं होता। जैसे इस काल (ब्रह्म के) लोक में विधान है कि जैसा कर्म करोगे, वैसा फल आपको भगवान अवश्य देगा। तो यह प्रभु (स्वामी)तो है, परन्तु परम आत्मा नहीं है। इस मानव शरीर में (परः) दूसरा (पुरुषः) परमात्मा जो जीव के साथ अभिन्न रूप से रहता है, जैसे सूर्य प्रत्येक को अपनी ऊर्जा देता है, उसी प्रकार यह दूसरा परमात्मा उपरोक्त महिमा वाला है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 23 में भी अन्य (पुरुषम्) परमात्मा बताया है। कहा है कि जो सन्त उपरोक्त प्रकार से (पुरुषम्) परमात्मा, प्रकृति, तथा गुणों सहित

जानता है, वह सन्त-साधक सब प्रकार से परमात्मा में लीन (वर्तमान) रहता हुआ पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होता अर्थात् उसका पूर्ण मोक्ष हो जाता है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 24 भी अन्य परमात्मा का वर्णन है जो गीता ज्ञान दाता से अन्य है। कहा है कि जो परमात्मा सूर्य के सदृश जीवात्मा के साथ अभेद रूप से रहता है। उसको साधक ध्यान द्वारा दिव्य दृष्टि से हृदय में देखते हैं, अन्य साधक ज्ञान सुनकर विश्वास करके परमात्मा का अस्तित्व स्वीकार कर लेते हैं। अन्य भक्तजन (कर्मयोगेन) परमात्मा के कर्मों अर्थात् लीलाओं को देखकर परमात्मा का अस्तित्व जान लेते हैं। जैसे संसार में लगभग 7 अरब जनसँख्या है। किसी का भी चेहरा (face) एक-दूसरे से नहीं मिलता। (कवि ने कहा है :- कई अरब बनाए बन्दे आँख, नाक, हाथ लगाए, एक-दूसरे के नाल कोई भी रलदे नहीं रलाए) यह भी सिद्ध होता है कि कोई सर्वज्ञ शक्ति है, उसे "परमात्मा" कहा जाता है। कुछ भक्तजन परमात्मा के इस प्रकार के कार्य देखकर परमात्मा को मानते हैं।

गीता अध्याय 12 श्लोक 25 में कहा है कि जो शिक्षित नहीं और जो न ध्यान करते हैं, न ज्ञान को समझ पाते हैं और न वे परमात्मा की संरचना से परमात्मा को समझ पाते हैं। वे अन्य शिक्षित, विद्वान् व्यक्तियों से परमात्मा की महिमा सुनकर मान लेते हैं कि जब यह शिक्षित और ज्ञानी व्यक्ति कह रहा है तो परमात्मा है। फिर वे उपासना करने लग जाते हैं। वे उसे सुनने के कारण परमात्मा के अस्तित्व को मानकर उपासना करने के कारण इस मृतलोक (मृत्यु संसार) से पार हो जाते हैं।

गीता अध्याय 13 श्लोक 26 में तो इतना ही कहा है कि सर्व प्राणी क्षेत्र अर्थात् दुर्गा के शरीर तथा क्षेत्रज्ञ अर्थात् गीता ज्ञान दाता क्षर ब्रह्म के संयोग से उत्पन्न होते हैं। ध्यान रहे गीता ज्ञान दाता ने गीता के इसी अध्याय 13 के श्लोक 1 में कहा है कि "क्षेत्र" तो शरीर को कहते हैं तथा जो शरीर के विषय में जानता है, उसे "क्षेत्रज्ञ" कहते हैं। गीता अध्याय 13 श्लोक 2 में कहा है। इस काल लोक (इकीस ब्रह्माण्डों के क्षेत्र में) में जितने प्राणी उत्पन्न होते हैं, वे दुर्गा जी तथा काल भगवान के संयोग से होते हैं अर्थात् नर-मादा से काल प्रेरणा से काल सृष्टि उत्पन्न होती है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 27 में अन्य परमेश्वर स्पष्ट है जो गीता ज्ञान दाता से अन्य है। (भिन्न है) :- जैसे पूर्व के श्लोकों में प्रमाण सहित बताया गया है कि परमेश्वर प्रत्येक प्राणी के शरीर में हृदय में ऐसे बैठा दिखाई देता है जैसे सूर्य जल से भरे घड़ों में दिखाई देता है। इसी प्रकार इस श्लोक 27 में कहा है कि परमेश्वर हृदय में बैठा है। जब प्राणी का शरीर नष्ट हो जाता है तो भी परमेश्वर नष्ट नहीं होता। जैसे कोई घड़ा फूट गया, उसका जल पृथ्वी पर बिखर गया

और पृथ्वी में समा गया तो भी सूर्य तो यथावत् है। इसलिए परमेश्वर अविनाशी है जो सन्त परमात्मा को इस दृष्टिकोण से देखता है, वह सही जानता है, वह तत्त्वज्ञानी सन्त है।

इस श्लोक (गीता अध्याय 13 श्लोक 27) में परमेश्वर शब्द लिखा है। जिससे भी गीता ज्ञान दाता से अन्य परमात्मा का बोध होता है। आओ जानें:-

"परमेश्वर" का सन्दिधेद = परम+ईश्वर

व्याख्या :- "ईश" का अर्थ है स्वामी, प्रभु, मालिक।

"वर" का अर्थ है श्रेष्ठ, पति

1. ईश् तो गीता ज्ञान दाता "क्षर पुरुष" अर्थात् क्षर ब्रह्म है जो केवल इककीस ब्रह्माण्डों का ईश् अर्थात् प्रभु है।

2. ईश्वर = ईश् अर्थात् क्षर पुरुष से श्रेष्ठ प्रभु। वह केवल 7 शंख ब्रह्माण्डों का प्रभु है। इसे अक्षर पुरुष तथा परब्रह्म भी कहा जाता है।

3. परमेश्वर = ईश्वर अर्थात् अक्षर पुरुष से परम अर्थात् श्रेष्ठ है, जो असँख्य ब्रह्माण्डों का प्रभु है, उसे परम अक्षर ब्रह्म भी कहा जाता है। (गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में प्रमाण है) गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरुषों का वर्णन है। क्षर पुरुष - यह गीता ज्ञान दाता ईश् है तथा अक्षर पुरुष है। यह ईश्वर है तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि (उत्तम पुरुषः) पुरुषोत्तम अर्थात् वास्तव में सर्व श्रेष्ठ प्रभु तो ऊपर के श्लोक (गीता अध्याय 15 श्लोक 16) में कहे दोनों (क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष) से भिन्न है, उसी को वास्तव में "परमात्मा" कहा जाता है। वही तीनों लोकों (क्षर पुरुष के 21 ब्रह्माण्डों का क्षेत्र काल लोक कहा जाता है तथा अक्षर पुरुष के 7 शंख ब्रह्माण्डों के क्षेत्र को परब्रह्म का लोक कहा जाता है और ऊपर चार लोकों (सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अकह लोक) का क्षेत्र अमर लोक परमेश्वर का लोक कहा जाता है। इस प्रकार तीन लोकों का यहाँ पर वर्णन है। इन तीनों लोकों में प्रवेश करके सब का धारण-पोषण करता है। वह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है। गीता अध्याय 13 श्लोक 27 में "परमेश्वर" शब्द है जो गीता ज्ञान दाता से भिन्न सर्व शक्तिमान, सर्व का पालन कर्ता का बोधक है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 28 में भी गीता ज्ञान दाता से अन्य प्रभु का प्रमाण है। इस श्लोक में "ईश्वर" शब्द परमेश्वर का बोधक है, जैसे ईश् का अर्थ स्वामी, वर का अर्थ श्रेष्ठ। वास्तव में सब का "ईश्" स्वामी तो परम अक्षर ब्रह्म है। वही श्रेष्ठ ईश् है, इसलिए "ईश्वर" शब्द प्रकरणवश पूर्ण परमात्मा का बोधक है। यदि अन्य "ईश्" नकली स्वामी नहीं होते। इसलिए इस श्लोक में "ईश्वर" शब्द सत्य पुरुष का बोध जानें।

गीता अध्याय 13 श्लोक 28 का भावार्थ है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है

कि जो साधक सब प्रकार से परमेश्वर को समझाव में देखता हुआ (आत्मनम्) अपनी आत्मा को (आत्मना) अपनी अज्ञान आत्मा द्वारा नष्ट नहीं करता अर्थात् वह परमात्मा को सही समझकर उसकी साधना करके (ततः) उससे (पराम् = परा) दूसरी (गतिम्) गति अर्थात् मोक्ष को (याति) प्राप्त होता है अर्थात् वह साधक गीता ज्ञान दाता वाली परमगति (जो गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में कही है) से अन्य गति को प्राप्त होता है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 30 में स्पष्ट है कि गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमात्मा की महिमा बताई है। कहा है कि जो सन्त सर्व प्रणियों की स्थिति भिन्न-भिन्न होते हुए भी एक परमात्मा सर्वशक्तिमान के अन्तर्गत मानता है तो वह समझो “सच्चिदानन्दधन ब्रह्म” अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को प्राप्त हो गया है, वह सत्य भवित्व करके उस परमेश्वर को प्राप्त हो जाता है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 31 में भी गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य “परमात्मा” के विषय में कहा है। इस श्लोक में “परमात्मा” शब्द है जिसकी स्पष्ट परिभाषा गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में बताई है। कहा है कि जो उत्तम पुरुष अर्थात् सर्वश्रेष्ठ प्रभु है। वह तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। वह वास्तव अविनाशी परमेश्वर है। उसी को “परमात्मा” कहा जाता है। वह क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष से अन्य है।

इस श्लोक (गीता अध्याय 13 श्लोक 31) में भी यही स्पष्ट किया है कि वह परमात्मा अनादि होने से, निर्गुण होने से प्रत्येक प्राणी के शरीर में (सूर्य जैसे घड़े में) स्थित होने पर भी न तो कुछ करता है क्योंकि सब कार्य परमात्मा की शक्ति करती है, (जैसे घड़े के जल में सूर्य दिखाई देता है उससे जल गर्म हो रहा है। वह सूर्य करता नहीं दिखाई देता, उसकी उण्ठता कर रही है। सूर्य कुछ नहीं करता दिखता) और न परमात्मा उस शरीर में लिप्त होता है, जैसे सूर्य घड़े में लिप्त नहीं होता।

गीता अध्याय 13 श्लोक 32 में भी यही प्रमाण है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 33 में आत्मा और शरीर की स्थिति बताई है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 34 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य इस प्रकार श्रेत्र (शरीर) तथा श्रेत्रज्ञ (गीता ज्ञान दाता) के भेद को तथा कर्म करते-करते भवित्व करके काल की प्रकृति अर्थात् काल जाल से मुक्त जो साधक ज्ञान नेत्रों द्वारा जानकर तत्त्वदर्शी सन्त की खोज करके सत्य शास्त्रानुकूल साधना करके तत्त्वज्ञान को समझकर उस परम् अर्थात् दूसरे परमब्रह्म परमात्मा को प्राप्त होते हैं।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि गीता ज्ञान दाता से अन्य पूर्ण परमात्मा है जिसकी भवित्व की साधना करके साधक उस पूर्ण मोक्ष को प्राप्त हो जाता है जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में वर्णित है कि तत्त्वज्ञान की प्राप्ति के पश्चात्

परमेश्वर के उस परमपद को खोजना चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आता।

सारांश :- पूर्वोक्त प्रमाणों से तथा इस गीता अध्याय 13 के उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि गीता ज्ञान दाता से अन्य परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण परमात्मा है। जिसकी शरण में जाने के लिए गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62, 66 में कहा है। वही पूर्ण मोक्षदायक है, वही पूजा करने योग्य है, वही सबका रचनहार है, वही सबका पालनहार, धारण करने वाला सर्व सुखदायक है। उसको "परमात्मा" कहा जाता है।

प्रश्न 49 :- (धर्मदास जी का) :- गीता अध्याय 4 श्लोक 6 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं अजन्मा और अविनाशी रूप होते हुए भी समस्त प्राणियों का ईश्वर होते हुए भी अपनी योग माया से प्रकट होता हूँ। इस में श्री कृष्ण जी अपने आप को समस्त प्राणियों का अविनाशी ईश्वर कह रहे हैं, अपने को अजन्मा भी कहा है।

उत्तर :- (जिन्दा परमेश्वर जी का) : हे धर्मदास जी! गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जितने प्राणी मेरे 21 ब्रह्माण्डों में मेरे अन्तर्गत हैं। मैं उनका श्रेष्ठ प्रभु (ईश्वर) हूँ। यही प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 18 में भी है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं लोक वेद (सुनी-सुनाई बातें) के आधार से अपने 21 ब्रह्माण्डों वाले लोक में पुरुषोत्तम प्रसिद्ध हूँ क्योंकि मैं शरीरधारी प्राणियों से तथा अविनाशी जीवात्मा से भी श्रेष्ठ हूँ जो मेरे अन्तर्गत आते हैं। वास्तव में पुरुषोत्तम तो कोई अन्य ही है जिसका वर्णन गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में बताया गया है।

गीता के अध्याय 4 श्लोक 6 में यह कहा है कि मैं (अजः) अजन्मा अर्थात् मैं तुम्हारी तरह जन्म नहीं लेता, मैं लीला से प्रकट होता हूँ। जैसे गीता अध्याय 10 में विराट रूप दिखाया था, फिर कहा है कि (अव्ययात्मा) मेरी आत्मा अमर है। फिर कहा है कि (आत्ममायया) अपनी लीला से (सम्भवामि) उत्पन्न होता हूँ। यहाँ पर उत्पन्न होने की बात है क्योंकि यह काल ब्रह्म अक्षर पुरुष के एक युग के उपरान्त मरता है। फिर उस समय एक ब्रह्माण्ड का विनाश हो जाता है (देखें प्रश्न 9 का उत्तर) फिर दूसरे ब्रह्माण्ड में सर्व जीवात्माएं चली जाती हैं। काल ब्रह्म की आत्मा भी चली जाती है। वहाँ इसको पुनः युवा शरीर प्राप्त होता है। इसी प्रकार देवी दुर्गा की मृत्यु होती है। फिर काल ब्रह्म के साथ ही इसको भी युवा शरीर प्राप्त होता है। यह परम अक्षर ब्रह्म का विधान है। तो फिर उस नए ब्रह्माण्ड में दोनों पति-पत्नी रूप में नए रजगुण युक्त ब्रह्म, सतगुण युक्त विष्णु तथा तमगुण युक्त शिव को उत्पन्न करते हैं। फिर उस ब्रह्माण्ड में सृष्टि क्रम प्रारम्भ होता है। इस प्रकार इस काल ब्रह्म की मृत्यु तथा लीला से जन्म होता है। वास्तव में यह नाशवान है। आत्मा सर्व प्राणियों की भी अमर है। आप के

महामण्डलेश्वरों आचार्यों तथा शंकराचार्यों को अध्यात्मिक ज्ञान बिल्कुल नहीं है। इसलिए अनमोल ग्रन्थों को ठीक से न समझकर लोकवेद (दन्तकथा) सुनाते हैं। आप देखें इस गीता अध्याय 4 श्लोक 5 में स्वयं कह रहा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। उन सबको मैं जानता हूँ, तू नहीं जानता। इसका अभिप्राय ऊपर स्पष्ट कर दिया है। सम्भवात् का अर्थ उत्पन्न होना है। यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 में भी कहा है कि कोई तो परमात्मा को (सम्भवात्) जन्म लेने वाला राम व कृष्ण की तरह मानता है, कोई (असम्भवात्) उत्पन्न न होने वाला निराकार मानता है अर्थात् तत्त्वदर्शी सन्त जो सत्यज्ञान बताते हैं, उनसे सुनो। वे बताएंगे कि परमात्मा उत्पन्न होता है या नहीं। वास्तव में परमात्मा स्वयंभू है। वह कभी नहीं जन्मा है और न जन्मेगा। मृत्यु का तो प्रश्न ही नहीं। दूसरी ओर गीता ज्ञान दाता स्वयं कह रहा है कि मैं जन्मता और मरता हूँ, अविनाशी नहीं हूँ। अविनाशी तो “परम अक्षर ब्रह्म” है।

प्रश्न 50 :- (जिन्दा बाबा परमेश्वर जी का) : आप जी ने कहा है कि हम शुद्र को निकट भी नहीं बैठने देते, शुद्ध रहते हैं। इससे भक्ति में क्या हानि होती है?

“कथनी और करनी में अंतर”

उत्तर :- (धर्मदास जी का) :- शुद्र के छू लेने से भक्त अपवित्र हो जाता है, परमात्मा रुष्ट हो जाता है, आत्मग्लानि हो जाती है। हम ऊँची जाति के वैश्य हैं। प्रश्न 51 तथा स्पष्टीकरण (बाबा जिन्दा ने किया) :- यह शिक्षा किसने दी? धर्मदास जी ने कहा हमारे धर्मगुरु बताते हैं, आचार्य, शंकराचार्य तथा ब्राह्मण बताते हैं। परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास को बताया कि कबीर जुलाहा एक बार स्वामी रामानन्द पंडित जी के साथ तोताद्विक नामक स्थान पर सत्संग-भण्डारे में गया। वह स्वामी रामानन्द जी का शिष्य था। सत्संग में मुख्य पण्डित आचार्यों ने सत्संग में बताया कि भगवान राम ने भिलनी शुद्र के झूठे बेर खाए। भगवान तो समदृशी थे। वे तो प्रेम से प्रसन्न होते हैं। भक्त को ऊँचे-नीचे का अन्तर नहीं देखना चाहिए, श्रद्धा देखी जाती है। लक्ष्मण ने सबरी को शुद्र जानकर ग्लानि करके बेर नहीं खाये, फैक दिए, बाद में वे बेर संजीवन बूटी बने। रावण के साथ युद्ध में लक्ष्मण मुर्छित हो गया। तब हनुमान जी द्रोणागिरी पर्वत को उठाकर लाए जिस पर संजीवन बूटी उगी थी। उस बूटी को खाने से लक्ष्मण सचेत हुआ, जीवन रक्षा हुई। ऐसी श्रद्धा थी सबरी की भगवान के प्रति। किसी की श्रद्धा को ठेस नहीं पहुँचानी चाहिए। सत्संग के तुरन्त बाद लंगर (भोजन-भण्डारा) शुरू हुआ। पण्डितों ने पहले ही योजना बना रखी थी कि स्वामी रामानन्द ब्राह्मण के साथ शुद्र जुलाहा कबीर आया है। वह स्वामी रामानन्द का शिष्य है। रामानन्द जी के साथ खाना खाएगा। हम ब्राह्मणों की बेर्जजती होगी। इसलिए दो स्थानों

पर लंगर शुरू कर दिया। जो पण्डितों के लिए भण्डार था। उसमें खाना खाने के लिए एक शर्त रखी कि जो पण्डितों वाले भण्डारे में खाना खाएगा, उसको वेदों के चार मन्त्र सुनाने होंगे। जो मन्त्र नहीं सुना पाएगा, वह सामान्य भण्डारे में भोजन खाएगा। उनको पता था कि कबीर जुलाहा काशी वाला तो अशिक्षित है शुद्र है। उसको वेद मन्त्र कहाँ से याद हो सकते हैं? सब पण्डित जी चार-चार वेद मन्त्र सुना-सुनाकर पण्डितों वाले भोजन-भण्डारे में प्रवेश कर रहे थे। पंक्ति लगी थी। उसी पंक्ति में कबीर जुलाहा (धाणक) भी खड़ा था। वेद मन्त्र सुनाने की कबीर जी की बारी आई। थोड़ी दूरी पर एक भैंसा (झोटा) घास चर रहा था। कबीर जी ने भैंसे को पुकारा। कहा कि हे भैंस पंडित! कृपया यहाँ आइएगा। भैंसा दौड़ा-दौड़ा आया। कबीर जी के पास आकर खड़ा हो गया। कबीर जी ने भैंसे की कमर पर हाथ रखा और कहा कि हे विद्वान भैंस! वेद के चार मन्त्र सुना। भैंसे ने (1) यजुर्वेद अध्याय 5 का मन्त्र 32 सुनाया जिसका भावार्थ भी बताया कि जो परम शान्तिदायक (उसिंग असि), जो पाप नाश कर सकता है (अंगारी), जो बन्धनों का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ है = बम्भारी, वह “कविरसि” कबीर है। स्वज्योति = स्वयं प्रकाशित अर्थात् तेजोमय शरीर वाला “ऋतधामा” = सत्यलोक वाला अर्थात् वह सत्यलोक में निवास करता है। “सम्राटसि” = सब भगवानों का भी भगवान अर्थात् सर्व शक्तिमान है।

(2) ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मन्त्र 26-27 सुनाया। जिसका भावार्थ है कि परमात्मा ऊपर के लोक से गति (प्रस्थान) करके आता है, नेक आत्माओं को मिलता है। भक्ति करने वालों के संकट समाप्त करता है। वह कर्विदेव (कबीर परमेश्वर) है।

(3) ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17 सुनाया जिसका भावार्थ है कि (“कवि:” = कविर) परमात्मा स्वयं पृथ्वी पर प्रकट होकर तत्त्वज्ञान प्रचार करता है। कविर्वाणी (कबीर वाणी) कहलाती है। सत्य आध्यात्मिक ज्ञान (तत्त्वज्ञान) को कबीर परमात्मा लोकोक्तियों, दोहों, शब्दों, चौपाइयों व कविताओं के रूप में पदों में बोलता है।

(4) ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 भी सुनाया। जिसका भावार्थ है कि परमात्मा कवियों की तरह आचरण करता हुआ पृथ्वी पर एक स्थान से दूसरे स्थान जाता है। भैंसा फिर बोलता है कि भोले पंडितों जो मेरे पास इस पंक्ति में जो मेरे ऊपर हाथ रखे खड़ा है, यह वही परमात्मा कबीर है जिसे लोग “कवि” कहकर पुकारते हैं। इन्हीं की कृपा से मैं आज मनुष्यों की तरह वेद मन्त्र सुना रहा हूँ।

कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि भैंसा पंडित आप पंडितों वाले लंगर में प्रवेश करके भोजन ग्रहण करें। मैं तो शुद्र हूँ, अशिक्षित हूँ। इसलिए आम जनता

के लिए लगे लंगर मैं भोजन करने जाता हूँ।

उसी समय सर्व पंडित जो भैंसे को वेदमन्त्र बोलते देखकर एकत्रित हो गए थे। कबीर जी के चरणों में गिर गए तथा अपनी भूल की क्षमा याचना की। परमेश्वर कबीर जी ने कहा :-

करनी तज कथनी कथैं, अज्ञानी दिन रात ।

कुकर ज्यों भौंकत फिरें सुनी सुनाई बात ॥

सत्संग में तो कह रहे थे कि भगवान रामचन्द्र जी ने शुद्र जाति की सबरी (भीलनी) के झूठे बेर रुचि-रुचि खाए, कोई छुआछूत नहीं की और स्वयं को तुम परमात्मा से भी उत्तम मानते हो। कहते हो, करते नहीं। एक-दूसरे से सुनी-सुनाई बात कुत्ते की तरह भौंकते रहते हो। सर्व उपस्थित पंडितों सहित हजारों की सँख्या में कबीर जुलाहे के शिष्य बने, दीक्षा ली। शास्त्रविरुद्ध भक्ति त्यागकर, शास्त्रविधि अनुसार भक्ति शुरू की, आत्म कल्याण कराया।

हे धर्मदास! यही बात आप कह रहे हो कि हम शुद्र को पास भी नहीं बैठने देते। धर्मदास बहुत शर्मसार हुआ। परन्तु परमात्मा की शिक्षा को अपने ऊपर व्यंग्य समझकर खीझ गया तथा कहा कि हे जिन्दा! आप की जली-भूनी बातें अच्छी नहीं लगती। आप को बोलने की सभ्यता नहीं है। कहते हो कि कुत्ते की तरह सुनी-सुनाई बातें तुम सब भौंकते फिरते हो। यह कहकर धर्मदास जी ने मुँह बना लिया। नाराजगी जाहिर की। परमात्मा जिन्दा रूप में अन्तर्धान हो गए। चौथी बार अन्तर्धान हो गए तो धर्मदास का जीना मुश्किल हो गया। पछाड़ खा-खा कर रोने लगा। उस दिन फिर वृद्धावन में धर्मदास से परमात्मा की वार्ता हुई थी। (इस प्रकार परमेश्वर कबीर जी कुल मिलाकर छः बार अन्तर्धान हुए, तब धर्मदास की अकल ठिकाने आई) वृद्धावन मथुरा से चलकर धर्मदास रोता हुआ अपने गांव बांधवगढ़ की ओर वापिस चल पड़ा। धर्मदास जी ने छः महीनों का कार्यक्रम तीर्थों पर भ्रमण का बना रखा था। वह 15 दिन में ही वापिस घर की ओर चल पड़ा। गरीब दास जी ने अपनी अमृतवाणी में कहा है :-

तहां वहां रोवत है धर्मनी नागर, कहां गए मेरे सुख के सागर।

अति वियोग हुआ हम सेती, जैसे निर्धन की लुट जाय खेती।

हम तो जाने तुम देह स्वरूपा, हमरी बुद्धि अन्ध गहर कूपा।

कल्प करे और मन में रोवै, दशों दिशा कूँ वो मध जोहै।

बेग मिलो करहूं अपघाता, मैं ना जीवूं सुनो विधाता।

जब धर्मदास जी बाँधवगढ़ पहुँचा, उस समय बहुत रो रहा था। घर में प्रवेश करके मुँह के बल गिरकर फूट-फूटकर रोने लगा। उसकी पत्नी का नाम आमिनी देवी था। अपने पति को रोते देखकर तथा समय से पूर्व वापिस लौटा देखकर मन-मन में विचार किया कि लगता है भक्तजी को किसी ने लूट लिया है। धन

न रहने के कारण वापिस लौट आया है। धर्मदास जी के पास बैठकर अपने हाथों औंसूं पौँछती हुई बोली - क्यों कच्चा मन कर रहे हो। कोई बात नहीं, किसी ने आपकी यात्रा का धन लूट लिया। आपके पास धन की कमी थोड़े हैं और ले जाना। अपनी तीर्थ यात्रा पूरी करके आना। मैं मना थोड़े करूँगी। कुछ देर बाद दृढ़ मन करके धर्मदास जी ने कहा कि आमिनी देवी यदि रुपये पैसे बाला धन लुट गया होता तो मैं और ले जाता। मेरा ऐसा धन लुट गया है जो शायद अब नहीं मिलेगा। वह मैंने अपने हाथों अपनी मूर्खता से गँवाया है। जिन्दा महात्मा से हुई सर्वज्ञान चर्चा तथा जिन्दा बाबा से सुनी सृष्टि रचना आमिनी देवी को सुनाया। सर्वज्ञान प्रमाणों सहित देखकर आमिनी ने कहा कि सेठ जी आप तो निषुण व्यापारी थे, कभी घाटे का सौदा नहीं करते थे। इतना प्रमाणित ज्ञान फिर भी आप नहीं माने, साधु को तो नाराज होना ही था। कितनी बार आप को मिलेवच्चे की तरह समझाया, आपने उस दाता को क्यों तुकराया? धर्मदास ने कहा आमिनी जीवन में पहली बार हानि का सौदा किया है। यह हानि अब पूर्ति नहीं हो पावेगी। वह धन नहीं मिला तो मैं जीवित नहीं रह पाऊँगा।

छ: महीने तक परमेश्वर जिन्दा नहीं आए। धर्मदास रो-रो अकुलाए, खाना नाममात्र रह गया। दिन में कई-कई बार घण्टों रोना। शरीर सूखकर काँटा हो गया। एक दिन धर्मदास जी से आमिनी देवी ने पूछा कि हे स्वामी! आपकी यह हालत मुझ से देखी नहीं जा रही है। आप विश्वास रखो, जब छ: बार आए हैं तो अबकी बार भी आएंगे। धर्मदास ने कहा कि इतना समय पहले कभी नहीं लगाया। लगता है मुझ पापी से बहुत नाराज हो गए हैं, बात भी नाराजगी की है। मैं महामूर्ख हूँ आमिनी देवी। अब मुझे उनकी कीमत का पता चला है। भोले-भाले नजर आते हैं, वे परमात्मा के विशेष कृपा पात्र हैं। इतना ज्ञान देखा न सुना। आमिनी ने पूछा कि उन्होंने बताया हो कि वे कैसे-कैसे मिलते हैं, कहाँ-कहाँ जाते हैं? धर्मदास जी ने कहा कि वे कह रहे थे कि मैं वहाँ अवश्य जाता हूँ जहाँ पर धर्म-भण्डारे होते हैं। वहाँ लोगों को ज्ञान समझाता हूँ। आमिनी देवी ने कहा कि आप भण्डारा कर दो। हो सकता है कि जिन्दा बाबा आ जाए। धर्मदास जी बोले कि मैं तो तीन दिन का भण्डारा करूँगा। आमिनी देवी पहले तो कंजूसी करती थी। धर्मदास तीन दिन का भण्डारा कहता था तो वह एक दिन पर अड़ जाती थी। परन्तु उस दिन आमिनी ने तुरन्त हाँ कर दी कि कोई बात नहीं आप तीन दिन का भण्डारा करो। धर्मदास जी ने दूर-दूर तक तीन दिन के भण्डारे का संदेश भिजवा दिया। साधुओं का निमन्त्रण भिजवा दिया। निश्चित दिन को भण्डारा प्रारम्भ हो गया। दो दिन बीत गए। साधु-महात्मा आए, ज्ञान चर्चा होती रही। परन्तु जो ज्ञान जिन्दा बाबा ने बताया था। उसका उत्तर किसी के पास नहीं पाया। धर्मदास जी जान-बूझकर साधुओं से प्रश्न करते थे कि क्या

ब्रह्मा, विष्णु, शिव का भी जन्म होता है। उत्तर वही घिसा-पिटा मिलता कि इनके कोई माता-पिता नहीं हैं। इससे धर्मदास को स्पष्ट हो जाता कि वह जिन्दा महात्मा नहीं आया है। वेश बदलकर आता तो भी ज्ञान तो सही बताता। तीसरे दिन भी दो पहर तक मैं जिन्दा बाबा नहीं आए। धर्मदास जी ने दृढ़ निश्चय करके कहा कि यदि आज जिन्दा बाबा नहीं आए तो मैं आत्महत्या करूँगा, ऐसे जीवन से मरना भला। परमात्मा तो अन्तर्यामी हैं। जान गए कि आज भक्त पक्का मरेगा। उसी समय कुछ दूरी पर कंदब का पेड़ था। उसके नीचे उसी जिन्दा वाली वेशभूषा में बैठे धर्मदास को दिखाई दिए। दौड़कर गया, ध्यानपूर्वक देखा, जिन्दा महात्मा के गले से लग गया। अपनी गलती की क्षमा माँगी। कभी ऐसी गलती न करने का बार-बार वचन किया। तब परमात्मा धर्मदास के घर में गए। आमिनी तथा धर्मदास दोनों ने बहुत सेवा की, दोनों ने दीक्षा ली। परमात्मा ने जिन्दा रूप में उनको प्रथम मन्त्र की दीक्षा दी। कुछ दिन परमेश्वर उनके बाग में रहे। फिर एक दिन धर्मदास ने ऐसी ही गलती कर दी, परमात्मा अचानक गायब हो गए। धर्मदास जी ने अपनी गलती को घना (बहुत) महसूस किया। खाना-पीना त्याग दिया, प्रतिज्ञा कर ली कि जब तक दर्शन नहीं दोगे, पीना-खाना बन्द। धर्मदास शरीर से बहुत दुर्बल हो गए। उठा-बैठा भी नहीं जाता था। छठे दिन परमात्मा आए। धर्मदास को अपने हाथों उठाकर गले से लगाया। अपने हाथों खाना खिलाया। धर्मदास ने पहले चरण धोकर चरणामृत लिया। फिर ज्ञान चर्चा शुरू हुई। धर्मदास जी ने पूछा कि आप जी को इतना ज्ञान कैसे हुआ?

परमेश्वर जी ने कहा कि मुझे सतगुरु मिले हैं। वे काशी शहर में रहते हैं। उनका नाम कबीर है। वे तो स्वयं परमेश्वर हैं। सतगुरु का रूप बनाकर लीला कर रहे हैं, जुलाहे का कार्य करते हैं। उन्होंने मुझे सतलोक दिखाया, वह लोक सबसे न्यारा है। वहाँ जो सुख है, वह स्वर्ग में भी नहीं है। सदाबहार फलदार वृक्ष, सुन्दर बाग, दूधों की नदियाँ बहती हैं। सुन्दर नर-नारी रहते हैं। वे कभी वृद्ध नहीं होते। कभी मृत्यु नहीं होती। जो सतगुरु से तत्त्वज्ञान सुनकर सत्यनाम की प्राप्ति करके भवित करता है, वह उस परमधाम को प्राप्त करता है। इसी का वर्णन गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में भी है। धर्मदास जी ने हठ करके कहा कि हे महाराज! मुझे वह अमर लोक दिखाने की कृपा करें ताकि मेरा विश्वास दृढ़ हो। परमेश्वर जी ने कहा कि आप भवित करो। जब शरीर त्यागकर जाएगा तो उस लोक को प्राप्त करेगा। धर्मदास जी के अधिक आग्रह करने पर परमेश्वर जिन्दा ने कहा कि चलो आपको सत्यलोक ले चलता हूँ। धर्मदास की आत्मा को निकालकर ऊपर सत्यलोक में ले गए। परमेश्वर के द्वार पर एक संत्री खड़ा था। जिन्दा बाबा के रूप में खड़े परमेश्वर ने द्वारपाल से कहा कि धर्मदास को परमेश्वर के दर्शन करा के लाओ। द्वारपाल ने एक अन्य हंस (सतलोक में भक्त को हंस कहते

हैं) से कहा कि धर्मदास को परमेश्वर के सिंहासन के पास ले जाओ, सत्यपुरुष के दर्शन करा के लाओ। वहाँ पर बहुत सारे हंस (भक्त) तथा हंसनी (नारी-भक्तमति) इकट्ठे होकर नाचते-गाते धर्मदास जी को सम्मान के साथ लेकर चले। सब हंसों तथा नारियों ने गले में सुन्दर मालाएं पहन रखी थी। उनके शरीर का प्रकाश 16 सूर्यों के समान था। जब धर्मदास जी ने तख्त (सिंहासन) पर बैठे सत्य पुरुष जी को देखा तो वही स्वरूप था जो धरती पर जिन्दा बाबा के रूप में था। परन्तु यहाँ पर परमेश्वर के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा करोड़ चन्द्रमा के प्रकाश से भी कहीं अधिक था। जिन्दा रूप में नीचे से गए परमात्मा तख्त पर विराजमान अपने ही दूसरे स्वरूप पर चॅवर करने लगा। धर्मदास ने सोचा कि जिन्दा तो इस परमेश्वर का सेवक होगा। परन्तु सूरत मिलती-जुलती है। कुछ देर में तख्त पर बैठा परमात्मा खड़ा हुआ तथा जिन्दा सिंहासन पर बैठ गया। तेजोमय शरीर वाले प्रभु जिन्दा के शरीर में समा गया। धर्मदास शर्म के मारे पानी-पानी हो गया। अपने आपको कोसने लगा कि मैं कैसा दुष्ट हूँ। मैंने परमेश्वर को कितना दुःखी किया, कितना अपमानित किया। मुझे वहाँ विश्वास नहीं हुआ। जब दर्शन कराकर सत्यलोक के भक्त वापिस लाए। तीन दिन तक परमात्मा के सत्यलोक में रहा। उधर से धर्मदास को तीन दिन से अचेत देखकर घर, गाँव तथा रिश्तेदार व मित्र बान्धवगढ़ में धर्मदास जी के घर पर इकट्ठे हो गए। कोई झाड़-फूँक करा रहा था। कोई वैध से उपचार करा रहा था, परन्तु सब उपाय व्यर्थ हो चुके थे। किसी को आशा नहीं रही थी कि धर्मदास जिन्दा हो जाएगा। तीसरे दिन परमात्मा ने उसकी आत्मा को शरीर में प्रवेश कर दिया। धर्मदास जी को उस बाग से उठाकर घर ले गए थे। जहाँ से परमात्मा उसको सत्यलोक लेकर गए थे। धर्मदास सचेत हो गया था। धर्मदास जी सचेत होते ही उस बाग में उसी स्थान पर गए तो वही परमात्मा जिन्दा बाबा के रूप में बैठे थे। धर्मदास जी चरणों में गिर गए और कहने लगे हैं प्रभु! मुझ अज्ञानी को क्षमा करो प्रभु! :- “अवगुण मेरे बाप जी, बख्तों गरीब निवाज”।

जो मैं पूत कुपुत हूँ बहुर पिता को लाज”

मुझे विश्वास नहीं हो रहा था कि आप परमात्मा हैं, आप परम अक्षर ब्रह्म हैं। कभी-कभी आत्मा तो कहती थी कि पूर्ण ब्रह्म के बिना ऐसा ज्ञान पृथ्वी पर कौन सुना सकता है, परन्तु मन तुरन्त विपरीत विचार खड़े कर देता था। हे सत्य पुरुष! आपने अपने शरीर की वह शोभा जो सत्यलोक में है, यहाँ क्यों प्रकट नहीं कर रखी?

परमेश्वर जी ने कहा कि धर्मदास! यदि मैं उसी प्रकाशयुक्त शरीर से इस काल लोक में आ जाऊँ तो क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन भी इसी को कहते हैं) व्याकुल हो जाए। मैं अपना सर्व कार्य गुप्त करता हूँ। यह मुझे एक सिद्धी वाला

सन्त मानता है। लेकिन इसको यह नहीं मालूम कि मैं कहाँ से आया हूँ? कौन हूँ? परमेश्वर ने धर्मदास से प्रश्न किया कि आपको कैसा लगा मेरा देश? धर्मदास बोले कि हे परमेश्वर इस संसार में अब मन नहीं लग रहा। उस पवित्र स्थान के सामने तो यह काल का सम्पूर्ण लोक (21 ब्रह्माण्डों का क्षेत्र) नरक के समान लग रहा है। जन्म-मरण यहाँ का अटल विधान है। चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के जीवन भोगना भी अनिवार्य है। प्रत्येक प्राणी इसी आशा को लेकर जीवित हैं कि अभी नहीं मरुंगा परन्तु फिर भी कभी भी मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। प्रत्येक प्राणी एक-दूसरे से कपट से बातें करता है। लेकिन आप के सत्यलोक में सब व्यक्ति प्यार से बातें करते हैं। निष्कपट व्यवहार करते हैं। मैंने तीनों दिन यही जाँच की थी। धर्मदास जी यदि घर उपस्थित स्वजनों को न देखते जो उस के अचेत होने के साक्षी थे तो समझते कि कोई स्वप्न देखा होगा। परन्तु अब दृढ़ निश्चय हो गया था। धर्मदास ने प्रश्न किया।

प्रश्न 52 (धर्मदास जी का) :- हे प्रभु क्या गुरु बदल सकते हैं? सुना है सन्तों से कि गुरु नहीं बदलना चाहिए। गुरु एक, ज्ञान अनेक।

उत्तर (सत्यपुरुष का) :- जब तक गुरु मिले नहीं साचा, तब तक गुरु करो दस पाँच।

कबीर झूठे गुरु के पक्ष को, तजत न लागै वार। द्वार न पावै मोक्ष का, रह वार का वार ॥

भावार्थ : जब तक सच्चा गुरु (सत्तगुरु) न मिले, तब तक गुरु बदलते रहना चाहिए। चाहे कितने ही गुरु क्यों न बनाने पड़ें और बदलने पड़ें। झूठे गुरु को तुरन्त त्याग देना।

कबीर, डूबै थे पर उभरे, गुरु के ज्ञान चमक। बेड़ा देखा जरजरा, उत्तर चले फड़क ॥

भावार्थ : जिस समय मुझे सत्य गुरु मिले, उनके ज्ञान के प्रकाश से पता चला कि हमारा ज्ञान और समाधान (साधना) गलत है तो ऐसे गुरु बदल दिया जैसे किसी डर से पशु फड़क कर बहुत तेज दौड़ता है और जैसे रात्रि में सफर कर रहे यात्रियों को सुबह प्रकाश में पता चले कि जिस नौका में हम सवार हैं, उसमें पानी प्रवेश कर रहा है और साथ में सुरक्षित और साबत नौका खड़ी है तो समझदार यात्री जिसने कोई नशा न कर रखा हो, वह तुरंत फूटी नौका को त्यागकर साबत (सुरक्षित) नौका में बैठ जाता है। मैंने जब काशी में कबीर जी सच्चे गुरु का यह ज्ञान सुना जो आपको सुनाया है तो जाति, धर्म को नहीं देखा। उसी समय सत्यगुरु की शरण में चला गया और दीक्षा मन्त्र लेकर भक्ति कर रहा हूँ। सत्तगुरु ने मुझे दीक्षा देने का आदेश दे रखा है। हे धर्मदास! विचार कीजिए यदि एक वैध से रोगी स्वरथ नहीं होता तो क्या अन्य डॉक्टर के पास नहीं जाता। धर्मदास ने कहा कि जाता है, जाना भी चाहिए, जीवन रक्षा करनी चाहिए। परमेश्वर ने कहा कि इसी प्रकार मनुष्य जन्म जीव कल्याण के लिए मिलता है।

जीव को जन्म-मरण का दीर्घ रोग लगा है। यह सत्यनाम तथा सारनाम बिना समाप्त नहीं हो सकता। दोनों मंत्र काशी में सतगुरु कबीर रहते हैं, उनसे मिलते हैं, पृथ्वी पर और किसी के पास नहीं हैं। आप काशी में जाकर दीक्षा लेना, आपका कल्याण हो जाएगा क्योंकि सत्यगुरु के बिना मेरा वह सत्यलोक प्राप्त नहीं हो सकता।

धर्मदास जी ने कहा कि हे प्रभु! मैंने गुरु रुपदास जी से दीक्षा ले रखी है। मैं पहले उनसे गुरु बदलने की आज्ञा लूँगा, यदि वे कहेंगे तो मैं गुरु बदलूँगा परन्तु धर्मदास की मूर्खता की हृद देखकर परमेश्वर छठी बार अन्तर्धान हो गए। धर्मदास जी फिर व्याकुल हो गए। पहले रुपदास जी के पास गए जो श्री कृष्ण अर्थात् श्री विष्णु जी के पुजारी थे। जो वैष्णव पंथ से जुड़े थे।

धर्मदास जी ने सन्त रुपदास जी से सर्व घटना बताई तथा गुरु बदलने की आज्ञा चाही। सन्त रुपदास जी अच्छी आत्मा के इन्सान थे। उन्होंने कहा बेटा धर्मदास! जो ज्ञान आपने सुना है जिस जिन्दा बाबा से, यह ज्ञान भगवान ही बता सकता है। मेरी तो आयु अधिक हो गई है। मैं तो इस मार्ग को त्याग नहीं सकता। आप की इच्छा है तो आप उस महात्मा से दीक्षा ले सकते हो।

तब धर्मदास जी काशी में गए, वहाँ पर कबीर जुलाहे की झोंपड़ी का पता किया। वहाँ कपड़ा बुनने का कार्य करते कबीर परमेश्वर को देखकर आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। खुशी भी अपार हुई कि सतगुरु तथा परमेश्वर यही है। तब उनसे दीक्षा ली और अपना कल्याण कराया। कबीर परमेश्वर जी ने धर्मदास जी को फिर दो अक्षर (जिस में एक ओम् ऊँ मन्त्र है तथा दूसरा तत् जो सांकेतिक है) का सत्यनाम दिया। फिर सारनाम देकर सतलोक का वासी किया।

- ❖ कलयुग में परमात्मा अन्य निम्न अच्छी आत्माओं (दृढ़ भक्तों) को मिले:-
- 2. संत मलूक दास (अरोड़ा) जी को मिले।
- 3. संत दादू दास जी आमेर (राजस्थान वाले) को मिले।
- 4. संत नानक देव जी को सुल्तानपुर शहर के पास बह रही ब्रह्म नदी पर मिले जहाँ गुरु द्वारा "सच्चखण्ड साहेब" यादगार रूप में बना है।
- 5. संत गरीब दास जी गाँव छुड़ानी जिला झज्जर (हरियाणा) वाले को मिले, उस स्थान पर वर्तमान में यादगार बनी हुई है।

संत गरीब दास जी 10 वर्ष के बच्चे थे। अपने ही खेतों में अन्य कई ग्वालों के संग गऊएं चराने जाया करते थे, परमेश्वर जिन्दा बाबा के रूप में सत्यलोक (सच्चखण्ड) से चलकर आए। यह लोक सर्व भवनों के ऊपर ही जहाँ परमात्मा रहते हैं, सन्त गरीब दास जी की आत्मा को ऊपर अपने लोक में परमेश्वर लेकर गए। बच्चे को मृत जानकर शाम को चिता पर रखकर अन्तिम संस्कार वाले थे। तत्काल परमात्मा ने सन्त गरीबदास जी की आत्मा को ऊपर ब्रह्माण्डों का भ्रमण

कराकर सत्य ज्ञान बताकर शरीर में प्रवेश कर दिया, बालक जीवित हो गया। यह घटना फाल्गुन शुद्धि द्वादशी संवत् 1784 सन् 1727 की है। संत गरीब दास जी को परमात्मा ने तत्त्वज्ञान प्रदान किया। उनका ज्ञान योग खोल दिया। जिस कारण से संत गरीब दास जी ने 24 हजार वाणी बोली जो संत गोपाल दास जी द्वारा लिखी गई। उन अमृतवाणियों को प्रिन्ट कराकर ग्रन्थ रूप दे दिया है। यह दास (संत रामपाल दास) उसी से सत्संग किया करता है।

संत गरीब दास जी ने अमृत वाणी में कहा है :-

गरीब, हम सुलतानी नानक तारे, दाढ़ू को उपदेश दिया।

जाति जुलाहा भेद ना पाया, काशी मांहे कबीर हुआ ॥

गरीब, अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड का, एक रति नहीं भार।

सतगुरु पुरुष कबीर हैं, कुल के सिरजनहार ॥

भावार्थ :- संत गरीब दास जी ने परमात्मा से प्राप्त दिव्य दृष्टि से देखकर भूत-भविष्य का ज्ञान कहा है, बताया है कि जो काशी नगर (उत्तर प्रदेश) में जुलाहा कबीर जी थे। वे सर्व ब्रह्माण्डों के सृजनहार हैं। उनको अपनी शक्ति ठहराया है। परमेश्वर कबीर जी पर उनका कोई भार नहीं है। जैसे वैज्ञानिकों ने हवाई जहाज, रॉकेट बनाकर उड़ा दिये, स्वयं भी बैठ कर यात्रा करते हैं, इस प्रकार संत गरीब दास जी ने परमेश्वर जी को आँखों देखकर उनकी महिमा बताई है।

6. संत धीसा दास जी गाँव-खेखड़ा जिला बागपत (उत्तर प्रदेश) को मिले थे।

पुस्तक विस्तार को मध्यनजर रखते हुए अधिक विस्तार नहीं कर रहा हूँ, अधिक जानकारी के लिए www.jagatgururampalji.org से खोलकर अधिक ज्ञान ग्रहण कर सकते हैं।

(देखें फोटोकापी वेदमन्त्रों की)

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 86 मन्त्र 26-27)

इन्दुः पुनानो अतिं गाहते मृषो विश्वानि कृष्वन्तसुपथानि यज्यते ।

गाः कृष्वानो निर्णिं दर्यतः कविरस्यो न क्रीळपरि वार्यर्षति ॥२६॥

पदार्थः—(यज्यते) यज्ञ करने वाले यजमानों के लिये परमात्मा (विश्वानि सुपथानि) सब रास्तों को (कृष्वन्त) सुगम करता हुआ (मृषः) उनके निधनों को (अतिंगाहते) महंत करता है। और (पुनानः) उनको पवित्र करता हुआ और (निर्णिं) अपने रूप को (गाः कृष्वानः) सरल करता हुआ (दर्यतः) वह कान्तिमय परमात्मा (कविः) सर्वज्ञ (अर्थो न) विद्युत के समान (कीळत्) क्रीड़ा करता हुआ (वार्य) वरणीय पुरुष को (पर्यर्षति) प्राप्त होता है ॥२६॥

विवेचन :- यह फोटोकापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मन्त्र 26 की है जो

आर्यसमाज के आचार्यों व महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा अनुवादित है जिसमें स्पष्ट है कि यज्ञ करने वाले अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान करने वाले यजमानों अर्थात् भक्तों के लिए परमात्मा, सब रास्तों को सुगम करता हुआ अर्थात् जीवन रूपी सफर के मार्ग को दुःखों रहित करके सुगम बनाता हुआ। उनके विघ्नों अर्थात् संकटों का मर्दन करता है अर्थात् संकटों को समाप्त करता है। भक्तों को पवित्र अर्थात् पाप रहित, विकार रहित करता है। जैसा की अगले मन्त्र 27 में कहा है कि "जो परमात्मा द्यूलोक अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है, वहाँ पर परमात्मा के शरीर का प्रकाश बहुत अधिक है।" उदाहरण के लिए परमात्मा के एक रोम (शरीर के बाल = जिसे रूंए भी कहते हैं) का प्रकाश करोड़ सूर्य तथा इतने ही चन्द्रमाओं के मिले-जुले प्रकाश से भी अधिक है। यदि वह परमात्मा उसी प्रकाश युक्त शरीर से पृथ्वी पर प्रकट हो जाए तो हमारी चर्म दृष्टि उन्हें देख नहीं सकती। जैसे उल्लु पक्षी दिन में सूर्य के प्रकाश के कारण कुछ भी नहीं देख पाता है। यही दशा मनुष्यों की हो जाए। इसलिए वह परमात्मा अपने रूप अर्थात् शरीर के प्रकाश को सरल करता हुआ उस स्थान से जहाँ परमात्मा ऊपर रहता है, वहाँ से गति करके बिजली के समान क्रीड़ा अर्थात् लीला करता हुआ चलकर आता है, श्रेष्ठ पुरुषों को मिलता है। यह भी स्पष्ट है कि आप कवि: अर्थात् कविर्देव हैं। हम उन्हें कबीर साहेब कहते हैं।

**असश्वतः शतधारा अभिभियो हरि नवनन्तेऽव ता उदुन्युवः ।
क्षिपौ मृजन्तु परि गोभिरावृतं वृतीये पृष्ठे अधिं रोचने दिवः ॥२७॥**

परार्थः—(उदन्युवः) प्रेम की (ता:) वे (शतधारा:) सैंकड़ों धाराएं (असश्वतः) जो नानारूपों में (अभिभियः) स्थिति को लाभ कर रही हैं। वे (हरि) परमात्मा को (अवनवन्ते) प्राप्त होती हैं। (गोभिरावृतं) प्रकाशपुञ्ज परमात्मा को (क्षिपः) बुद्धिवृत्तियाँ (मृजन्ति) विषय करती हैं। जो परमात्मा (दिवस्ततीये पृष्ठे) द्यूलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है और (रोचने) प्रकाशस्वरूप है उसको बुद्धिवृत्तियाँ प्रकाशित करती हैं ॥२७॥

विवेचन :- यह फोटोकापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 के मन्त्र 27 की है। इसमें स्पष्ट है कि "परमात्मा द्यूलोक अर्थात् अमर लोक के तीसरे पृष्ठ अर्थात् भाग पर विराजमान है। सत्यलोक अर्थात् शाश्वत् स्थान (गीता अध्याय 18 श्लोक 62) में तीन भाग है। एक भाग में वन-पहाड़-झारने, बाग-बगीचे आदि हैं। यह बाह्य भाग है अर्थात् बाहरी भाग है। (जैसे भारत की राजधानी दिल्ली भी तीन भागों में बँटी है। बाहरी दिल्ली जिसमें गाँव खेत-खलिहान और नहरें हैं, दूसरा बाजार बना है। तीसरा संसद भवन तथा कार्यालय हैं।)

इसके पश्चात् द्यूलोक में बस्तियाँ हैं। सपरिवार मोक्ष प्राप्त हंसात्माएँ रहती हैं। (पृथ्वी पर जैसे भक्त को भक्तात्मा रहते हैं, इसी प्रकार सत्यलोक में हंसात्मा

कहलाते हैं।) (3) तीसरे भाग में सर्वोपरि परमात्मा का सिंहासन है। उसके आस-पास केवल नर आत्माएँ रहती हैं, वहाँ स्त्री-पुरुष का जोड़ा नहीं है। वे यदि अपना परिवार चाहते हैं तो शब्द (वचन) से केवल पुत्र उत्पन्न कर लेते हैं। इस प्रकार शाश्वत् रथान अर्थात् सत्यलोक तीन भागों में परमात्मा ने बाँट रखा है। वहाँ वृद्धावस्था नहीं है, वहाँ मृत्यु नहीं है। इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है कि जो जरा अर्थात् वृद्ध अवस्था तथा मरण अर्थात् मृत्यु से छूटने का प्रयत्न करते हैं, वे तत् ब्रह्म अर्थात् अक्षर ब्रह्म को जानते हैं। सत्यलोक में सत्यपुरुष रहता है, वहाँ पर जरा-मरण नहीं है, बच्चे फिर सदा युवा रहते हैं।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 82 मन्त्र 1-2)

**असावि सोमो अहवो वृषा हरी राजेव दस्मो अभि गा अचिकदत् ।
पुनानो वारं पर्येत्यव्ययं इयेनो न योनि घृतवन्तमासदंम् ॥१॥**

पदार्थः—(सोमः) जो सर्वोत्पादक प्रभु(श्रुष्टः) प्रकाशस्वरूप (वृषा) सदगुणों की वृष्टि करने वाला (हरिः) पापों के हरण करने वाला है, वह (राजेव) राजा के रामान् (दस्मः) दर्शनीय है। और वह (गा:) पृथिव्यादि लोक-लोकान्तरों के चारों ओर (अभि अचिकदत्) शब्दायमान हो रहा है। वह (वारं) वर्णीय पुरुष को जो (अव्ययं) दृढ़मक्त है उसको (पुनानः) पवित्र करता हुआ (पर्येति) प्राप्त होता है। (न) जिस प्रकार (इयेनः) विद्युत् (घृतवन्तं) स्नेहवाले (आसदं) स्थानों को (योनि) आधार बनाकर प्राप्त होता है। इसी प्रकार उक्त गुण वाले परमात्मा ने (असावि) इस ब्रह्माण्ड को उत्पन्न किया ॥१॥

**कविर्बृहस्या पर्येषि माहिनमत्यो न मृष्टे अभिं वाजंपर्षसि ।
अपसेबन्दुरिता सोम मूलय वृतं वसानः परिं यासि निर्णिजम् ॥२॥**

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (बृहस्या) उपदेश करने की इच्छा से आप (माहिनं) महापुरुषों को (पर्येषि) प्राप्त होते हो। और आप (अत्यः) अत्यन्त गतिशील पदार्थ के (न) समान (अभिवाजं) हमारे आध्यात्मिक यज्ञ को (अप्यर्षसि) प्राप्त होते हैं। आप (कविः) सर्वज्ञ हैं (मूष्टः) शुद्ध स्वरूप हैं (दुरिता) हमारे पापों को (अपसेबनं) दूर करके (सोम) हे सोम ! (मूलय) आप हमको सुख दें। और (घृतं वसानः) प्रेम-भाव को उत्पन्न करते हुए (निर्णिजं) पवित्रता को (परियासि) उत्पन्न करें ॥२॥

विवेचन :- ऊपर ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मन्त्र 1-2 की फोटोकापी हैं, यह अनुवाद महर्षि दयानन्द जी के दिशा-निर्देश से उन्हीं के चेलों ने किया है और

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली से प्रकाशित है।

इनमें स्पष्ट है कि :- मन्त्र 1 में कहा है “सर्व की उत्पत्ति करने वाला परमात्मा तेजोमय शरीर युक्त है, पापों को नाश करने वाला और सुखों की वर्षा करने वाला अर्थात् सुखों की झड़ी लगाने वाला है, वह ऊपर सत्यलोक में सिंहासन पर बैठा है जो देखने में राजा के समान है।

यही प्रमाण सूक्ष्मवेद में है कि :-

अर्श कुर्श पर सफेद गुमट है, जहाँ परमेश्वर का डेरा ।

श्वेत छत्र सिर मुकुट विराजे, देखत न उस चेहरे नूँ ॥

यही प्रमाण बाईबल ग्रन्थ तथा कुर्झन् शरीफ में है कि परमात्मा ने छः दिन में सृष्टि रची और सातवें दिन ऊपर आकाश में तख्त अर्थात् सिंहासन पर जा विराजा । (बाईबल के उत्पत्ति ग्रन्थ 2/26-30 तथा कुर्झन् शरीफ की सुर्त “फुर्कानि 25 आयत 52 से 59 में है ।)

वह परमात्मा अपने अमर धाम से चलकर पृथ्वी पर शब्द वाणी से ज्ञान सुनाता है । वह वर्णीय अर्थात् आदरणीय श्रेष्ठ व्यक्तियों को प्राप्त होता है, उनको मिलता है । {जैसे 1. सन्त धर्मदास जी बांधवगढ़(मध्य प्रदेश वाले को मिले) 2. सन्त मलूक दास जी को मिले, 3. सन्त दादू दास जी को आमेर (राजस्थान) में मिले 4. सन्त नानक देव जी को मिले 5. सन्त गरीब दास जी गाँव छुड़ानी जिला झज्जर हरियाणा वाले को मिले 6. सन्त धीसा दास जी गाँव खेखड़ा जिला बागपत (उत्तर प्रदेश) वाले को मिले 7. सन्त जम्भेश्वर जी (बिश्नोई धर्म के प्रवर्तक) को गाँव समराथल राजस्थान वाले को मिले}

वह परमात्मा अच्छी आत्माओं को मिलते हैं । जो परमात्मा के दृढ़ भक्त होते हैं, उन पर परमात्मा का विशेष आकर्षण होता है । उदाहरण भी बताया है कि जैसे विद्युत अर्थात् आकाशीय बिजली स्नेह वाले स्थानों को आधार बनाकर गिरती है । जैसे कांशी धातु पर बिजली गिरती है, पहले कांशी धातु के कटोरे, गिलास-थाली, बेले आदि-आदि होते थे । वर्षा के समय तुरन्त उठाकर घर के अन्दर रखा करते थे । वृद्ध कहते थे कि कांशी के बर्तन पर बिजली अमूमन गिरती है, इसी प्रकार परमात्मा अपने प्रिय भक्तों पर आकर्षित होकर मिलते हैं ।

मन्त्र नं. 2 में तो यह भी स्पष्ट किया है कि परमात्मा उन अच्छी आत्माओं को उपदेश करने की इच्छा से खुद महापुरुषों को मिलते हैं । उपदेश का भावार्थ है कि परमात्मा तत्वज्ञान बताकर उनको दीक्षा भी देते हैं । उनके सतगुरु भी रख्यं परमात्मा होते हैं । यह भी स्पष्ट किया है कि परमात्मा अत्यन्त गतिशील पदार्थ अर्थात् बिजली के समान तीव्रगामी होकर हमारे धार्मिक अनुष्ठानों में आप पहुँचते हैं । आप आगे पढ़ेंगे कि सन्त धर्मदास को परमात्मा ने यही कहा था कि मैं वहाँ पर अवश्य जाता हूँ जहाँ धार्मिक अनुष्ठान होते हैं क्योंकि मेरी अनुस्थिति में काल कुछ भी उपद्रव कर देता है । जिससे साधनों की आस्था परमात्मा से छूट जाती है । मेरे रहते वह ऐसी गड़बड़ नहीं कर सकता । इसीलिए गीता अध्याय 3 श्लोक

15 में कहा है कि वह अविनाशी परमात्मा जिसने ब्रह्म को भी उत्पन्न किया, सदा ही यज्ञों में प्रतिष्ठित है अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों में उसी को ईष्ट रूप में मानकर आरती स्तुति करनी चाहिए।

इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मन्त्र 2 में यह भी स्पष्ट किया है कि आप (कविर्वेधस्य) कविर्देव हैं जो सर्व को उपदेश देने की इच्छा से आते हों, आप पवित्र परमात्मा हैं। हमारे पार्णों को छुड़वाकर अर्थात् नाश करके हैं अमर परमात्मा! आप हम को सुःख दें और (द्युतम् वसानः निर्निजम् परियसि) हम आप की सन्तान हैं। हमारे प्रति वह वात्सल्य वाला प्रेम भाव उत्पन्न करते हुए उसी (निर्निजम्) सुन्दर रूप को (परियासि) उत्पन्न करें अर्थात् हमारे को अपने बच्चे जानकर जैसे पहले और जब चाहें तब आप अपनी प्यारी आत्माओं को अपने बच्चे जानकर जैसे पहले और जब चाहें तब आप अपनी प्यारी आत्माओं को प्रकट होकर मिलते हैं, उसी तरह हमें भी दर्शन दें।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 96 मन्त्र 16 से 20)

स्वायुधः सोतुभिः पूयमां नोऽस्यैषु^० गुह्यं चारु नामं ।

अभि वाज्ञं सप्तिरिव अवस्याभि वायुमभि गा देव सोम ॥१६॥ ✓

पदार्थः——हे परमात्मन् ! (गुह्यम्) सर्वोपरि रहस्य (चारु) श्रेष्ठ (नाम) जो तुम्हारी संज्ञा है। (अस्यर्थं) उसका ज्ञान करायें। आप (सोतुभिः, पूयमानः) उपासक लोगों से स्तूप्यमान हैं। (स्वायुधः) स्वाभाविक शक्ति से युक्त हैं और (सप्तिरिव) विद्युत् के समान (अवस्याभि) ऐश्वर्य के सम्मुख प्राप्त कराइये और (वायुमभि) हमको प्राणों की विद्या का वेत्ता बनाइये। (देव) हे सर्वशक्ति-सम्पन्न परमेश्वर ! हमको (गाः) इन्द्रियों के (अभिगमय) नियमन का जाता बनाइये ॥१६॥

शिशुं जज्ञानं हर्यतं मृजन्ति शुभन्ति वह्नि मूरुतो गणेन् । ✓

कविर्गीभिः काव्येना कविः सन्त्सोमः पवित्रमत्येति रेभन् । १७॥

पदार्थः—(शिशुम्) “श्यति सूक्ष्मं करोति प्रलयकाले जगदिति शिशुः परमात्मा” उस परमात्मा को (जज्ञानम्) जो सदा प्रकट है, (हर्यतः) जो अत्यन्त कमनीय है, उसको उपासक लोग (मृजन्ति) बुद्धिविषय करते हैं और (शुभन्ति) उसकी स्तुति द्वारा उसके गुणों का वर्णन करते हैं और (मूरुतः) विद्वान् लोग (वह्निम्) उस गतिशील परमात्मा का (गणेन) गुणों द्वारा वर्णन करते हैं और (कविः) कवि लोग (गीभिः) वाणो द्वारा और (कव्येन) कवित्व से उसकी स्तुति करते हैं। (सोमः) सोमस्वरूप (पवित्रम्) पवित्र वह परमात्मा कारणावस्था में अतिसूक्ष्म प्रकृति को (रेभन्, सन्) गर्जता हुआ (अत्येति) अतिक्रमण करता है ॥१७॥

केवल हिन्दी :- (शिशुम् जज्ञानम् हर्यन्तम्) परमेश्वर जान-बूझकर तत्त्वज्ञान

बताने के उद्देश्य से शिशु रूप में प्रकट होता है, उनके ज्ञान को सुनकर (मरुतो गणेन) भक्तों का बहुत बड़ा समूह उस परमात्मा का अनुयाई बन जाता है। (मृजन्ति शुस्यन्ति वहिन)

वह ज्ञान बुद्धिजीवी लोगों को समझ आता है, वे उस परमेश्वर की स्तुति भवित तत्त्वज्ञान के आधार से करते हैं, वह भवित (वहिन) शीघ्र लाभ देने वाली होती है। वह परमात्मा अपने तत्त्वज्ञान को (काव्येना) कवित्व से अर्थात् कवियों की तरह दोहों, शब्दों, लोकोवित्यों, चौपाईयों द्वारा (कविर् गीर्भिः) कविर् वाणी द्वारा अर्थात् कबीर वाणी द्वारा (पवित्रम् अतिरेमन) शुद्ध ज्ञान को उच्चे स्वर में गर्ज-गर्जकर बोलते हैं। वे (कविः) कवि की तरह आचरण करने वाला कविर्देव (सन्त) सन्त रूप में प्रकट (सोम) अमर परमात्मा होता है। (ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17) विशेष :- इस मन्त्र के मूल पाठ में दो बार "कविः" शब्द है, आर्य समाज के अनुवादकर्ताओं ने एक (कविः) का अर्थ ही नहीं किया है।

ऋषिमना: य ऋषिकृतस्वर्षाः सुहस्त्रणीथः पदवीः कवीनाम् ।

तृतीयं धामं महिषः सिष्मामन्तसोमो विराजमनु रोजति षुप् ॥१८॥

पदार्थः—(सोमः) सोमस्वरूप परमात्मा (सिसासन्) पालन की इच्छा करता हुआ (महिषः) जो महान् है वह परमात्मा (तृतीयं, धाम) देवयान और पितृयान इन दोनों से पृथक तीसरा जो मुक्तिधाम है। उसमें (विराजम्) विराजमान जो ज्ञानयोगी है उसको (अनुराजति) प्रकाश करने वाला है और (स्तुप) स्तूपयान है। (कवीनाम्, पदवीः) जो कान्तदर्शियों की पदवी अर्थात् मुख्य स्थान है और (सहस्रनीयः) अनन्त प्रकार से स्तवनीय है, (ऋषिमनाः) सर्वज्ञान के साधनरूप मनवाला वह परमात्मा (यः) जो (ऋषिकृत) सब ज्ञानों का प्रदाता (स्वर्षाः) सूर्यादिकों को प्रकाशक है। वह जिज्ञासु के लिए उपासनीय है॥१८॥

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 18 पर विवेचन करते हैं। इसके अनुवाद में भी बहुत-सी गलतियाँ हैं। हम संस्कृत भी समझ सकते हैं, विवेचन करता हूँ तथा यथार्थ अनुवाद व भावार्थ रूप स्थिति करता हूँ। मन्त्र 17 में कहा है कि ऋषि या सन्त रूप में प्रकट होकर परमात्मा अमृतवाणी अपने मुख कमल से बोलता है और उस ज्ञान को समझकर अनेकों अनुयाईयों का समूह बन जाता है। (य) जो वाणी परमात्मा तत्त्वज्ञान की सुनाता है, वे (ऋषिकृत) ऋषि रूप में प्रकट परमात्मा कृत (सहस्रनीयः) हजारों वाणियाँ अर्थात् कबीर वाणियाँ (ऋषिमना) ऋषि स्वभाव वाले भक्तों के लिए (स्वर्षाः) आनन्ददायक होती हैं। (कविनाम पदवीः) कवित्व से दोहों, चौपाईयों में वाणी बोलने के कारण वह परमात्मा प्रसिद्ध कवि की भी पदवी प्राप्त करता है। वह (सोम) अमर परमात्मा (सिसासन्) सर्व की पालन की इच्छा करता हुआ प्रथम स्थिति में (महिवः) बड़ी पृथ्यी अर्थात् ऊपर

के लोकों में (तृतीयम् धाम) तीसरे धाम अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पृष्ठ पर (अनुराजति) तेजोमय शरीर युक्त (स्तुप) गुम्बज में (विराजम्) विराजमान है, वहाँ बैठा है। यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 में है कि परमात्मा सर्व लोकों के ऊपर के लोक में विराजमान है, (तिष्ठन्ति) बैठा है।

**चृष्टच्छ्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुदृःस आयुधानि विभ्रत् ।
अपामूर्भि सच्चमानः समुद्रं तुरीयं धामं महिषो विवक्ति ॥१९ ।**

पदार्थः—(अपामूर्भिस्) प्रकृति की सूक्ष्म में सू म शक्तियों के साथ (सच्चमानः) जो संगत है और (समुद्रम्) “सम्यक् द्रवन्ति भूतानि यस्मात् स समुद्रः” जिससे सब भूतों की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय होता है। वह (तुरीयम्) चौथा (धाम) परमपद परमात्मा है। उसको (महिषः) मह्यते इति महिषः महिष इति महन्नामसु पठितम् निं० ३—१३। महापुरुष उक्त तुरीय परमात्मा का (विवक्ति) वर्णन करता है। वह परमात्मा (चमूसत्) जो प्रत्येक बल में स्थित है (इयेनः) सर्वोक्तर प्रशंसनीय है और (शकुनः) सर्वशक्तिमान् है। (गोविन्दः) यजमानों को उत्पत्त करके जो (द्रवः) शीघ्रगति वाला है (आयुधानि, विभ्रत्) अनन्त शक्तियों को धारण करता हुआ इस सम्पूर्ण संसार का उत्पादक है ॥१६॥

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 19 का भी आर्य समाज के विद्वानों ने अनुवाद किया है। इसमें भी बहुत सारी गलतियाँ हैं। पुस्तक विस्तार के कारण केवल अपने मत्तलब की जानकारी प्राप्त करते हैं।

इस मन्त्र में चौथे धाम का वर्णन है जो आप जी सृष्टि रचना में पढ़ेंगे, उससे पूर्ण जानकारी होगी पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 128 पर।

परमात्मा ने ऊपर के चार लोक अजस्र-अमर रखे हैं। 1. अनामी लोक जो सबसे ऊपर है। 2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सत्यलोक।

हम पृथ्वी लोक पर हैं, यहाँ से ऊपर के लोकों की गिनती करेंगे तो 1. सत्यलोक 2. अलख लोक 3. अगम लोक तथा 4. अनामी लोक उस चौथे धाम में बैठकर परमात्मा ने सर्व ब्रह्माण्डों व लोकों की रचना की। शेष रचना सत्यलोक में बैठकर की थी। आर्य समाज के अनुवादकों ने तुरिया परमात्मा अर्थात् चौथे परमात्मा का वर्णन किया है। यह चौथे धाम है। उसमें मूल पाठ मन्त्र 19 का भावार्थ है कि तत्त्वदर्शी सन्त चौथे धाम तथा चौथे परमात्मा का (विवक्ति) भिन्न-भिन्न वर्णन करता है। पाठक जन कृपया पढ़ें सृष्टि रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 128 पर जिससे आप जी को ज्ञान होगा कि लेखक (संत रामपाल दास) ही वह तत्त्वदर्शी संत है जो तत्त्वज्ञान से परीचित है।

**मर्यो न शुभ्रस्तन्वं मृजानोऽत्यो न सृत्वा सनये धनानाम् ।
वृषेव यूथा परि कोशमर्षन्कनिकदच्चम्बोऽरा विवेश ॥२०॥**

पदार्थः——वह परमात्मा (यूथा, वृषेव) जिस प्रकार एक संघ को उसका सेनापति प्राप्त होता है, इसी प्रकार (कोशम्) इस ब्रह्माण्डरूपी कोश को (अर्षन्) प्राप्त होकर (कनिकदत्) उच्च स्वर से गर्जता हुआ (चम्बोः) इस ब्रह्माण्ड रूपी विस्तृत प्रकृति-खण्ड में (पर्याविवेश) भली-भांति प्रविष्ट होता है और (न) जैसे कि (मर्यः) मनुष्य (शुभ्रस्तन्वं, मृजानः) शुभ्र शरीर को धारण करता हुआ (अत्यन्त) अत्यन्त गतिशील पदार्थों के समान (सनये) प्राप्ति के लिए (सृत्वा) गतिशील होता हुआ (धनानाम्) धनों के लिए कटिबद्ध होता है; इसी प्रकार प्रकृति-रूपी ऐश्वर्य को धारण करने के लिए परमात्मा सदैव उद्यत है ॥२०॥

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 का यथार्थ ज्ञान जानते हैं:-

इस मन्त्र का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा किया गया है, इनका दृष्टिकोण यह रहा है कि परमात्मा निराकार है क्योंकि महर्षि दयानन्द जी ने यह बात दृढ़ की है कि परमात्मा निराकार है। इसलिए अनुवादक ने सीधे मन्त्र का अनुवाद घुमा-फिराकर किया है। जैसे मूल पाठ में लिखा है:-

मर्य न शमः तन्वा मृजानः अत्यः न सृत्वा सनये धनानाम् ।

वृषेव यूथा परि कोशम अर्षन् कनिक्रदत् चम्बोः आविवेश ॥

अनुवाद :- (न) जैसे (मर्यः) मनुष्य सुन्दर वस्त्र धारण करता है, ऐसे परमात्मा (शुभ्रः तन्व) सुन्दर शरीर (मृजानः) धारण करके (अत्यः) अत्यन्त गति से चलता हुआ (सनये धनानाम्) भक्ति धन के धनियों अर्थात् पुण्यात्माओं को (सनये) प्राप्ति के लिए आता है। (यूथा वृषेव) जैसे एक समुदाय को उसका सेनापति प्राप्त होता है, ऐसे वह परमात्मा सनत व ऋषि रूप में प्रकट होता है तो उसके बहुत सँख्या में अनुयाई बन जाते हैं और परमात्मा उनका गुरु रूप में मुखिया होता है। वह परमात्मा (कोशम्) अर्थात् (परि कोशम्) प्रथम ब्रह्माण्ड में (अर्षन्) प्राप्त होकर अर्थात् आकर (कनिक्रदत्) ऊँचे स्वर में सत्यज्ञान उच्चारण करता हुआ (चम्बोः) पृथ्वी खण्ड में (अविवेश) प्रविष्ट होता है।

भावार्थ :- जैसे पूर्व में वेद मन्त्रों में कहा है कि परमात्मा ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके पृथ्वी पर आता है, अपने रूप को अर्थात् शरीर के तेज को सरल करके आता है। इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 में उसी की पुष्टि की है। कहा है कि परमात्मा ऐसे अन्य शरीर धारण करके पृथ्वी पर आता है जैसे मनुष्य वस्त्र धारण करता है और (धनानाम्) दृढ़ भक्तों (अच्छी पुण्यात्माओं) को प्राप्त होता है, उनको वाणी उच्चारण करके तत्त्वज्ञान सुनाता है।

विवेचन :- ये ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 से 20 की फोटोकापियाँ हैं, जिनका हिन्दी अनुवाद महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्यसमाज प्रवर्तक के

दिशा-निर्देश से उनके आर्यसमाजी चेलों ने किया है। यह अनुवाद कुछ-कुछ ठीक है, अधिक गलत है। पहले अधिक ठीक या कुछ-कुछ गलत था जो मेरे द्वारा शुद्ध करके विवेचन में लिख दिया है। अब अधिक गलत को शुद्ध करके लिखता हूँ।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 में कहा है कि :-

हे परमात्मा! आपका जो गुप्त वास्तविक (चारू) श्रेष्ठ (नाम) नाम है, उसका ज्ञान कराएँ। प्रिय पाठको! जैसे भारत के राजा को प्रधानमन्त्री कहते हैं, यह उनकी पदवी का प्रतीक है। उनका वास्तविक नाम कोई अन्य ही होता है। जैसे पहले प्रधानमन्त्री जी पंडित जवाहर लाल नेहरू जी थे। “जवाहरलाल” उनका वास्तविक नाम है। आपका जो वास्तविक नाम है वह (सोतृमिः) उपासना करने का (स्व आयुधः) स्वचलित शस्त्र के समान (पूयमानः) अज्ञान रूपी गन्द को नाश करके पापनाशक है। आप अपने उस सत्य मन्त्र का हमें ज्ञान कराएँ। (देव सोमः) हे अमर परमेश्वर! आपका वह मन्त्र श्वासों द्वारा नाक आदि (गाः) इन्द्रियों से (वासुम् अभि) श्वास-उश्वास से जपने से (सप्तिरिव = सप्तिः इव) विद्युत् जैसी गति से अर्थात् शीघ्रता से (अभिवाजं) भक्ति धन से परिपूर्ण करके (श्रवस्यामी) ऐश्वर्य को तथा मोक्ष को प्राप्त कराईये।

प्रिय पाठकों से निवेदन है कि इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 के अनुवाद में बहुत-सी गलतियाँ थीं जो शुद्ध कर दी हैं। प्रमाण के लिए मूल पाठ में “वाजं अभी” शब्द है इसका अनुवाद नहीं किया गया है। इसके स्थान पर “अभिगमय” शब्द का अर्थ जोड़ा है जो मूल पाठ में नहीं है।

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17 के अनुवाद में भी बहुत गलतियाँ हैं जो आर्यसमाजियों द्वारा अनुवादित हैं। अब शुद्ध करके लिखता हूँ:-

जैसा कि पूर्वोक्त ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 तथा 82 के मन्त्रों में प्रमाण है कि परमात्मा अपने शाश्वत् स्थान से जो द्यूलोक के तीसरे स्थान पर विराजमान है, वहाँ से चलकर पृथ्वी पर जान-बूझकर किसी खास उद्देश्य से प्रकट होता है। परमात्मा सर्व ब्रह्माण्डों में बसे प्राणियों की परवरिश तीन रिथ्ति में करते हैं। 1. परमात्मा ऊपर सत्यलोक अर्थात् अविनाशी धाम में सिंहासन (तख्त) पर बैठकर सर्व ब्रह्माण्डों का संचालन करते हैं। 2. जब चाहें साधु सन्त के रूप में अपने शरीर का तेज सरल करके अच्छी आत्माओं को मिलते हैं। 3. प्रत्येक युग में किसी जलाशय में खिले कमल के फूल पर नवजात शिशु का रूप बनाकर प्रकट होते हैं, वहाँ से निःसन्तान दम्पति अपने घर ले जाते हैं। बचपन से ही वह परमात्मा अपना वास्तविक भक्ति ज्ञान जिसे तत्त्वज्ञान भी कहते हैं, चौपाइयों, दोहों, साखियों व कविताओं के रूप में सुनाते हैं। जैसे सन् 1398 वि.सं. 1455 में परमात्मा अपने निज स्थान से चलकर भारत वर्ष के काशी शहर के बाहर लहरतारा नामक जलाशय में कमल के फूल पर शिशु रूप धारकर प्रकट हुए थे।

वहाँ से नीरु-नीमा जुलाहा दम्पति अपने घर ले गए थे। धीरे-धीरे परमात्मा बड़े हुए। कबीर वाणी बोलकर ज्ञान सुनाया था। प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 में है जो आर्य समाज के आचार्यों द्वारा अनुवादित है। उसमें भी कुछ गलती है, अधिक नहीं। कृप्या पढ़ें यह ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 की फोटोकापी :--

**अभी॒ इ॑ममध्न्या॒ उ॒त श्री॒णन्ति॑ ष्ठेनव॑ः शिशु॑म् ।
सो॒म॑मिन्द्राय॑ पातव॑े ॥१॥**

पदार्थः—(इमं) उस (सोमं) सौम्यस्वभाव वाले श्रद्धालु पुरुष को (शिशुं) कमारावस्था में ही (अभि) सब प्रकार से (अध्न्याः) अहिंसनीय (ष्ठेनवः) गौवें (श्रीणन्ति) तृप्त करती हैं (इम्दाय) ऐश्वर्यं की (पातवे) वृद्धि के लिये। (उत) अथवा उक्त श्रद्धालु पुरुष को अहिंसनीय वाणियें ऐश्वर्यं की प्राप्ति के लिये संस्कृत करती हैं ॥६॥

विवेचन :- यह फोटो कापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 की है इसमें स्पष्ट है कि (सोम) अमर परमात्मा जब शिशु रूप में प्रकट होता है तो उसकी परवरिस की लीला कंवारी गायों (अभि अध्न्या ष्ठेनुवः) द्वारा होती है। यही प्रमाण कबीर सागर के अध्याय “ज्ञान प्रकाश” में है कि जिस परमेश्वर कबीर जी को नीरु-नीमा अपने घर ले गए। तब शिशु रूपधारी परमात्मा ने न अन्न खाया, न दूध पीया। फिर स्वामी रामानन्द जी के बताने पर एक कंवारी गाय अर्थात् एक बछिया नीरु लाया, उसने तत्काल दूध दिया। उस कंवारी गाय के दूध से परमेश्वर की परवरिस की लीला हुई थी। कबीर सागर लगभग 600 (छः सौ) वर्ष पहले का लिखा हुआ है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 के अनुवाद में कुछ गलती की है। जैसे (अभिअध्न्या) का अर्थ अहिंसनीय कर दिया जो गलत है। हरियाणा प्रान्त के जिला रोहतक में गाँव धनाना में लेखक का जन्म हुआ जो वर्तमान में जिला सोनीपत में है। इस क्षेत्र में जिस गाय ने गर्भ धारण न किया हो तो कहते हैं कि यह धनाई नहीं है, यह बिना धनाई है। यह अभ्रंस शब्द है जो “अध्न्य” का अर्थ है पूर्ण रूप से बिना धनायी अर्थात् कंवारी गाय अर्थात् बछिया।

अब ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17 का शुद्ध अनुवाद करता हूँ:-

केवल हिन्दी :- (शिशुम् जज्ञानम् हर्यन्तम्) परमेश्वर जान-बूझकर तत्त्वज्ञान बताने के उद्देश्य से शिशु रूप में प्रकट होता है, उनके ज्ञान को सुनकर (मरुतो गणेन) भक्तों का बहुत बड़ा समूह उस परमात्मा का अनुयाई बन जाता है। (मृजन्ति शुम्यन्ति वहिन्)

वह ज्ञान बुद्धिजीवी लोगों को समझ आता है। वे उस परमेश्वर की स्तुति-भक्ति तत्त्वज्ञान के आधार से करते हैं, वह भक्ति (वहिन्) शीघ्र लाभ देने वाली होती है। वे परमात्मा अपने तत्त्वज्ञान को (काव्येना) कवित्व से अर्थात् कवियों की तरह दोहों, शब्दों, लोकोक्तियों, चौपाईयों द्वारा (कविर् गीर्भिः) कविर् वाणी द्वारा अर्थात् कबीर वाणी द्वारा (पवित्रम् अतिरेमन) शुद्ध ज्ञान को ऊँचे स्वर में गर्ज-गर्जकर बोलते हैं। वह (कविः) कवि की तरह आचरण करने वाला कविर्देव (सन्त्) सन्त् रूप में प्रकट (सोम) अमर परमात्मा होता है। (ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17) विशेष :- इस मन्त्र के मूल पाठ में दो बार “कविः” शब्द है, आर्य समाज के अनुवादकर्ताओं ने एक (कविः) का अर्थ ही नहीं किया है।

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 18 पर विवेचन करते हैं। इसके अनुवाद में भी बहुत-सी गलतियाँ हैं। हम संस्कृत भी समझ सकते हैं। विवेचन करता हूँ तथा यथार्थ अनुवाद व भावार्थ रूप स्पष्ट करता हूँ। मन्त्र 17 में कहा कि ऋषि या सन्त् रूप में प्रकट होकर परमात्मा अमृतवाणी अपने मुख कमल से बोलता है और उस ज्ञान को समझकर अनेकों अनुयाईयों का समूह बन जाता है। (य) जो वाणी परमात्मा तत्त्वज्ञान की सुनाता है। वे (ऋषिकृत) ऋषि रूप में प्रकट परमात्मा कृत (सहस्रीयः) हजारों वाणियाँ अर्थात् कबीर वाणियाँ (ऋषिमना) ऋषि स्वभाव वाले भक्तों के लिए (स्वर्षाः) आनन्ददायक होती हैं। (कविनाम पदवीः) कवित्व से दोहों, चौपाईयों में वाणी बोलने के कारण वह परमात्मा प्रसिद्ध कवि की भी पदवी प्राप्त करता है। वह (सोम) अमर परमात्मा (सिवासन) सर्व की पालन की इच्छा करता हुआ प्रथम स्थिति में (महिवः) बड़ी पृथ्वी अर्थात् ऊपर के लोकों में (तृतीयम् धाम) तीसरे धाम अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पृष्ठ पर (अनुराजिति) तेजोमय शरीर युक्त (स्तुप) गुम्बज में (विराजम) विराजमान है, वहाँ बैठा है। यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 में है कि परमात्मा सर्व लोकों के ऊपर के लोक में विराजमान है, (तिष्ठन्ति) बैठा है।

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 19 का भी आर्यसमाज के विद्वानों ने अनुवाद किया है। इसमें भी बहुत सारी गलतियाँ हैं। पुस्तक विस्तार के कारण केवल अपने मतलब की जानकारी प्राप्त करते हैं।

इस मन्त्र में चौथे धाम का वर्णन है। आप जी सृष्टि रचना में पढ़ेंगे, उससे पूर्ण जानकारी होगी। पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 128 पर।

परमात्मा ने ऊपर के चार लोक अजर-अमर रचे हैं। 1. अनामी लोक जो सबसे ऊपर है 2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सत्य लोक।

हम पृथ्वी लोक पर हैं, यहाँ से ऊपर के लोकों की गिनती करेंगे तो 1. सत्यलोक 2. अलख लोक 3. अगम लोक तथा चौथा अनामी लोक उस चौथे धाम में बैठकर परमात्मा ने सर्व ब्रह्माण्डों व लोकों की रचना की। शेष रचना सत्यलोक

में बैठकर की थी। आर्यसमाज के अनुवादकों ने तुरिया परमात्मा अर्थात् चौथे परमात्मा का वर्णन किया है। यह चौथा धाम है। उसमें मूल पाठ मन्त्र 19 का भावार्थ है कि तत्त्वदर्शी सन्त चौथे धाम तथा चौथे परमात्मा का (विवक्षित) भिन्न-भिन्न वर्णन करता है। पाठकजन कृपया पढ़ें सृष्टि रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 128 पर जिससे आप जी को ज्ञान होगा कि लेखक (संत रामपाल दास) ही वह तत्त्वदर्शी संत है जो तत्त्वज्ञान से परीचित है।

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 का यथार्थ जानते हैं:-

इस मन्त्र का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा किया गया है। इनका दृष्टिकोण यह रहा है कि परमात्मा निराकार है क्योंकि महर्षि दयानन्द जी ने यह बात दृढ़ की है कि परमात्मा निराकार है। इसलिए अनुवादक ने सीधे मन्त्र का अनुवाद घुमा-फिराकर किया है। जैसे मूल पाठ में लिखा है:-

मर्य न शः तन्वा मृजानः अत्यः न सृत्वा सनये धनानाम् ।

वृषेव यूथा परि कोशम अर्षन् कनिक्रदत् चम्बोः आविवेश ॥ ।

अनुवाद :- (न) जैसे (मर्य:) मनुष्य सुन्दर वस्त्र धारण करता है, ऐसे परमात्मा (शुभः तन्व) सुन्दर शरीर (मृजानः) धारण करके (अत्यः) अत्यन्त गति से चलता हुआ (सनये धनानाम्) भक्ति धन के धनियों अर्थात् पुण्यात्माओं को (सनये) प्राप्ति के लिए आता है (यूथा वृषेव) जैसे एक समुदाय को उसका सनापति प्राप्त होता है। ऐसे वह परमात्मा संत व ऋषि रूप में प्रकट होता है तो उसके बहुत सँख्या में अनुयाई बन जाते हैं और परमात्मा उनका गुरु रूप में मुखिया होता है। वह परमात्मा (कोशम) अर्थात् (परि कोशम) प्रथम ब्रह्माण्ड में (अर्षन्) प्राप्त होकर अर्थात् आकर (कनिक्रदत्) ऊँचे स्वर में सत्यज्ञान उच्चारण करता हुआ (चम्बौ) पृथ्वी खण्ड में (अविवेश) प्रविष्ट होता है।

भावार्थ :- जैसे पूर्व में वेद मन्त्रों में कहा है कि परमात्मा ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके पृथ्वी पर आता है, अपने रूप को अर्थात् शरीर के तेज को सरल करके आता है। इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 में उसी की पुष्टि की है। कहा है कि परमात्मा ऐसे अन्य शरीर धारण करके पृथ्वी पर आता है। जैसे मनुष्य वस्त्र धारण करता है और (धनानाम्) दृढ़ भक्तों (अच्छी पुण्यात्माओं) को प्राप्त होता है, उनको वाणी उच्चारण करके तत्त्वज्ञान सुनाता है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 95 मन्त्र 2)

हरिः सृज्ञानः पश्यामृतस्यैर्यतिं वाचं मरितेव नावम् ।

देवो देवानां गुह्यानि नामाविष्कृणोति बहिर्षि प्रवाचे ॥२॥

पदार्थः—(हरिः) वह पूर्वोक्त परमात्मा (सृज्ञानः) साक्षात्कार को प्राप्त हुआ (ऋतस्य पश्याम्) वाक् द्वारा मुक्ति मार्ग की (इयति) प्रेरणा करता है । (अरितेव नावम्) जैसा कि नौका के पार लगाने के समय में नाविक प्रेरणा करता है और (देवानां देवः) सब देवों का देव (गुह्यानि) गुप्त (नामाविष्कृणोति) संज्ञाओं को प्रकट करता है (बहिर्षि प्रवाचे) वाणीरूप यज्ञ के लिए ॥२॥

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मन्त्र 2 का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों ने किया है जो बहुत ठीक किया है ।

इसका भावार्थ है कि पूर्वोक्त परमात्मा अर्थात् जिस परमात्मा के विषय में पहले वाले मन्त्रों में ऊपर कहा गया है, वह (सृज्ञानः) अपना शरीर धारण करके (ऋतस्य पश्याम्) सत्यभक्ति का मार्ग अर्थात् यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान अपनी अमृतमयी वाक् अर्थात् वाणी द्वारा मुक्ति मार्ग की प्रेरणा करता है ।

वह मन्त्र ऐसा है जैसे (अतितेव नावम्) नाविक नौका में बैठाकर पार कर देता है, ऐसे ही परमात्मा सत्यभक्ति मार्ग साधक को संसार रूपी दरिया के पार करता है । वह (देवानाम् देवः) सब देवों का देव अर्थात् सब प्रभुओं का प्रभु परमेश्वर (बहिर्षि प्रवाचे) वाणी रूपी ज्ञान यज्ञ के लिए (गुह्यानि) गुप्त (नामा आविष्कृणोति) नामों का अविष्कार करता है अर्थात् जैसे गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में “ऊँ तत् सत्” ये गुप्त मन्त्र हैं जो उसी परमेश्वर ने मुझे (संत रामपाल दास) को बताए हैं । उनसे ही पूर्ण मोक्ष सम्भव है ।

सूक्ष्म वेद में परमेश्वर ने कहा है कि :-

“सोहं” शब्द हम जग में लाए, सारशब्द हम गुप्त छिपाए ।

भावार्थ :- परमेश्वर ने स्वयं “सोहं” शब्द भक्ति के लिए बताया है । यह सोहं मन्त्र किसी भी प्रचीन ग्रन्थ (वेद, गीता, कुर्�আন, पुराण तथा बाईबल) में नहीं है । फिर सूक्ष्म वेद में कहा है कि :-

सोहं ऊपर और है, सत्य सुकृत एक नाम ।

सब हंसों का जहाँ बास है, बस्ती है बिन ठाम ॥

भावार्थ :- सोहं नाम तो परमात्मा ने प्रकट कर दिया, आविष्कार कर दिया परन्तु सार शब्द को गुप्त रखा था । अब मुझे (लेखक संत रामपाल को) बताया है जो साधकों को दीक्षा के समय बताया जाता है । इसका गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में कहे “ऊँ तत् सत्” से सम्बन्ध है ।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 94 मन्त्र 1)

अधि॑ यद॑स्मिन्वा॒जिनी॑व् शुभः॒ स्पर्धन्ते॑ विष्यः॒ सूर्य॑ न विश॑ः ।

अ॒पो॒ वृ॑णा॒नः॒ प॑वते॒ कवी॑यन्व॑जं॒ न प॑शुव॑र्धनाय॒ मन्म॑ ॥१॥

पदार्थः—(सूर्य॑) सूर्य के विषय में (न) जैसे (विशः) रश्मियां प्रकाशित करती हैं । उसी प्रकार (विष्यः) मनुष्यों की बुद्धिशां (स्पर्धन्ते) अपनी-अपनी उत्कट शक्ति से विषय करती हैं । (अस्मिन् अधि॑) जिस परमात्मा में (वाज्ञनी॑) सर्वोपरि॑ बलों के समान (शुभः) शुभ बल है वह परमात्मा (अपोवृणानः) कर्मों का अध्यक्ष होता हुआ (पवते॒) सबको पवित्र करता है । (कवीयन्व॑) कवियों की तरह आचरण करता हुआ (पशुव॑र्धनाय॒) सर्वद्रष्टव्यत्व पद के लिए (व॑जं, न) इन्द्रियों के अधिकरण मन के समान 'व्रजन्ति इन्द्रियाणि॑ यस्मिन् तद्गृजम्' (मन्म॑) जो अधिकरणरूप है वही श्रेय का घाम है ॥१॥

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 का अनुवाद भी आर्यसमाज के विद्वानों द्वारा किया गया है ।

विवेचन :- पुस्तक विस्तार को ध्यान में रखते हुए उन्हीं के अनुवाद से अपना मत सिद्ध करते हैं । जैसे पूर्व में लिखे वेदमन्त्रों में बताया गया है कि परमात्मा अपने मुख कमल से वाणी उच्चारण करके तत्त्वज्ञान बोलता है, लोकोक्तियों के माध्यम से, कवित्व से दोहों, शब्दों, साखियों, चौपाईयों के द्वारा वाणी बोलने से प्रसिद्ध कवियों में से भी एक कवि की उपाधि प्राप्त करता है । उसका नाम कविदेव अर्थात् कबीर साहेब है ।

इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 में भी यही कहा है कि जो सर्वशक्तिमान परमेश्वर है, वह (कवियन् व्रजम् न) कवियों की तरह आचरण करता हुआ पृथ्वी पर विचरण करता है ।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 20 मन्त्र 1)

प्र॑ कृविद॑व॒वौत्॑येऽव्यो॒ वार॑भिर्वर्षति॑ ।

सा॑व्हान्विश्वा॑ अ॒भि॒ स्पृधः॑ ॥१॥

पदार्थः—वह परमात्मा (कवि॑) मेधावी है और (अव्यः) सबका रक्षक है (देववीतये॑) विद्वानों की तृप्ति के लिये (अर्वति॑) ज्ञान देता है (सा॑व्हान्) सहनशील है (विश्वा॑; स्पृधः॑) सम्पूर्ण दुष्टों को संग्रामों में (अभि॑) तिरस्कृत करता है ॥१॥

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 20 मन्त्र 1 का अनुवाद भी आर्यसमाज के विद्वानों ने किया है । इसका अनुवाद ठीक कम गलत अधिक है । इसमें मूल पाठ में लिखा है:-

'प्र कविर्देव वीतये अव्यः वारेभिः अर्षति साहान् बिश्वाःः अभि स्पृख्यः'

सरलार्थ :- (प्र) वेद ज्ञान दाता से जो दूसरा (कविर्देव) कविर्देव कबीर परमेश्वर है, वह विद्वानों अर्थात् जिज्ञासुओं को, (वीतये) ज्ञान धन की तृप्ति के लिए (वारेभिः) श्रेष्ठ आत्माओं को (अर्षति) ज्ञान देता है। वह (अव्यः) अविनाशी है, रक्षक है, (साहान्) सहनशील (विश्वाः) तत्त्वज्ञान हीन सर्व दुष्टों को (स्पृधः) आध्यात्म ज्ञान की कृपा स्पृधा अर्थात् ज्ञान गोष्टी रूपी वाक् युद्ध में (अभि) पूर्ण रूप से तिरस्कृत करता है, उनको फिट्टे मुँह कर देता है।

विशेष :- (क) इस मन्त्र के अनुवाद में आप फोटोकापी में देखेंगे तो पता चलेगा कि कई शब्दों के अर्थ आर्य विद्वानों ने छोड़ रखे हैं जैसे = "प्र" "वारेभिः" जिस कारण से वेदों का यथार्थ भाव सामने नहीं आ सका।

(ख) मेरे अनुवाद से स्पष्ट है कि वह परमात्मा अच्छी आत्माओं (दृढ़ भक्तों) को ज्ञान देता है, उसका नाम भी लिखा है "कविर्देव", हम कबीर परमेश्वर कहते हैं।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 54 मन्त्र 3)

अ॒यं विश्वा॑नि तिष्ठृति पुनु॒नो भुवनो॑परि ।

सोमो॒ दुवो॒ न सूर्यः ॥३॥

पदार्थः— (सूर्यः, न) सूर्य के समान जगत्प्रेरक (अथम्) यह परमात्मा (सोमः, देवः) सौम्य स्वभाव वाला और जगत्प्रकाशक है और (विश्वानि, पुनानः) सब लोकों को पवित्र करता हुआ (भुवनोपरि, तिष्ठति) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व भाग में भी वर्तमान है ॥३॥

विवेचन:- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 की फोटोकापी में आप देखें, इसका अनुवाद आर्यसमाज के विद्वानों ने किया है। उनके अनुवाद में भी स्पष्ट है कि वह परमात्मा (भूवनोपरि) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) विराजमान है, ऊपर बैठा है:-

इसका यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :-

(अयं) यह (सोमः देव) अमर परमेश्वर (सूर्यः) सूर्य के (न) समान (विश्वानि) सर्व को (पुनानः) पवित्र करता हुआ (भूवनोपरि) सर्व ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) बैठा है।

भावार्थ :- जैसे सूर्य ऊपर है और अपना प्रकाश तथा उष्णता से सर्व को लाभ दे रहा है। इसी प्रकार यह अमर परमेश्वर जिसका ऊपर के मन्त्रों में वर्णन किया है। सर्व ब्रह्माण्डों के ऊपर बैठकर अपनी निराकार शक्ति से सर्व प्राणियों को लाभ दे रहा है तथा सर्व ब्रह्माण्डों का संचालन कर रहा है।

तर्क :- महर्षि दयानन्द का अर्थात् आर्यसमाजियों का मत है कि परमात्मा किसी एक स्थान पर किसी लोक विशेष में नहीं रहता।

प्रमाण :- सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास (Chapter) नं. 7 पृष्ठ 148 पर (आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट 427 गली मन्दिर वाली नया बांस दिल्ली-78वां संस्करण)

किसी ने प्रश्न किया:- ईश्वर व्यापक है वा किसी देश विशेष में रहता है?

उत्तर (महर्षि दयानन्द जी का) :- व्यापक है क्योंकि जो एक देश में रहता तो सर्व अन्तर्यामी, सर्वज्ञ, सर्वनियन्ता, सब का सृष्टा, सब का धर्ता और प्रलयकर्ता नहीं हो सकता। अप्राप्त देश में कर्ता की क्रिया का होना असम्भव है। (सत्यार्थ प्रकाश से लेख समाप्त)

महर्षि दयानन्द जी नहीं मानते थे कि परमात्मा किसी देश अर्थात् रस्थान विशेष पर रहता है। महर्षि दयानन्द जी वेद ज्ञान को सत्य ज्ञान मानते थे।

आप जी ने ऊपर अनेकों वेदमन्त्रों में अपनी आँखों पढ़ा कि परमेश्वर ऊपर एक रस्थान पर रहता है। वहाँ से गति करके यहाँ भी प्रकट होता है।

महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाजी परमात्मा को निराकार मानते हैं।

प्रमाण :- सत्यार्थ प्रकाश के समुल्लास नं. 9 पृष्ठ 176, समुल्लास 7 पृष्ठ 149 समुल्लास 11 पृष्ठ 251 पर कहा है कि परमात्मा निराकार है।

प्रिय पाठकों ने अनेकों वेदमन्त्रों में पढ़ा कि परमात्मा साकार है, वह मनुष्य जैसा है। ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके चलकर आता है, प्रकट होता है। अच्छी आत्माओं को जो दृढ़ भक्त होते हैं, उनको मिलता है। उनको तत्त्वज्ञान अपने मुख कमल से बोलकर सुनाता है, कवियों की तरह आचरण करता है। पृथ्वी पर विचरण करके आध्यात्म ज्ञान ऊँचे रवर में उच्चारण करके सुनाता है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में भी यही प्रमाण है।

प्रिय पाठको! आप स्वयं निर्णय करें किसको कितना आध्यात्म ज्ञान था। विशेष आश्चर्य यह है कि वेद मन्त्रों का अनुवाद भी महर्षि दयानन्द जी तथा उनके चेलों आर्यसमाजियों ने किया हुआ है। जिसमें उनके मत का विरोध है।

निवेदन :- वेद मन्त्रों की फोटोकापियाँ लगाने का उद्देश्य यह है कि यदि मैं (लेखक) अनुवाद करके पुस्तक में लगाता तो अन्य व्यक्ति यह कह देते कि संत रामपाल को संस्कृत भाषा का ज्ञान नहीं है। इसलिए इनके अनुवाद पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अब यह शंका उत्पन्न नहीं हो सकती। अब तो यह दृढ़ता आएगी कि संत रामपाल दास ने जो वेद मन्त्रों का अनुवाद किया है, वह यथार्थ है।

“संक्षिप्त सृष्टि रचना”

सबसे पहले सतपुरुष अकेले थे, कोई रचना नहीं थी। सर्वप्रथम परमेश्वर जी ने चार अविनाशी लोक की रचना वचन (शब्द) से की।

1. अनामी लोक जिसको अकह लोक भी कहते हैं।
2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सतलोक।

फिर परमात्मा ने चारों लोकों में चार रूप धारण किए। चार नामों से प्रत्येक लोक में प्रसिद्ध हुए।

1. अनामी लोक में अनामी पुरुष या अकह पुरुष।
2. अगम लोक में अगम पुरुष।
3. अलख लोक में अलख पुरुष।
4. सतलोक में सतपुरुष नाम रखे।

फिर चारों लोकों में परमात्मा ने वचन से ही एक-एक सिंहासन (तख्त) बनाया। प्रत्येक पर सम्राट के समान मुकुट आदि धारण करके विराजमान हो गए। फिर सतलोक में परमेश्वर ने अन्य रचना की। एक शब्द (वचन) से 16 द्विषों की तथा एक मानसरोवर की रचना की। फिर 16 वचन से 16 पुत्रों की उत्पत्ति की। उनमें मुख्य भूमिका अचिन्त, तेज, सहजदास, जोगजीत, कूर्म, इच्छा, धैर्य और ज्ञानी की रही है।

अपने पुत्रों को सबक सिखाने के लिए कि समर्थ के बिना कोई कार्य सफल नहीं हो सकता। जिसका काम उसी को साजे और करे तो मूर्ख बाजे।

सतपुरुष ने अपने पुत्र अचिन्त से कहा कि आप अन्य रचना सतलोक में करें। मैंने कुछ शक्ति तेरे को प्रदान कर दी है। अचिन्त ने अपने वचन से अक्षर पुरुष की उत्पत्ति की। अक्षर पुरुष युवा उत्पन्न हुआ। मानसरोवर में स्नान करने गया, उसी जल पर तैरने लगा। कुछ देर में निंद्रा आ गई। सरोवर में गहरा नीचे चला गया। (सतलोक में अमर शरीर है, वहाँ पर शरीर श्वासों पर निर्भर नहीं है।) बहुत समय तक अचिन्त जल से बाहर नहीं आया। अचिन्त आगे सृष्टि नहीं कर सका, तब सतपुरुष (परम अक्षर पुरुष) ने मानसरोवर पर जाकर कुछ जल अपनी चुल्लु (हाथ) में लिया। उसका एक विशाल अण्डा वचन से बनाया तथा एक आत्मा वचन से उत्पन्न करके अण्डे में प्रवेश की और अण्डे को जल में छोड़ दिया। जल में अण्डा नीचे जाने लगा तो उसकी गड़गड़ाहट के शोर से अचिंत की निंद्रा भंग हो गई। अक्षर पुरुष ने क्रोध से देखा कि किसने मुझे जगा दिया। क्रोध उस अण्डे पर गिरा तो अण्डा फूट गया। उसमें एक युवा तेजोमय व्यक्ति निकला। उसका नाम क्षर पुरुष रखा। (आगे चलकर यही काल कहलाया) सतपुरुष ने दोनों से कहा कि आप जल से बाहर आओ। अक्षर पुरुष तुम निंद्रा में थे, तेरे

को नींद से उठाने के लिए यह सब किया है। अक्षर पुरुष और क्षर पुरुष से सतपुरुष ने कहा कि आप दोनों अचिंत के लोक में रहो।

कुछ समय के पश्चात् (क्षर पुरुष जिसे ज्योति निरंजन काल भी कहते हैं) ने मन में विचार किया कि हम तीन तो एक लोक में रह रहे हैं। मेरे अन्य भाई एक-एक द्वीप में रह रहे हैं। यह विचार कर उसने अलग द्वीप प्राप्त करने के लिए तप प्रारम्भ किया। इससे पहले सतपुरुष जी ने अपने पुत्र अचिन्त से कहा कि आप सृष्टि रचना नहीं कर सकते। मैंने तुम्हें यह शिक्षा देने के लिए ही आप से कहा कि अन्य रचना कर। परन्तु आप अचिन्त अक्षर पुरुष को भी नहीं उठा सके। अब आगे कोई भी यह कोशिश न करना। सर्व रचना में अपनी शब्द शक्ति से रचूँगा।

सतपुरुष जी ने सतलोक में असँख्यों लोक रचे तथा प्रत्येक में अपने वचन (शब्द) से अन्य आत्माओं की उत्पत्ति की। ये सब लोक सतपुरुष के सिंहासन के ईर्द-गिर्द थे। इनमें केवल नर हंस (सतलोक में मनुष्यों को हंस कहते हैं) ही रहते हैं और उनको परमेश्वर ने शक्ति दे रखी है कि वे अपना परिवार (नर हंस) वचन से उत्पन्न कर सकते हैं। वे केवल दो पुत्र ही उत्पन्न कर सकते हैं।

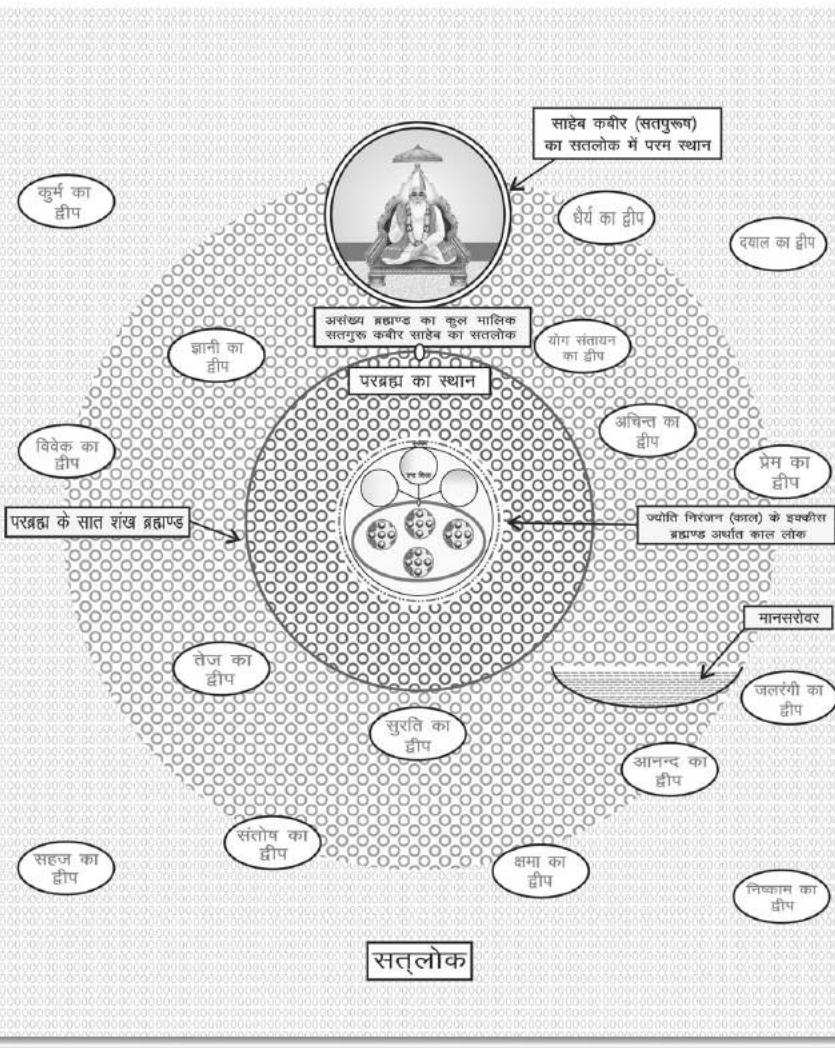
क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) ने तप करना शुरू किया। उसने 70 युग तक तप किया। सतपुरुष जी ने क्षर पुरुष से पूछा कि आप तप किसलिए कर रहे हो? क्षर पुरुष ने कहा कि यह स्थान मेरे लिए कम है। मुझे अलग स्थान चाहिए। परमेश्वर (सतपुरुष) जी ने उसे 70 युग के तप के प्रतिफल में 21 ब्रह्माण्ड दे दिए जो सतलोक के बाहरी क्षेत्र में थे जैसे 21 प्लॉट मिल गए हों। ज्योति निरंजन (क्षर पुरुष) ने विचार किया कि इन ब्रह्माण्डों में कुछ रचना भी होनी चहिए। उसके लिए, फिर 70 युग तक तप किया। फिर सतपुरुष जी ने पूछा कि अब क्या चाहता है? क्षर पुरुष ने कहा कि सृष्टि रचना की सामग्री देने की कृपा करें। सतपुरुष जी ने उसको पाँच तत्व (जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु तथा आकाश) तथा तीन गुण (रजगुण, सतगुण तथा तमगुण) दे दिये तथा कहा कि इनसे अपनी रचना कर।

परमेश्वर कवीर साहेब के असंख्य ब्रह्मण्डों का लघु चित्र

अनामी लोक : इस लोक में आत्मा और परमात्मा एक रूप होकर कवीर साहेब ही अनामी रूप में है। जैसे मिट्ठी के ढले (छोटे-छोटे टुकड़े) हो जाते हैं। फिर वर्षा होने पर एक पृथ्वी बन जाती है, अलग आस्तित्व नहीं रहता।

अगम लोक : इस लोक में भी कवीर साहेब अगम पुरुष रूप में रहते हैं।

अलख लोक : इस लोक में भी कवीर साहेब अलख पुरुष रूप में रहते हैं।



“हम काल के लोक में कैसे आए ?”

जिस समय क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) एक पैर पर खड़ा होकर तप कर रहा था। तब हम सभी आत्माएँ इस क्षर पुरुष पर आकर्षित हो गए। जैसे जवान बच्चे अभिनेता व अभिनेत्री पर आसक्त हो जाते हैं। लेना एक न देने दो। व्यर्थ में चाहने लग जाते हैं। वे अपनी कमाई करने के लिए नाचते-कूदते हैं। युवा-बच्चे उन्हें देखकर अपना धन नष्ट करते हैं। ठीक इसी प्रकार हम अपने परमपिता सतपुरुष को छोड़कर काल पुरुष (क्षर पुरुष) को हृदय से चाहने लग गए थे। जो परमेश्वर हमें सर्व सुख सुविधा दे रहा था। उससे मुँह मोड़कर इस नकली झामा करने वाले काल ब्रह्म को चाहने लगे। सत पुरुष जी ने बीच-बीच में बहुत बार आकाशवाणी की कि बच्चों तुम इस काल की क्रिया को मत देखो, मस्त रहो। हम ऊपर से तो सावधान हो गए, परन्तु अन्दर से चाहते रहे। परमेश्वर तो अन्तर्यामी है। इन्होंने जान लिया कि ये यहाँ रखने के योग्य नहीं रहे। काल पुरुष (क्षर पुरुष = ज्योति निरंजन) ने जब दो बार तप करके फल प्राप्त कर लिया तब उसने सोचा कि अब कुछ जीवात्मा भी मेरे साथ रहनी चाहिए। मेरा अकेले का दिल नहीं लगेगा। इसलिए जीवात्मा प्राप्ति के लिए तप करना शुरू किया। 64 युग तक तप करने के पश्चात् परमेश्वर जी ने पूछा कि ज्योति निरंजन अब किसलिए तप कर रहा है? क्षर पुरुष ने कहा कि कुछ आत्माएं प्रदान करो, मेरा अकेले का दिल नहीं लगता। सतपुरुष ने कहा कि तेरे तप के बदले में और ब्रह्माण्ड दे सकता हूँ, परन्तु अपनी आत्माएं नहीं दूँगा। ये मेरे शरीर से उत्पन्न हुई हैं। हाँ, यदि वे स्वयं जाना चाहते हैं तो वह जा सकते हैं। युवा कविर् (समर्थ कबीर) के वचन सुनकर ज्योति निरंजन हमारे पास आया। हम सभी हंस आत्मा पहले से ही उस पर आसक्त थे। हम उसे चारों तरफ से घेरकर खड़े हो गए। ज्योति निरंजन ने कहा कि मैंने पिता जी से अलग 21 ब्रह्माण्ड प्राप्त किए हैं। वहाँ नाना प्रकार के रमणीय स्थल बनाए हैं। क्या आप मेरे साथ चलोगे? हम सभी हंसों ने जो आज 21 ब्रह्माण्डों में परेशान हैं, कहा कि हम तैयार हैं। यदि पिता जी आज्ञा दें, तब क्षर पुरुष(काल), पूर्ण ब्रह्म महान् कविर् (समर्थ कबीर प्रभु) के पास गया तथा सर्व वार्ता कही। तब कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि मेरे सामने स्वीकृति देने वाले को आज्ञा दूँगा। क्षर पुरुष तथा परम अक्षर पुरुष (कविरमितौजा) दोनों हम सभी हंसात्माओं के पास आए। सत् कविर्देव ने कहा कि जो हंसात्मा ब्रह्म के साथ जाना चाहता है, हाथ ऊपर करके स्वीकृति दें। अपने पिता के सामने किसी की हिम्मत नहीं हुई। किसी ने स्वीकृति नहीं दी। बहुत समय तक सन्नाटा छाया रहा। तत्पश्चात् एक हंस आत्मा ने साहस किया तथा कहा कि पिता जी मैं जाना चाहता हूँ। फिर तो उसकी देखा-देखी (जो आज काल(ब्रह्म) के इक्कीस

ब्रह्माण्डों में फँसी हैं) हम सभी आत्माओं ने स्वीकृति दे दी। परमेश्वर कबीर जी ने ज्योति निरंजन से कहा कि आप अपने स्थान पर जाओ। जिन्होंने तेरे साथ जाने की स्वीकृति दी है, मैं उन सर्व हंस आत्माओं को आपके पास भेज दूँगा। ज्योति निरंजन अपने 21 ब्रह्माण्डों में चला गया। उस समय तक यह इक्कीस ब्रह्माण्ड सतलोक में ही थे।

तत्पश्चात् पूर्ण ब्रह्म ने सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को लड़की का रूप दिया परन्तु स्त्री इन्द्री नहीं रची तथा सर्व आत्माओं को (जिन्होंने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) के साथ जाने की सहमति दी थी) उस लड़की के शरीर में प्रवेश कर दिया तथा उसका नाम आष्ट्रा (आदि माया/प्रकृति देवी/दुर्गा) पड़ा तथा सत्यपुरुष ने कहा कि पुत्री मैंने तेरे को शब्द शक्ति प्रदान कर दी है। जितने जीव ब्रह्म कहे आप उत्पन्न कर देना। पूर्ण ब्रह्म कर्विदेव (कबीर साहेब) ने अपने पुत्र सहज दास के द्वारा प्रकृति को क्षर पुरुष के पास भिजवा दिया। सहज दास जी ने ज्योति निरंजन को बताया कि पिता जी ने इस बहन के शरीर में उन सब आत्माओं को प्रवेश कर दिया है, जिन्होंने आपके साथ जाने की सहमति व्यक्त की थी। इसको वचन शक्ति प्रदान की है, आप जितने जीव चाहोगे प्रकृति अपने शब्द से उत्पन्न कर देगी। यह कहकर सहजदास वापिस अपने द्वीप में आ गया।

युवा होने के कारण लड़की का रंग-रूप निखरा हुआ था। ब्रह्म के अन्दर विषय-वासना उत्पन्न हो गई तथा प्रकृति देवी के साथ अभद्र गतिविधि प्रारम्भ की। तब दुर्गा ने कहा कि ज्योति निरंजन मेरे पास पिता जी की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है। आप जितने प्राणी कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। आप मैथुन परम्परा शुरू मत करो। आप भी उसी पिता के शब्द से अण्डे से उत्पन्न हुए हो तथा मैं भी उसी परमपिता के वचन से ही बाद में उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे बड़े भाई हो, बहन-भाई का यह योग महापाप का कारण बनेगा। परन्तु ज्योति निरंजन ने प्रकृति देवी की एक भी प्रार्थना नहीं सुनी तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (भग) प्रकृति को लगा दी तथा बलात्कार करने की ठानी। उसी समय दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए कोई और चारा न देखकर सूक्ष्म रूप बनाया तथा ज्योति निरंजन के खुले मुख के द्वारा पेट में प्रवेश करके पूर्ण ब्रह्म कविर् देव से अपनी रक्षा के लिए याचना की। उसी समय कर्विदेव(कविर् देव) अपने पुत्र योग संतायन अर्थात् जोगजीत का रूप बनाकर वहाँ प्रकट हुए तथा कन्या को ब्रह्म के उदर से बाहर निकाला तथा कहा ज्योति निरंजन आज से तेरा नाम 'काल' होगा। तेरे जन्म-मृत्यु होते रहेंगे। इसीलिए तेरा नाम क्षर पुरुष होगा तथा एक लाख मानव शरीर धारी प्रणियों को प्रतिदिन खाया करेगा व सवा लाख उत्पन्न किया करेगा। आप दोनों को इक्कीस ब्रह्माण्ड सहित निष्कासित किया जाता है। इतना कहते ही इक्कीस ब्रह्माण्ड विमान की तरह चल पड़े। सहज दास

के द्वीप के पास से होते हुए सतलोक से सोलह शंख कोस (एक कोस लगभग 3 कि.मी. का होता है) की दूरी पर आकर रुक गए।

विशेष विवरण :- अब तक तीन शक्तियों का विवरण आया है।

1. पूर्णब्रह्म जिसे अन्य उपमात्मक नामों से भी जाना जाता है, जैसे सतपुरुष, अकालपुरुष, शब्द स्वरूपी राम, परम अक्षर ब्रह्म/पुरुष आदि। यह पूर्णब्रह्म असंख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी है तथा वास्तव में अविनाशी है।

2. परब्रह्म जिसे अक्षर पुरुष भी कहा जाता है। यह वास्तव में अविनाशी नहीं है। यह सात शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है।

3. ब्रह्म जिसे ज्योति निरंजन, काल, कैल, क्षर पुरुष तथा धर्मराय आदि नामों से जाना जाता है जो केवल इकीस ब्रह्माण्ड का स्वामी है। अब आगे इसी ब्रह्म (काल) की सृष्टि के एक ब्रह्माण्ड का परिचय दिया जाएगा जिसमें तीन और नाम आपके पढ़ने में आयेंगे:- ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव।

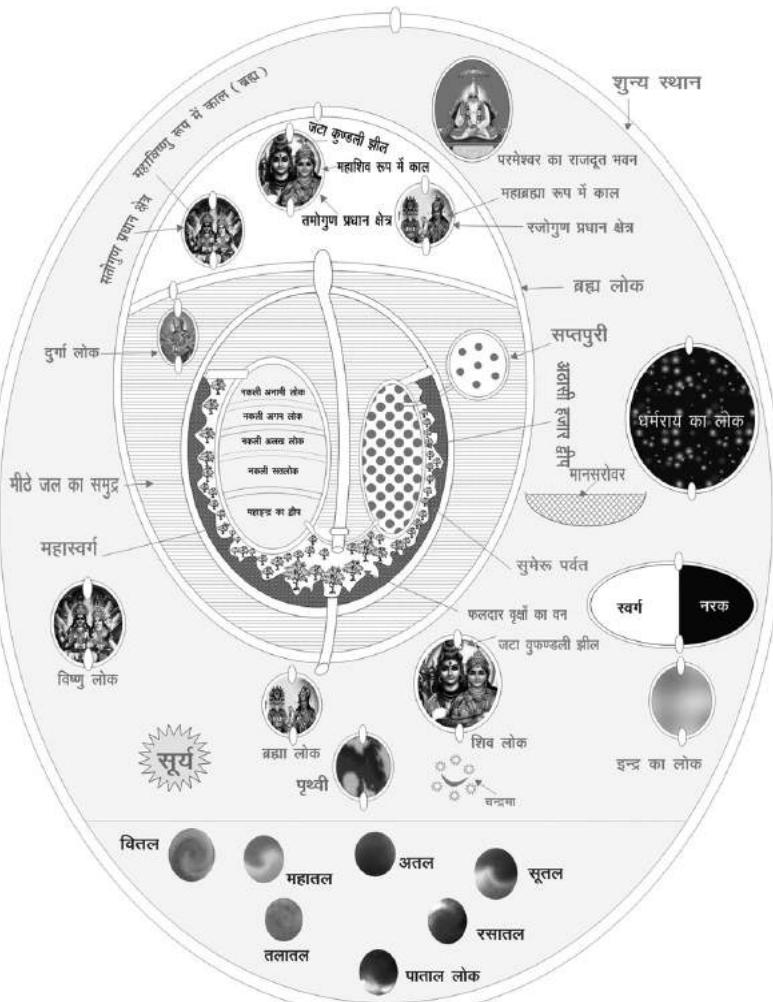
ब्रह्म तथा ब्रह्मा में भेद - एक ब्रह्माण्ड में बने सर्वोपरि स्थान पर ब्रह्मा (क्षर पुरुष) स्वयं तीन गुप्त स्थानों की रचना करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी प्रकृति (दुर्गा) के सहयोग से तीन पुत्रों की उत्पत्ति करता है। उनके नाम भी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ही रखता है। जो ब्रह्म का पुत्र ब्रह्मा है, वह एक ब्रह्माण्ड में केवल तीन लोकों (पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में एक रजोगुण विभाग का मंत्री (स्वामी) है। इसे त्रिलोकिय ब्रह्मा कहा है तथा ब्रह्म जो ब्रह्मलोक में ब्रह्मा रूप में रहता है, उसे महाब्रह्मा व ब्रह्मलोकीय ब्रह्मा कहा है। इसी ब्रह्मा (काल) को सदाशिव, महाशिव, महाविष्णु भी कहा है।

श्री विष्णु पुराण में प्रमाण :- चतुर्थ अंश अध्याय 1 पृष्ठ 230-231 पर श्री ब्रह्मा जी ने कहा:- जिस अजन्मा सर्वमय विधाता परमेश्वर का आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते। (श्लोक 83)

जो मेरा रूप धारण कर संसार की रचना करता है, स्थिति के समय जो पुरुष रूप है तथा जो रुद्र रूप से विश्व का ग्रास कर जाता है, अनन्त रूप से सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है। (श्लोक 86)

(देखें एक ब्रह्माण्ड का लघु चित्र)

एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र



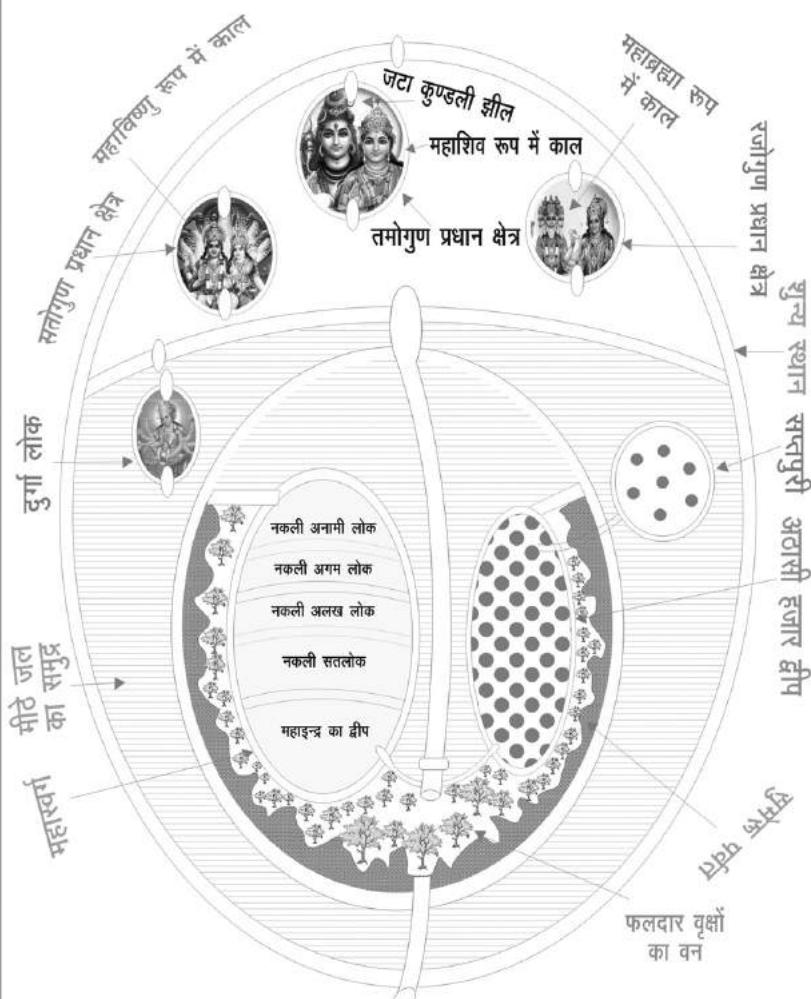
“श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति”

काल(ब्रह्म) ने प्रकृति (दुर्गा) से कहा कि अब मेरा कौन क्या बिगाड़ेगा? मनमानी करूँगा। प्रकृति ने फिर प्रार्थना की कि आप कुछ शर्म करो। प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हो क्योंकि उसी पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की वचन शक्ति से आपकी (ब्रह्मा) की अण्डे से उत्पत्ति हुई तथा बाद मेरी उत्पत्ति उसी परमेश्वर के वचन से हुई है। दूसरे मैं आपके पेट से बाहर निकली हूँ। मैं आपकी बेटी हुई तथा आप मेरे पिता हुए। इन पवित्र नातों में बिगाड़ करना महापाप होगा। मेरे पास पिता की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है, जितने प्राणी आप कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। ज्योति निरंजन ने दुर्गा की एक भी विनय नहीं सुनी तथा कहा कि मुझे जो सजा मिलनी थी, मिल गई। मुझे सतलोक से निष्कासित कर दिया। अब मैं मनमानी करूँगा। यह कहकर काल पुरुष (क्षर पुरुष) ने प्रकृति के साथ जबरदस्ती शादी की तथा तीन पुत्रों (रजगुण युक्त ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त विष्णु जी तथा तमगुण युक्त शिव शंकर जी) की उत्पत्ति की। जवान होने तक तीनों पुत्रों को दुर्गा के द्वारा अचेत करवा देता है, फिर युवा होने पर श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर, श्री विष्णु जी को शेष नाग की शैय्या पर तथा श्री शिव जी को कैलाश पर्वत पर सचेत करके इकट्ठे कर देता है। तत्पश्चात् प्रकृति (दुर्गा) द्वारा इन तीनों का विवाह कर दिया जाता है तथा एक ब्रह्माण्ड में तीन लोकों (स्वर्ग लोक, पृथ्वी लोक, तथा पाताल लोक) में एक-एक विभाग के मंत्री पद को संभालता है। एक ब्रह्माण्ड में एक ब्रह्मलोक की रचना की है। उसी में तीन गुप्त स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान स्थान है जहाँ पर यह ब्रह्मा (काल) स्वयं महाब्रह्मा (मुख्यमंत्री) रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महासावित्री रूप में रखता है। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस स्थान पर उत्पन्न होता है, वह स्वतः ही रजोगुणी बन जाता है। दूसरा स्थान सतोगुण प्रधान स्थान बनाया है। वहाँ पर यह क्षर पुरुष स्वयं महाविष्णु रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महालक्ष्मी रूप में रखकर जो पुत्र उत्पन्न करता है उसका नाम विष्णु रखता है, वह बालक सतोगुण युक्त होता है तथा तीसरा इसी काल ने वहीं पर एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें यह स्वयं सदाशिव रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महापार्वती रूप में रखता है। इन दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र उत्पन्न होता है, उसका नाम शिव रख देते हैं तथा तमोगुण युक्त कर देते हैं। (प्रमाण के लिए देखें पवित्र श्री शिव महापुराण, विघ्नेश्वर संहिता के पृष्ठ 24-26 पर जिसमें ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तथा महेश्वर से अन्य सदाशिव हैं तथा रुद्र संहिता अध्याय 6 तथा 7,9 पृष्ठ नं०. 100 से, 105 तथा 110 पर अनुवादकर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित तथा

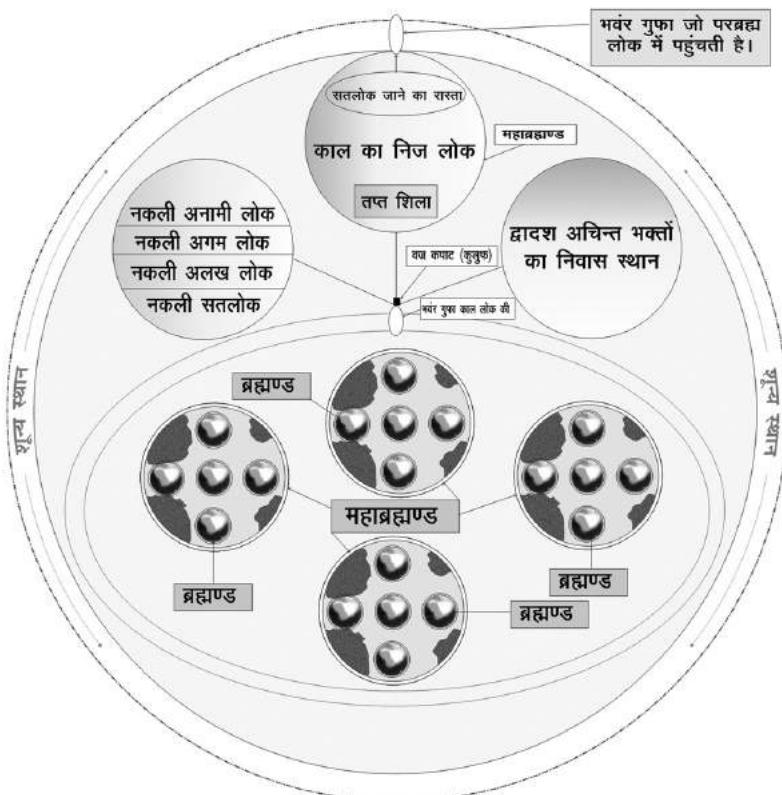
पवित्र श्रीमद् देवी महापुराण तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 114 से 123 तक, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, जिसके अनुवाद कर्ता है श्री हनुमान प्रसाद पोद्धार चिमन लाल गोस्वामी) फिर इन्हीं को धोखे में रखकर अपने खाने के लिए जीवों की उत्पत्ति श्री ब्रह्मा जी द्वारा तथा स्थिति (एक-दूसरे को मोह-ममता में रखकर काल जाल में रखना) श्री विष्णु जी से तथा संहार (क्योंकि काल पुरुष को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर से मैल निकालकर खाना होता है, उसके लिए इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में एक तप्तशिला है जो खतः गर्म रहती है, उस पर गर्म करके मैल पिघलाकर खाता है, जीव मरते नहीं परन्तु कष्ट असहनीय होता है, फिर प्राणियों को कर्म आधार पर अन्य शरीर प्रदान करता है) श्री शिव जी द्वारा करवाता है। जैसे किसी मकान में तीन कमरे बने हों। एक कमरे में अश्लील चित्र लगे हों। उस कमरे में जाते ही मन में वैसे ही मलीन विचार उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरे कमरे में साधु-सन्तों, भक्तों के चित्र लगे हों तो मन में अच्छे विचार, प्रभु का चिंतन ही बना रहता है। तीसरे कमरे में देशभक्तों व शहीदों के चित्र लगे हों तो मन में वैसे ही जोशीले विचार उत्पन्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ब्रह्म(काल) ने अपनी सूझ-बूझ से उपरोक्त तीनों गुण प्रधान स्थानों की रचना की हुई है।

(देखें ब्रह्म लोक का लघु चित्र व ज्योति निर्जन (काल) ब्रह्म, के लोक 21 ब्रह्माण्ड का लघु चित्र इसी पुस्तक के पृष्ठ 126 व 127 पर)

ब्रह्म लोक का लघु चित्र



ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म के लोक (21 ब्रह्मण्ड) का लघु चित्र



“सम्पूर्ण सृष्टि रचना”

(सूक्ष्मवेद से निष्कर्ष रूप सृष्टि रचना का वर्णन)

प्रभु प्रेमी आत्माएँ प्रथम बार निम्न सृष्टि की रचना को पढ़ेंगे तो ऐसे लगेगा जैसे दन्त कथा हो, परन्तु सर्व पवित्र सद्ग्रन्थों के प्रमाणों को पढ़कर दाँतों तले उँगली दबाएँगे कि यह वास्तविक अमृत ज्ञान कहाँ छुपा था? कृप्या धैर्य के साथ पढ़ते रहिए तथा इस अमृत ज्ञान को सुरक्षित रखिए। आप की एक सौ एक पीढ़ी तक काम आएगा। पवित्रात्माएँ कृप्या सत्यनारायण (अविनाशी प्रभु/सतपुरुष) द्वारा रची सृष्टि रचना का वास्तविक ज्ञान पढ़ें।

1. पूर्ण ब्रह्म :- इस सृष्टि रचना में सतपुरुष-सतलोक का स्वामी (प्रभु), अलख पुरुष-अलख लोक का स्वामी (प्रभु), अगम पुरुष-अगम लोक का स्वामी (प्रभु) तथा अनामी पुरुष-अनामी अकह लोक का स्वामी (प्रभु) तो एक ही पूर्ण ब्रह्म है, जो वास्तव में अविनाशी प्रभु है जो भिन्न-२ रूप धारण करके अपने चारों लोकों में रहता है। जिसके अन्तर्गत असंख्य ब्रह्माण्ड आते हैं।

2. परब्रह्म :- यह केवल सात संख ब्रह्माण्ड का स्वामी (प्रभु) है। यह अक्षर पुरुष भी कहलाता है। परन्तु यह तथा इसके ब्रह्माण्ड भी वास्तव में अविनाशी नहीं है।

3. ब्रह्म :- यह केवल इकीस ब्रह्माण्ड का स्वामी (प्रभु) है। इसे क्षर पुरुष, ज्योति निरंजन, काल आदि उपमा से जाना जाता है। यह तथा इसके सर्व ब्रह्माण्ड नाशवान हैं।

(उपरोक्त तीनों पुरुषों (प्रभुओं) का प्रमाण पवित्र श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी है।)

4. ब्रह्मा :- ब्रह्मा इसी ब्रह्म का ज्येष्ठ पुत्र है, विष्णु मध्य वाला पुत्र है तथा शिव अंतिम तीसरा पुत्र है। ये तीनों ब्रह्म के पुत्र केवल एक ब्रह्माण्ड में एक विभाग (गुण) के स्वामी (प्रभु) हैं तथा नाशवान हैं। विस्तृत विवरण के लिए कृप्या पढ़ें निम्न लिखित सृष्टि रचना :-

{कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने सुक्ष्म वेद अर्थात् कविर्बाणी में अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया है जो निम्नलिखित है}

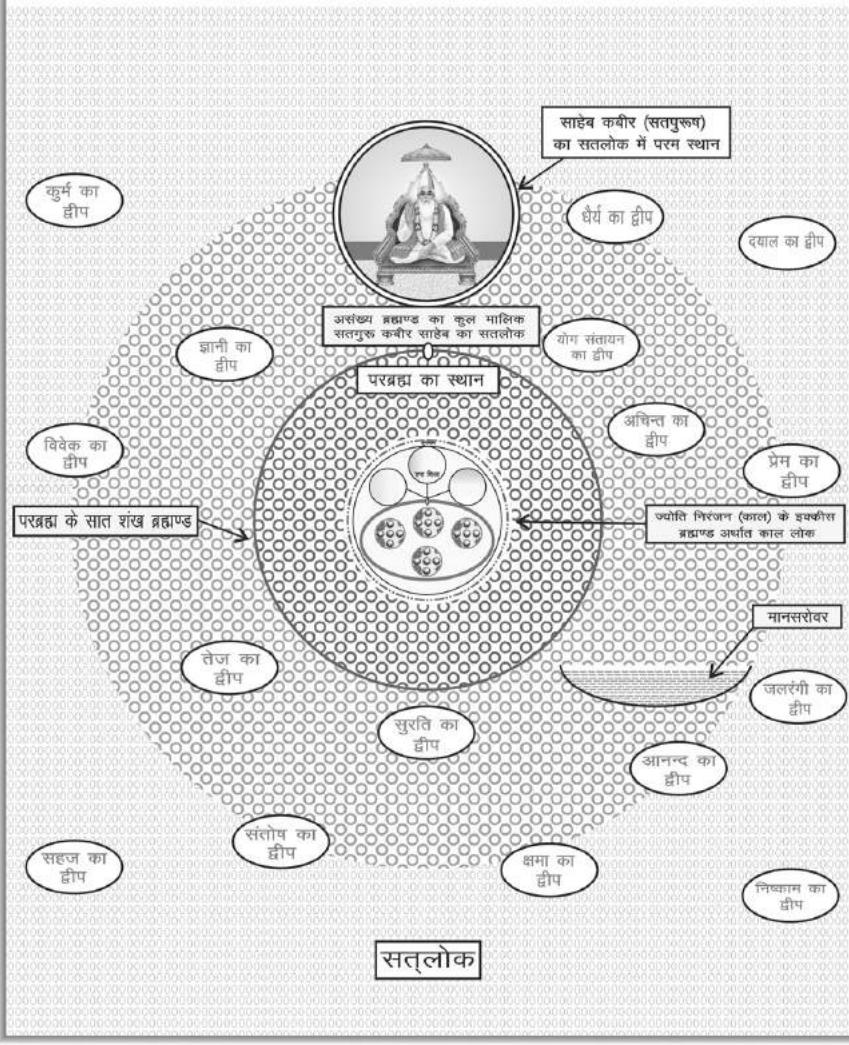
सर्व प्रथम केवल एक स्थान ‘अनामी (अनामय) लोक’ था। जिसे अकह लोक भी कहा जाता है, पूर्ण परमात्मा उस अनामी लोक में अकेला रहता था। उस परमात्मा का वास्तविक नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है। सभी आत्माएँ उस पूर्ण धनी के शरीर में समाई हुई थी। इसी कविर्देव का उपमात्मक (पदवी का) नाम अनामी पुरुष है (पुरुष का अर्थ प्रभु होता है। प्रभु ने मनुष्य को अपने ही स्वरूप में बनाया है, इसलिए मानव का नाम भी पुरुष ही पड़ा है।) अनामी पुरुष के एक रोम कूप का प्रकाश संख सूर्यों की रोशनी से भी अधिक है।

परमेश्वर कबीर साहेब के असंख्य ब्रह्मण्डों का लघु चित्र

अनामी लोक : इस लोक में आत्मा और परमात्मा एक रूप होकर कबीर साहेब ही अनामी रूप में है। जैसे मिट्टी के ढले (छोटे-छोटे टुकड़े) हो जाते हैं। फिर वर्षा होने पर एक पृथ्वी बन जाती है, अलग आस्तित्व नहीं रहता।

अगम लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अगम पुरुष रूप में रहते हैं।

अलख लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अलख पुरुष रूप में रहते हैं।



विशेष :- जैसे किसी देश के आदरणीय प्रधान मंत्री जी का शरीर का नाम तो अन्य होता है तथा पद का उपमात्मक (पदवी का) नाम प्रधानमंत्री होता है। कई बार प्रधानमंत्री जी अपने पास कई विभाग भी रख लेते हैं। तब जिस भी विभाग के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करते हैं तो उस समय उसी पद को लिखते हैं। जैसे गृहमंत्रालय के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करेंगे तो अपने को गृह मंत्री लिखेंगे। वहाँ उसी व्यक्ति के हस्ताक्षर की शक्ति कम होती है। इसी प्रकार कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की रोशनी में अंतर भिन्न-२ लोकों में होता जाता है।

ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने नीचे के तीन और लोकों (अगमलोक, अलख लोक, सतलोक) की रचना शब्द(वचन) से की। यही पूर्णब्रह्म परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही अगम लोक में प्रकट हुआ तथा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अगम लोक का भी स्वामी है तथा वहाँ इनका उपमात्मक (पदवी का) नाम अगम पुरुष अर्थात् अगम प्रभु है। इसी अगम प्रभु का मानव सदृश शरीर बहुत तेजोमय है जिसके एक रोम कूप की रोशनी खरब सूर्य की रोशनी से भी अधिक है।

यह पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबिर देव=कबीर परमेश्वर) अलख लोक में प्रकट हुआ तथा स्वयं ही अलख लोक का भी स्वामी है तथा उपमात्मक (पदवी का) नाम अलख पुरुष भी इसी परमेश्वर का है तथा इस पूर्ण प्रभु का मानव सदृश शरीर तेजोमय (स्वजर्योत्ति) स्वयं प्रकाशित है। एक रोम कूप की रोशनी अरब सूर्यों के प्रकाश से भी ज्यादा है।

यही पूर्ण प्रभु सतलोक में प्रकट हुआ तथा सतलोक का भी अधिपति यही है। इसलिए इसी का उपमात्मक (पदवी का) नाम सतपुरुष (अविनाशी प्रभु) है। इसी का नाम अकालमूर्ति - शब्द स्वरूपी राम - पूर्ण ब्रह्म - परम अक्षर ब्रह्म आदि हैं। इसी सतपुरुष कविर्देव (कबीर प्रभु) का मानव सदृश शरीर तेजोमय है। जिसके एक रोमकूप का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के प्रकाश से भी अधिक है।

इस कविर्देव (कबीर प्रभु) ने सतपुरुष रूप में प्रकट होकर सतलोक में विराजमान होकर प्रथम सतलोक में अन्य रचना की।

एक शब्द (वचन) से सोलह द्वीपों की रचना की। फिर सोलह शब्दों से सोलह पुत्रों की उत्पत्ति की। एक मानसरोवर की रचना की जिसमें अमृत भरा। सोलह पुत्रों के नाम हैं :- (1) “कूर्म”, (2) “ज्ञानी”, (3) “विवेक”, (4) “तेज”, (5) “सहज”, (6) “सन्तोष”, (7) “सुरति”, (8) “आनन्द”, (9) “क्षमा”, (10) “निष्काम”, (11) “जलरंगी” (12) “अचिन्त”, (13) “प्रेम”, (14) “दयाल”, (15) “धैर्य” (16) “योग संतायन” अर्थात् “योगजीत”।

सतपुरुष कविर्देव ने अपने पुत्र अचिन्त को सत्यलोक की अन्य रचना का भार

सौंपा तथा शक्ति प्रदान की। अचिन्त ने अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की शब्द से उत्पत्ति की तथा कहा कि मेरी मदद करना। अक्षर पुरुष स्नान करने मानसरोवर पर गया, वहाँ आनन्द आया तथा सो गया। लम्बे समय तक बाहर नहीं आया। तब अचिन्त की प्रार्थना पर अक्षर पुरुष को नींद से जगाने के लिए कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने उसी मानसरोवर से कुछ अमृत जल लेकर एक अण्डा बनाया तथा उस अण्डे में एक आत्मा प्रवेश की तथा अण्डे को मानसरोवर के अमृत जल में छोड़ा। अण्डे की गड़ग़ड़ाहट से अक्षर पुरुष की निंद्रा भंग हुई। उसने अण्डे को क्रोध से देखा जिस कारण से अण्डे के दो भाग हो गए। उसमें से ज्योति निरंजन (क्षर पुरुष) निकला जो आगे चलकर 'काल' कहलाया। इसका वास्तविक नाम "कैल" है। तब सतपुरुष (कविर्देव) ने आकाशवाणी की कि आप दोनों बाहर आओ तथा अचिंत के द्वीप में रहो। आज्ञा पाकर अक्षर पुरुष तथा क्षर पुरुष (कैल) दोनों अचिंत के द्वीप में रहने लगे (बच्चों की नालायकी उन्हीं को दिखाई कि कहीं फिर प्रभुता की तड़फ न बन जाए, क्योंकि समर्थ बिन कार्य सफल नहीं होता) फिर पूर्ण धनी कविर्देव ने सर्व रचना स्वयं की। अपनी शब्द शक्ति से एक राजेश्वरी (राष्ट्री) शक्ति उत्पन्न की, जिससे सर्व ब्रह्माण्डों को स्थापित किया। इसी को पराशक्ति परानन्दनी भी कहते हैं। पूर्ण ब्रह्म ने सर्व आत्माओं को अपने ही अन्दर से अपनी वचन शक्ति से अपने मानव शरीर सदृश उत्पन्न किया। प्रत्येक हंस आत्मा का परमात्मा जैसा ही शरीर रचा जिसका तेज 16 (सोलह) सूर्यों जैसा मानव सदृश ही है। परन्तु परमेश्वर के शरीर के एक रोम कूप का प्रकाश करोड़ों सूर्यों से भी ज्यादा है। बहुत समय उपरान्त क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) ने सोचा कि हम तीनों (अचिन्त - अक्षर पुरुष - क्षर पुरुष) एक द्वीप में रह रहे हैं तथा अन्य एक-एक द्वीप में रह रहे हैं। मैं भी साधना करके अलग द्वीप प्राप्त करूँगा। उसने ऐसा विचार करके एक पैर पर खड़ा होकर सत्तर (70) युग तक तप किया।

"आत्माएँ काल के जाल में कैसे फँसी?"

विशेष :- जब ब्रह्म (ज्योति निरंजन) तप कर रहा था हम सभी आत्माएँ, जो आज ज्योति निरंजन के इककीस ब्रह्माण्डों में रहते हैं इसकी साधना पर आसक्त हो गए तथा अन्तरात्मा से इसे चाहने लगे। अपने सुखदाई प्रभु सत्य पुरुष से विमुख हो गए। जिस कारण से पतिव्रता पद से गिर गए। पूर्ण प्रभु के बार-बार सावधान करने पर भी हमारी आसक्ति क्षर पुरुष से नहीं हटी। (यहीं प्रभाव आज भी काल सृष्टि में विद्यमान है। जैसे नौजवान बच्चे फिल्म स्टारों (अभिनेताओं तथा अभिनेत्रियों) की बनावटी अदाओं तथा अपने रोजगार उद्देश्य से कर रहे भूमिका पर अति आसक्त हो जाते हैं, रोकने से नहीं रुकते। यदि कोई अभिनेता या अभिनेत्री

निकटवर्ती शहर में आ जाए तो देखें उन नादान बच्चों की भीड़ के बल दर्शन करने के लिए बहु संख्या में एकत्रित हो जाती हैं। 'लेना एक न देने दो' रोजी रोटी अभिनेता कमा रहे हैं, नौजवान बच्चे लुट रहे हैं। माता-पिता कितना ही समझाएं किन्तु बच्चे नहीं मानते। कहीं न कहीं, कभी न कभी, लुक-छिप कर जाते ही रहते हैं।}

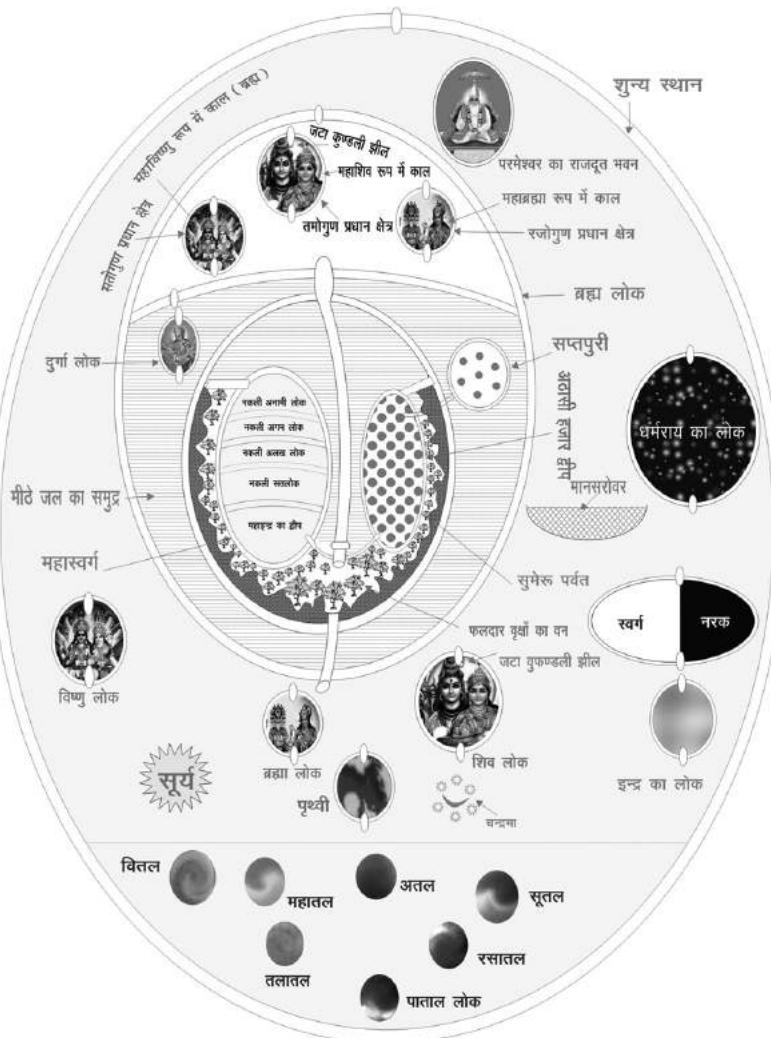
पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) ने क्षर पुरुष से पूछा कि बोलो क्या चाहते हो? उसने कहा कि पिता जी यह स्थान मेरे लिए कम है, मुझे अलग से द्वीप प्रदान करने की कृपा करें। हक्का कबीर (सत् कबीर) ने उसे 21 (इककीस) ब्रह्माण्ड प्रदान कर दिए। कुछ समय उपरान्त ज्योति निरंजन ने सोचा इस में कुछ रचना करनी चाहिए। खाली ब्रह्माण्ड(प्लाट) किस काम के। यह विचार कर 70 युग तप करके पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर प्रभु) से रचना सामग्री की याचना की। सतपुरुष ने उसे तीन गुण तथा पाँच तत्त्व प्रदान कर दिए, जिससे ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने अपने ब्रह्माण्डों में कुछ रचना की। फिर सोचा कि इसमें जीव भी होने चाहिए, अकेले का दिल नहीं लगता। यह विचार करके 64 (चौसठ) युग तक फिर तप किया। पूर्ण परमात्मा कविर् देव के पूछने पर बताया कि मुझे कुछ आत्मा दे दो, मेरा अकेले का दिल नहीं लग रहा। तब सतपुरुष कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि ब्रह्म तेरे तप के प्रतिफल में मैं तुझे और ब्रह्माण्ड दे सकता हूँ, परन्तु मेरी आत्माओं को किसी भी जप-तप साधना के फल रूप में नहीं दे सकता। हाँ, यदि कोई स्वेच्छा से तेरे साथ जाना चाहे तो वह जा सकता है। युवा कविर् (समर्थ कबीर) के वचन सुन कर ज्योति निरंजन हमारे पास आया। हम सभी हंस आत्मा पहले से ही उस पर आसक्त थे। हम उसे चारों तरफ से घेर कर खड़े हो गए। ज्योति निरंजन ने कहा कि मैंने पिता जी से अलग 21 ब्रह्माण्ड प्राप्त किए हैं। वहाँ नाना प्रकार के रमणीय स्थल बनाए हैं। क्या आप मेरे साथ चलोगे? हम सभी हंसों ने जो आज 21 ब्रह्माण्डों में परेशान हैं, कहा कि हम तैयार हैं यदि पिता जी आज्ञा दें तब क्षर पुरुष पूर्ण ब्रह्म महान् कविर् (समर्थ कबीर प्रभु) के पास गया तथा सर्व वार्ता कही। तब कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि मेरे सामने स्वीकृति देने वाले को आज्ञा दूंगा। क्षर पुरुष तथा परम अक्षर पुरुष (कविरग्नितौजा) दोनों हम सभी हंसात्माओं के पास आए। सत् कविर्देव ने कहा कि जो हंस आत्मा ब्रह्म के साथ जाना चाहता है हाथ ऊपर करके स्वीकृति दे। अपने पिता के सामने किसी की हिम्मत नहीं हुई। किसी ने स्वीकृति नहीं दी। बहुत समय तक सन्नाटा छाया रहा। तत्‌पश्चात् एक हंस आत्मा ने साहस किया तथा कहा कि पिता जी मैं जाना चाहता हूँ। फिर तो उसकी देखा-देखी (जो आज काल (ब्रह्म) के इककीस ब्रह्माण्डों में फंसी हैं) हम सभी आत्माओं ने स्वीकृति दे दी। परमेश्वर कबीर जी ने ज्योति निरंजन से कहा कि आप अपने स्थान पर जाओ। जिन्होंने तेरे साथ जाने की स्वीकृति दी है मैं उन सर्व हंस आत्माओं को आपके

पास भेज दूँगा। ज्योति निरंजन अपने 21 ब्रह्माण्डों में चला गया। उस समय तक यह इकीस ब्रह्माण्ड सतलोक में ही थे।

तत्पश्चात् पूर्ण ब्रह्म ने सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को लड़की का रूप दिया परन्तु स्त्री इन्द्री नहीं रची तथा सर्व आत्माओं को (जिन्होंने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) के साथ जाने की सहमति दी थी) उस लड़की के शरीर में प्रवेश कर दिया तथा उसका नाम आष्ट्रा (आदि माया/ प्रकृति देवी/ दुर्गा) पड़ा तथा सत्य पुरुष ने कहा कि पुत्री मैंने तेरे को शब्द शक्ति प्रदान कर दी है जितने जीव ब्रह्म कहे आप उत्पन्न कर देना। पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कवीर साहेब) अपने पुत्र सहज दास के द्वारा प्रकृति को क्षर पुरुष के पास भिजवा दिया। सहज दास जी ने ज्योति निरंजन को बताया कि पिता जी ने इस बहन के शरीर में उन सर्व आत्माओं को प्रवेश कर दिया है जिन्होंने आपके साथ जाने की सहमति व्यक्त की थी तथा इसको पिता जी ने वचन शक्ति प्रदान की है, आप जितने जीव चाहोगे प्रकृति अपने शब्द से उत्पन्न कर देगी। यह कह कर सहजदास वापिस अपने द्वीप में आ गया।

युवा होने के कारण लड़की का रंग-रूप निखरा हुआ था। ब्रह्म के अन्दर विषय-वासना उत्पन्न हो गई तथा प्रकृति देवी के साथ अभद्र गति विधि प्रारम्भ की। तब दुर्गा ने कहा कि ज्योति निरंजन मेरे पास पिता जी की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है। आप जितने प्राणी कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। आप मैथुन परम्परा शुरू मत करो। आप भी उसी पिता के शब्द से अण्डे से उत्पन्न हुए हो तथा मैं भी उसी परमपिता के वचन से ही बाद में उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे बड़े भाई हो, बहन-भाई का यह योग महापाप का कारण बनेगा। परन्तु ज्योति निरंजन ने प्रकृति देवी की एक भी प्रार्थना नहीं सुनी तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (भग) प्रकृति को लगा दी तथा बलात्कार करने की ठानी। उसी समय दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए कोई और चारा न देख सुक्ष्म रूप बनाया तथा ज्योति निरंजन के खुले मुख के द्वारा पेट में प्रवेश करके पूर्णब्रह्म कविर् देव से अपनी रक्षा के लिए याचना की। उसी समय कविर्देव (कविर् देव) अपने पुत्र योग संतायन अर्थात् जोगजीत का रूप बनाकर वहाँ प्रकट हुए तथा कन्या को ब्रह्म के उदर से बाहर निकाला तथा कहा कि ज्योति निरंजन आज से तेरा नाम 'काल' होगा। तेरे जन्म-मृत्यु होते रहेंगे। इसीलिए तेरा नाम क्षर पुरुष होगा तथा एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को प्रतिदिन खाया करेगा व सवा लाख उत्पन्न किया करेगा। आप दोनों को इकीस ब्रह्माण्ड सहित निष्कासित किया जाता है। इतना कहते ही इकीस ब्रह्माण्ड विमान की तरह चल पड़े। सहज दास के द्वीप के पास से होते हुए सतलोक से सोलह संख कोस (एक कोस लगभग 3 कि. मी. का होता है) की दूरी पर आकर रुक गए।

एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र



विशेष विवरण - अब तक तीन शक्तियों का विवरण आया है।

1. पूर्णब्रह्म जिसे अन्य उपमात्मक नामों से भी जाना जाता है, जैसे सत्पुरुष, अकालपुरुष, शब्द स्वरूपी राम, परम अक्षर ब्रह्म/पुरुष आदि। यह पूर्णब्रह्म असंख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी है तथा वास्तव में अविनाशी है।

2. परब्रह्म जिसे अक्षर पुरुष भी कहा जाता है। यह वास्तव में अविनाशी नहीं है। यह सात शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है।

3. ब्रह्म जिसे ज्योति निरंजन, काल, कैल, क्षर पुरुष तथा धर्मराय आदि नामों से जाना जाता है, जो केवल इककीस ब्रह्माण्ड का स्वामी है। अब आगे इसी ब्रह्म (काल) की सृष्टि के एक ब्रह्माण्ड का परिचय दिया जाएगा, जिसमें तीन और नाम आपके पढ़ने में आयेंगे - ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव।

ब्रह्म तथा ब्रह्मा में भेद - एक ब्रह्माण्ड में बने सर्वोपरि स्थान पर ब्रह्मा (क्षर पुरुष) स्वयं तीन गुप्त स्थानों की रचना करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी प्रकृति (दुर्गा) के सहयोग से तीन पुत्रों की उत्पत्ति करता है। उनके नाम भी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ही रखता है। जो ब्रह्म का पुत्र ब्रह्मा है वह एक ब्रह्माण्ड में केवल तीन लोकों (पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में एक रजोगुण विभाग का मंत्री (स्वामी) है। इसे त्रिलोकीय ब्रह्मा कहा है तथा ब्रह्म जो ब्रह्मलोक में ब्रह्मा रूप में रहता है उसे महाब्रह्मा व ब्रह्मलोकीय ब्रह्मा कहा है। इसी ब्रह्म (काल) को सदाशिव, महाशिव, महाविष्णु भी कहा है।

श्री विष्णु पुराण में प्रमाण :- चतुर्थ अंश अध्याय 1 पृष्ठ 230-231 पर श्री ब्रह्मा जी ने कहा :- जिस अजन्मा, सर्वमय विधाता परमेश्वर का आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते (श्लोक 83)

जो मेरा रूप धारण कर संसार की रचना करता है, स्थिति के समय जो पुरुष रूप है तथा जो रुद्र रूप से विश्व का ग्रास कर जाता है, अनन्त रूप से सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है। (श्लोक 86)

“श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति”

काल (ब्रह्म) ने प्रकृति (दुर्गा) से कहा कि अब मेरा कौन क्या बिगड़ेगा? मन मानी करूंगा प्रकृति ने फिर प्रार्थना की कि आप कुछ शर्म करो। प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हो, क्योंकि उसी पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की वचन शक्ति से आप की (ब्रह्म की) अण्डे से उत्पत्ति हुई तथा बाद में मेरी उत्पत्ति उसी परमेश्वर के वचन से हुई है। दूसरे मैं आपके पेट से बाहर निकली हूँ, मैं आपकी बेटी हुई तथा आप मेरे पिता हुए। इन पवित्र नातों में बिगड़ करना महापाप होगा। मेरे पास पिता की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है, जितने प्राणी आप कहोंगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूंगी। ज्योति निरंजन ने दुर्गा की एक भी विनय नहीं सुनी तथा

कहा कि मुझे जो सजा मिलनी थी मिल गई, मुझे सतलोक से निष्कासित कर दिया। अब मनमानी करूँगा। यह कह कर काल पुरुष (क्षर पुरुष) ने प्रकृति के साथ जबरदस्ती शादी की तथा तीन पुत्रों (रजगुण युक्त - ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त - विष्णु जी तथा तमगुण युक्त - शिव शंकर जी) की उत्पत्ति की। जवान होने तक तीनों पुत्रों को द्वारा अचेत करवा देता है, फिर युवा होने पर श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर, श्री विष्णु जी को शेष नाग की शैय्या पर तथा श्री शिव जी को कैलाश पर्वत पर सचेत करके इकट्ठे कर देता है। तत्पश्चात् प्रकृति (दुर्गा) द्वारा इन तीनों का विवाह कर दिया जाता है तथा एक ब्रह्माण्ड में तीन लोकों (स्वर्ग लोक, पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) में एक-एक विभाग के मंत्री (प्रभु) नियुक्त कर देता है। जैसे श्री ब्रह्मा जी को रजोगुण विभाग का तथा विष्णु जी को सतोगुण विभाग का तथा श्री शिव शंकर जी को तमोगुण विभाग का तथा स्वयं गुप्त (महाब्रह्मा - महाविष्णु - महाशिव) रूप से मुख्य मंत्री पद को संभालता है। एक ब्रह्माण्ड में एक ब्रह्मलोक की रचना की है। उसी में तीन गुप्त स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान स्थान है जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) स्वयं महाब्रह्मा (मुख्यमंत्री) रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महासावित्री रूप में रखता है। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस स्थान पर उत्पन्न होता है वह स्वतः ही रजोगुणी बन जाता है। दूसरा स्थान सतोगुण प्रधान स्थान बनाया है। वहाँ पर यह क्षर पुरुष स्वयं महाविष्णु रूप बना कर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महालक्ष्मी रूप में रख कर जो पुत्र उत्पन्न करता है उसका नाम विष्णु रखता है, वह बालक सतोगुण युक्त होता है तथा तीसरा इसी काल ने वहीं पर एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें यह स्वयं सदाशिव रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महापार्वती रूप में रखता है। इन दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र उत्पन्न होता है उसका नाम शिव रख देते हैं तथा तमोगुण युक्त कर देते हैं। (प्रमाण के लिए देखें पवित्र श्री शिव महापुराण, विद्यवेश्वर संहिता पृष्ठ 24-26 जिस में ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तथा महेश्वर से अन्य सदाशिव हैं तथा रुद्र संहिता अध्याय 6 तथा 7, 9 पृष्ठ नं. 100 से, 105 तथा 110 पर अनुवाद कर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्धार, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित तथा पवित्र श्रीमद्देवीमहापुराण तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 114 से 123 तक, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, जिसके अनुवाद कर्ता हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्धार चिमन लाल गोस्वामी) फिर इन्हीं को धोखे में रख कर अपने खाने के लिए जीवों की उत्पत्ति श्री ब्रह्मा जी द्वारा तथा स्थिति (एक-दूसरे को मोह-ममता में रख कर काल जाल में रखना) श्री विष्णु जी से तथा संहार (क्योंकि काल पुरुष को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर से मैल निकाल कर खाना होता है उसके लिए इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में एक तप्तशिला है जो स्वतः गर्म रहती है, उस

पर गर्म करके मैल पिंघला कर खाता है, जीव मरते नहीं परन्तु कष्ट असहनीय होता है, फिर प्राणियों को कर्म आधार पर अन्य शरीर प्रदान करता है) श्री शिव जी द्वारा करवाता है। जैसे किसी मकान में तीन कमरे बने हों। एक कमरे में अश्लील चित्र लगे हों। उस कमरे में जाते ही मन में वैसे ही मलिन विचार उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरे कमरे में साधु-सन्तों, भक्तों के चित्र लगे हों तो मन में अच्छे विचार, प्रभु का चिन्तन ही बना रहता है। तीसरे कमरे में देश भक्तों व शहीदों के चित्र लगे हों तो मन में वैसे ही जोशीले विचार उत्पन्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ब्रह्म (काल) ने अपनी सूझ-बूझ से उपरोक्त तीनों गुण प्रधान स्थानों की रचना की हुई है।

“तीनों गुण क्या हैं? प्रमाण सहित”

“तीनों गुण रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी हैं। ब्रह्म (काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) से उत्पन्न हुए हैं तथा तीनों नाशवान हैं”

प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री शिव महापुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्धार पृष्ठ सं. 24 से 26 विद्यवेश्वर संहिता तथा पृष्ठ 110 अध्याय 9 रुद्र संहिता “इस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (ब्रह्म-काल) गुणातीत कहा गया है।

दूसरा प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद् देवीभागवत पुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्धार चिमन लाल गोस्वामी, तीसरा स्कंद, अध्याय 5 पृष्ठ 123 :- भगवान विष्णु ने दुर्गा की स्तुति की : कहा कि मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर तुम्हारी कृपा से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मृत्यु) होती है। हम नित्य (अविनाशी) नहीं हैं। तुम ही नित्य हो, जगत् जननी हो, प्रकृति और सनातनी देवी हो। भगवान शंकर ने कहा : यदि भगवान ब्रह्मा तथा भगवान विष्णु तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाला मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ ? अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हों। इस संसार की सृष्टि-स्थिति-संहार में तुम्हारे गुण सदा सर्वदा हैं। इन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम, ब्रह्मा-विष्णु तथा शंकर नियमानुसार कार्य में तत्पर रहते हैं।

उपरोक्त यह विवरण केवल हिन्दी में अनुवादित श्री देवीमहापुराण से है, जिसमें कुछ तथ्यों को छुपाया गया है। इसलिए यही प्रमाण देखें श्री मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन मुम्बई, इसमें संस्कृत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कंद अध्याय 4 पृष्ठ 10, श्लोक 42 :-

ब्रह्मा — अहम् ईश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः
के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकृतिः पुराणा । (42)

हिन्दी अनुवाद :- हे मात! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, नित्य नहीं हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, किर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकृति तथा सनातनी देवी हो।

पृष्ठ 11-12, अध्याय 5, श्लोक 8 :- यदि दयार्दमना न सदांडबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्त्वगुणोऽहरिः ।(8)

अनुवाद :- भगवान शंकर बोले :- हे मात! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किस लिए बनाया तथा विष्णु को सत्तगुण क्यों बनाया? अर्थात् जीवों के जन्म-मृत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :- रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी - अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग-विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

निष्कर्ष :- उपरोक्त प्रमाणों से प्रमाणित हुआ की रजगुण - ब्रह्म, सत्तगुण विष्णु तथा तमगुण शिव है ये तीनों नाशवान हैं। दुर्गा का पति ब्रह्म (काल) है यह उसके साथ भोग विलास करता है।

“ब्रह्म (काल) की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा”

सूक्ष्मवेद से शेष सृष्टि रचना-----

तीनों पुत्रों की उत्पत्ति के पश्चात् ब्रह्म ने अपनी पत्नी दुर्गा (प्रकृति) से कहा मैं प्रतिज्ञा करता हुँ कि भविष्य में मैं किसी को अपने वास्तविक रूप में दर्शन नहीं दूँगा। जिस कारण से मैं अव्यक्त माना जाऊँगा। दुर्गा से कहा कि आप मेरा भेद किसी को मत देना। मैं गुप्त रहूँगा। दुर्गा ने पूछा कि क्या आप अपने पुत्रों को भी दर्शन नहीं दोगे? ब्रह्म ने कहा मैं अपने पुत्रों को तथा अन्य को किसी भी साधना से दर्शन नहीं दूँगा, यह मेरा अटल नियम रहेगा। दुर्गा ने कहा यह तो आपका उत्तम नियम नहीं है जो आप अपनी संतान से भी छुपे रहोगे। तब काल ने कहा दुर्गा मेरी विवशता है। मुझे एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करने का शाप लगा है। यदि मेरे पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) को पता लग गया तो ये उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्य नहीं करेंगे। इसलिए यह मेरा अनुत्तम नियम सदा रहेगा। जब ये तीनों कुछ बड़े हो जाएं तो इन्हें अचेत कर देना। मेरे विषय में नहीं बताना, नहीं तो मैं तुझे भी दण्ड दूँगा, दुर्गा इस डर के मारे वास्तविकता नहीं बताती। इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24 में कहा है कि यह बुद्धिहीन जन समुदाय मेरे अनुत्तम नियम से अपिरिच्छत हैं कि मैं कभी भी किसी के सामने प्रकट नहीं होता अपनी योग माया से छुपा रहता हूँ। इसलिए मुझ अव्यक्त को मनुष्य रूप में आया हुआ अर्थात् कृष्ण मानते हैं।

(अबुद्ध्यः) बुद्धि हीन (मम) मेरे (अनुत्तमम) अनुत्तम अर्थात् घटिया (अव्ययम)

अविनाशी (परम् भावम्) विशेष भाव को (अजानन्तः) न जानते हुए (माम् अव्यक्तम्) मुझ अव्यक्त को (व्यक्तिम्) मनुष्य रूप में (आपन्नम्) आया (मन्यन्ते) मानते हैं अर्थात् मैं कृष्ण नहीं हूँ। (गीता अध्याय 7 श्लोक 24)

गीता अध्याय 11 श्लोक 47 तथा 48 में कहा है कि यह मेरा वास्तविक काल रूप है। इसके दर्शन अर्थात् ब्रह्म प्राप्ति न वेदों में वर्णित विधि से, न जप से, न तप से तथा न किसी क्रिया से हो सकती है।

जब तीनों बच्चे युवा हो गए तब माता भवानी (प्रकृति, अष्टंगी) ने कहा कि तुम सागर मन्थन करो। प्रथम बार सागर मन्थन किया तो (ज्योति निरंजन ने अपने श्वांसों द्वारा चार वेद उत्पन्न किए। उनको गुप्त वाणी द्वारा आज्ञा दी कि सागर में निवास करो) चारों वेद निकले वह ब्रह्मा ने लिए। वस्तु लेकर तीनों बच्चे माता के पास आए तब माता ने कहा कि चारों वेदों को ब्रह्मा रखे व पढे।

नोट :- वास्तव में पूर्णब्रह्म ने, ब्रह्म अर्थात् काल को पाँच वेद प्रदान किए थे। लेकिन ब्रह्म ने केवल चार वेदों को प्रकट किया। पाँचवां वेद छुपा दिया। जो पूर्ण परमात्मा ने स्वयं प्रकट होकर कविर्गिर्भीः अर्थात् कविर्वाणी (कबीर वाणी) द्वारा लोकोक्तियों व दोहों के माध्यम से प्रकट किया है।

दूसरी बार सागर मन्थन किया तो तीन कन्याएँ मिली। माता ने तीनों को बांट दिया। प्रकृति (दुर्गा) ने अपने ही अन्य तीन रूप (सावित्री, लक्ष्मी तथा पार्वती) धारण किए तथा समुन्द्र में छुपा दी। सागर मन्थन के समय बाहर आ गई। वही प्रकृति तीन रूप हुई तथा भगवान ब्रह्मा को सावित्री, भगवान विष्णु को लक्ष्मी, भगवान शंकर को पार्वती पत्नी रूप में दी। तीनों ने भोग विलास किया, सुर तथा असुर दोनों पैदा हुए।

{जब तीसरी बार सागर मन्थन किया तो चौदह रत्न ब्रह्मा को तथा अमृत विष्णु को व देवताओं को, मद्य(शराब) असुरों को तथा विष परमार्थ शिव ने अपने कंठ में ठहराया। यह तो बहुत बाद की बात है।} जब ब्रह्मा वेद पढ़ने लगा तो पता चला कि कोई सर्व ब्रह्माण्डों की रचना करने वाला कुल का मालिक पुरुष (प्रभु) और है। तब ब्रह्मा जी ने विष्णु जी व शंकर जी को बताया कि वेदों में वर्णन है कि सृजनहार कोई और प्रभु है परन्तु वेद कहते हैं कि भेद हम भी नहीं जानते, उसके लिए संकेत है कि किसी तत्त्वदर्शी संत से पूछो। तब ब्रह्मा माता के पास आया और सब वृत्तांत कह सुनाया। माता कहा करती थी कि मेरे अतिरिक्त और कोई नहीं है। मैं ही कर्ता हूँ। मैं ही सर्वशक्तिमान हूँ परन्तु ब्रह्मा ने कहा कि वेद ईश्वर कृत हैं यह झूठ नहीं हो सकते। दुर्गा ने कहा कि तेरा पिता तुझे दर्शन नहीं देगा, उसने प्रतिज्ञा की हुई है। तब ब्रह्मा ने कहा माता जी अब आप की बात पर अविश्वास हो गया है। मैं उस पुरुष (प्रभु) का पता लगाकर ही रहूँगा। दुर्गा ने कहा कि यदि वह तुझे दर्शन नहीं देगा तो तुम क्या करोगे? ब्रह्मा ने कहा कि मैं आपको शक्ल नहीं दिखाऊँगा। दूसरी तरफ

ज्योति निरंजन ने कसम खाई है कि मैं अव्यक्त रहूँगा किसी को दर्शन नहीं दूँगा
अर्थात् 21 ब्रह्माण्ड में कभी भी अपने वास्तविक काल रूप में आकार में नहीं आऊँगा।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 24

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः ।

परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम् । ।24 ।।

अनुवाद : (अबुद्धयः) बुद्धिहीन लोग (मम) मेरे (अनुत्तमम्) अश्रेष्ठ (अव्ययम्) अटल (परम्) परम (भावम्) भावको (अजानन्तः) न जानते हुए (अव्यक्तम्) अदृश्यमान (माम्) मुझ कालको (व्यक्तिम्) आकार में कृष्ण अवतार (आपन्नम्) प्राप्त हुआ (मन्यन्ते) मानते हैं।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 25

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमावृतः ।

मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम् । ।25 ।।

अनुवाद : (अहम्) मैं (योगमाया समावृतः) योगमायासे छिपा हुआ (सर्वस्य) सबके (प्रकाशः) प्रत्यक्ष (न) नहीं होता अर्थात् अदृश्य अर्थात् अव्यक्त रहता हूँ इसलिये (अजम्) जन्म न लेने वाले (अव्ययम्) अविनाशी अटल भावको (अयम्) यह (मूढः) अज्ञानी (लोकः) जनसमुदाय संसार (माम्) मुझे (न) नहीं (अभिजानाति) जानता अर्थात् मुझको अवतार रूप में आया समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने नाना रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस मंत्र में कह रहा है कि मैं श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता।

"ब्रह्मा का अपने पिता (काल/ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए प्रयत्न"

तब दुर्गा ने ब्रह्मा जी से कहा कि अलख निरंजन तुम्हारा पिता है परन्तु वह तुम्हें दर्शन नहीं देगा। ब्रह्मा ने कहा कि मैं दर्शन करके ही लौटूँगा। माता ने पूछा कि यदि तुझे दर्शन नहीं हुए तो क्या करेगा ? ब्रह्मा ने कहा मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। यदि पिता के दर्शन नहीं हुए तो मैं आपके समक्ष नहीं आऊँगा। यह कह कर ब्रह्मा जी व्याकुल होकर उत्तर दिशा की तरफ चल दिया जहाँ अन्धेरा ही अन्धेरा है। वहाँ ब्रह्मा ने चार युग तक ध्यान लगाया परन्तु कुछ भी प्राप्ति नहीं हुई। काल ने आकाशवाणी की कि दुर्गा सृष्टि रचना क्यों नहीं की ? भवानी ने कहा कि आप का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा जिद्ध करके आप की तलाश में गया है। ब्रह्म (काल) ने कहा उसे वापिस बुला लो। मैं उसे दर्शन नहीं दूँगा। ब्रह्मा के बिना जीव उत्पत्ति का सब कार्य असम्भव है। तब दुर्गा (प्रकृति) ने अपनी शब्द शक्ति से गायत्री नाम की लड़की उत्पन्न की तथा उसे ब्रह्मा को लौटा लाने को कहा। गायत्री ब्रह्मा जी के पास गई परंतु ब्रह्मा जी समाधि लगाए हुए थे उन्हें कोई आभास ही नहीं था कि कोई आया है। तब आदि कुमारी (प्रकृति) ने गायत्री को ध्यान द्वारा बताया कि इस के चरण स्पर्श कर। तब गायत्री ने ऐसा ही किया। ब्रह्मा जी का ध्यान भंग हुआ तो क्रोध वश बोले कि कौन पापिन है जिसने

मेरा ध्यान भंग किया है। मैं तुझे शाप दूंगा। गायत्री कहने लगी कि मेरा दोष नहीं है पहले मेरी बात सुनो तब शाप देना। मेरे को माता ने तुम्हें लौटा लाने को कहा है क्योंकि आपके बिना जीव उत्पत्ति नहीं हो सकती। ब्रह्मा ने कहा कि मैं कैसे जाऊँ? पिता जी के दर्शन हुए नहीं, ऐसे जाऊँ तो मेरा उपहास होगा। यदि आप माता जी के समक्ष यह कह दें कि ब्रह्मा ने पिता (ज्योति निरंजन) के दर्शन हुए हैं, मैंने अपनी आँखों से देखा है तो मैं आपके साथ चलूँ। तब गायत्री ने कहा कि आप मेरे साथ संभोग (सैक्स) करोगे तो मैं आपकी झूठी साक्षी (गवाही) भरूँगी। तब ब्रह्मा ने सोचा कि पिता के दर्शन हुए नहीं, वैसे जाऊँ तो माता के सामने शर्म लगेगी और चारा नहीं दिखाई दिया, फिर गायत्री से रति क्रिया (संभोग) की।

तब गायत्री ने कहा कि क्यों न एक गवाह और तैयार किया जाए। ब्रह्मा ने कहा बहुत ही अच्छा है। तब गायत्री ने शब्द शक्ति से एक लड़की (पुहपवति नाम की) पैदा की तथा उससे दोनों ने कहा कि आप गवाही देना कि ब्रह्मा ने पिता के दर्शन किए हैं। तब पुहपवति ने कहा कि मैं क्यों झूठी गवाही दूँ? हाँ, यदि ब्रह्मा मेरे से रति क्रिया (संभोग) करे तो गवाही दे सकती हूँ। गायत्री ने ब्रह्मा को समझाया (उकसाया) कि और कोई चारा नहीं है तब ब्रह्मा ने पुहपवति से संभोग किया तो तीनों मिलकर आदि माया (प्रकृति) के पास आए। दोनों देवियों ने उपरोक्त शर्त इसलिए रखी थी कि यदि ब्रह्मा माता के सामने हमारी झूठी गवाही को बता देगा तो माता हमें शाप दे देगी। इसलिए उसे भी दोषी बना लिया।

(यहाँ महाराज गरीबदास जी कहते हैं कि – “दास गरीब यह चूक धुरों धुर”)

“माता (दुर्गा) द्वारा ब्रह्मा को शाप देना”

तब माता ने ब्रह्मा से पूछा क्या तुझे तेरे पिता के दर्शन हुए? ब्रह्मा ने कहा हाँ मुझे पिता के दर्शन हुए हैं। दुर्गा ने कहा साक्षी बता। तब ब्रह्मा ने कहा इन दोनों के समक्ष साक्षात्कार हुआ है। देवी ने उन दोनों लड़कियों से पूछा क्या तुम्हारे सामने ब्रह्म का साक्षात्कार हुआ है तब दानों ने कहा कि हाँ, हमने अपनी आँखों से देखा है। फिर भवानी (प्रकृति) को संशय हुआ कि मुझे तो ब्रह्म ने कहा था कि मैं किसी को दर्शन नहीं दूंगा, परन्तु ये कहते हैं कि दर्शन हुए हैं। तब अष्टंगी ने ध्यान लगाया और काल/ज्योति निरंजन से पूछा कि यह क्या कहानी है? ज्योति निरंजन जी ने कहा कि ये तीनों झूठ बोल रहे हैं। तब माता ने कहा तुम झूठ बोल रहे हो। आकाशवाणी हुई है कि इन्हें कोई दर्शन नहीं हुए। यह बात सुनकर ब्रह्मा ने कहा कि माता जी मैं सौंगंध खाकर पिता की तलाश करने गया था। परन्तु पिता (ब्रह्म) के दर्शन हुए नहीं। आप के पास आने में शर्म लग रही थी। इसलिए हमने झूठ बोल दिया। तब माता (दुर्गा) ने कहा कि अब मैं तुम्हें शाप देती हूँ।

ब्रह्मा को शाप : -- तेरी पूजा जग में नहीं होगी। आगे तेरे वंशज होंगे वे बहुत

पाखण्ड करेंगे। झूठी बात बना कर जग को ठरेंगे। ऊपर से तो कर्म काण्ड करते दिखाई देंगे अन्दर से विकार करेंगे। कथा पुराणों को पढ़कर सुनाया करेंगे, रवयं को ज्ञान नहीं होगा कि सद्ग्रन्थों में वास्तविकता क्या है, फिर भी मान वश तथा धन प्राप्ति के लिए गुरु बन कर अनुयाइयों को लोकवेद (शास्त्र विरुद्ध दंत कथा) सुनाया करेंगे। देवी-देवों की पूजा करके तथा करवाके, दूसरों की निन्दा करके कष्ट पर कष्ट उठायेंगे। जो उनके अनुयाई होंगे उनको परमार्थ नहीं बताएंगे। दक्षिणा के लिए जगत को गुमराह करते रहेंगे। अपने आपको सबसे अच्छा मानेंगे, दूसरों को नीचा समझेंगे। जब माता के मुख से यह सुना तो ब्रह्मा मुर्छित होकर जमीन पर गिर गया। बहुत समय उपरान्त होश में आया।

गायत्री को शाप : -- तेरे कई सांड पति होंगे। तू मृतलोक में गाय बनेगी।

पुहपवति को शाप : -- तेरी जगह गंदगी में होगी। तेरे फूलों को कोई पूजा में नहीं लाएगा। इस झूठी गवाही के कारण तुझे यह नरक भोगना होगा। तेरा नाम केवड़ा केतकी होगा। (हरियाणा में कुसोंधी कहते हैं। यह गंदगी (कुरड़ियों) वाली जगह पर होती है।)

इस प्रकार तीनों को शाप देकर माता भवानी बहुत पछताई। {इस प्रकार पहले तो जीव बिना सोचे मन (काल निरंजन) के प्रभाव से गलत कार्य कर देता है परन्तु जब आत्मा (सतपुरुष अंश) के प्रभाव से उसे ज्ञान होता है तो पीछे पछताना पड़ता है। जिस प्रकार माता-पिता अपने बच्चों को छोटी सी गलती के कारण ताड़ते हैं (क्रोधवश होकर) परन्तु बाद में बहुत पछताते हैं। यही प्रक्रिया मन (काल-निरंजन) के प्रभाव से सर्व जीवों में क्रियावान हो रही है।} हाँ, यहाँ एक बात विशेष है कि निरंजन (काल-ब्रह्म) ने भी अपना कानून बना रखा है कि यदि कोई जीव किसी दुर्बल जीव को सताएगा तो उसे उसका बदला देना पड़ेगा। जब आदि भवानी (प्रकृति, अष्टंगी) ने ब्रह्मा, गायत्री व पुहपवति को शाप दिया तो अलख निरंजन (ब्रह्म-काल) ने कहा कि हे भवानी (प्रकृति/अष्टंगी) यह आपने अच्छा नहीं किया। अब मैं (निरंजन) आपको शाप देता हूँ कि द्वापर युग में तेरे भी पाँच पति होंगे। (द्रोपदी ही आदिमाया का अवतार हुई है।) जब यह आकाश वाणी सुनी तो आदि माया ने कहा कि हे ज्योति निरंजन (काल) मैं तेरे वश पड़ी हूँ जो चाहे सो कर ले।

“विष्णु का अपने पिता (काल/ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आशीर्वाद पाना”

इसके बाद विष्णु से प्रकृति ने कहा कि पुत्र तू भी अपने पिता का पता लगा ले। तब विष्णु अपने पिता जी काल (ब्रह्म) का पता करते-करते पाताल लोक में चले गए, जहाँ शोषनाग था। उसने विष्णु को अपनी सीमा में प्रविष्ट होते देख कर क्रोधित हो कर जहर भरा फुँकारा मारा। उसके विष के प्रभाव से विष्णु जी का रंग सांवला

हो गया, जैसे स्मे पेंट हो जाता है। तब विष्णु ने चाहा कि इस नाग को मजा चखाना चाहिए। तब ज्योति निरंजन (काल) ने देखा कि अब विष्णु को शांत करना चाहिए। तब आकाशवाणी हुई कि विष्णु अब तू अपनी माता जी के पास जा और सत्य-सत्य सारा विवरण बता देना तथा जो कष्ट आपको शेषनाग से हुआ है, इसका प्रतिशोध द्वापर युग में लेना। द्वापर युग में आप (विष्णु) तो कृष्ण अवतार धारण करोगे और कालीदह में कालिन्दी नामक नाग, शेष नाग का अवतार होगा।

ऊँच होई के नीच सतावै, ताकर ओएल (बदला) मोही सों पावै।

जो जीव देई पीर पुनि काँहु, हम पुनि ओएल दिवावै ताहुँ॥

तब विष्णु जी माता जी के पास आए तथा सत्य-सत्य कह दिया कि मुझे पिता के दर्शन नहीं हुए। इस बात से माता (प्रकृति) बहुत प्रसन्न हुई और कहा कि पुत्र तू सत्यवादी है। अब मैं अपनी शक्ति से आपको तेरे पिता से मिलाती हूँ तथा तेरे मन का संशय खत्म करती हूँ।

कबीर, देख पुत्र तोहि पिता भीटाऊँ, तौरे मन का धोखा मिटाऊँ।

मन स्वरूप कर्ता कह जानों, मन ते दूजा और न मानो।

स्वर्ग पाताल दौर मन केरा, मन अस्थीर मन अहै अनेरा।

निरंकार मन ही को कहिए, मन की आस निश दिन रहिए।

देख हूँ पलटि सुन्य मह ज्योति, जहाँ पर झिलमिल झालर होती॥

इस प्रकार माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने विष्णु से कहा कि मन ही जग का कर्ता है, यही ज्योति निरंजन है। ध्यान में जो एक हजार ज्योतियाँ नजर आती हैं वही उसका रूप है। जो शंख, घण्टा आदि का बाजा सुना, यह महास्वर्ग में निरंजन का ही बज रहा है। तब माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने कहा कि हे पुत्र तुम सब देवों के सरताज हो और तेरी हर कामना व कार्य मैं पूर्ण करूंगी। तेरी पूजा सर्व जग में होगी। आपने मुझे सच-सच बताया है। काल के इक्कीस ब्रह्माण्डों के प्राणियों की विशेष आदत है कि अपनी व्यर्थ महिमा बनाता है। जैसे दुर्गा जी श्री विष्णु जी को कह रही है कि तेरी पूजा जग में होगी। मैंने तुझे तेरे पिता के दर्शन करा दिए। दुर्गा ने केवल प्रकाश दिखा कर श्री विष्णु जी को बहका दिया। श्री विष्णु जी भी प्रभु की यही स्थिति अपने अनुयाइयों को समझाने लगे कि परमात्मा का केवल प्रकाश दिखाई देता है। परमात्मा निराकार है। इसके बाद आदि भवानी रुद्र (महेश जी) के पास गई तथा कहा कि महेश तू भी कर ले अपने पिता की खोज तेरे दोनों भाइयों को तो तुम्हारे पिता के दर्शन नहीं हुए उनको जो देना था वह प्रदान कर दिया है अब आप माँगो जो माँगना है। तब महेश ने कहा कि हे जननी! मेरे दोनों बड़े भाइयों को पिता के दर्शन नहीं हुए फिर प्रयत्न करना व्यर्थ है। कृपा मुझे ऐसा वर दो कि मैं अमर (मृत्युंजय) हो जाऊँ। तब माता ने कहा कि यह मैं नहीं कर सकती। हाँ युक्ति बता सकती हूँ, जिससे तेरी आयु सबसे लम्बी बनी रहेगी। विधि योग समाधि है

(इसलिए महादेव जी ज्यादातर समाधि में ही रहते हैं)। इस प्रकार माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने तीनों पुत्रों को विभाग बांट दिए : --

भगवान ब्रह्मा जी को काल लोक में लख चौरासी के चोले (शरीर) रचने (बनाने) का अर्थात् रजोगुण प्रभावित करके संतान उत्पत्ति के लिए विवश करके जीव उत्पत्ति कराने का विभाग प्रदान किया। भगवान विष्णु जी को इन जीवों के पालन पोषण (कर्मानुसार) करने, तथा मोह-ममता उत्पन्न करके स्थिति बनाए रखने का विभाग दिया।

भगवान शिव शंकर (महादेव) को संहार करने का विभाग प्रदान किया क्योंकि इनके पिता निरंजन को एक लाख मानव शरीर धारी जीव प्रतिदिन खाने पड़ते हैं।

यहां पर मन में एक प्रश्न उत्पन्न होगा कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर जी से उत्पत्ति, स्थिति और संहार कैसे होता है। ये तीनों अपने-२ लोक में रहते हैं। जैसे आजकल संचार प्रणाली को चलाने के लिए उपग्रहों को ऊपर आसमान में छोड़ा जाता है और वे नीचे पृथ्वी पर संचार प्रणाली को चलाते हैं। ठीक इसी प्रकार ये तीनों देव जहां भी रहते हैं इनके शरीर से निकलने वाले सूक्ष्म गुण की तरंगें तीनों लोकों में अपने आप हर प्राणी पर प्रभाव बनाए रहती हैं।

उपरोक्त विवरण एक ब्रह्माण्ड में ब्रह्म (काल) की रचना का है। ऐसे-ऐसे क्षर पुरुष (काल) के इक्कीस ब्रह्माण्ड हैं।

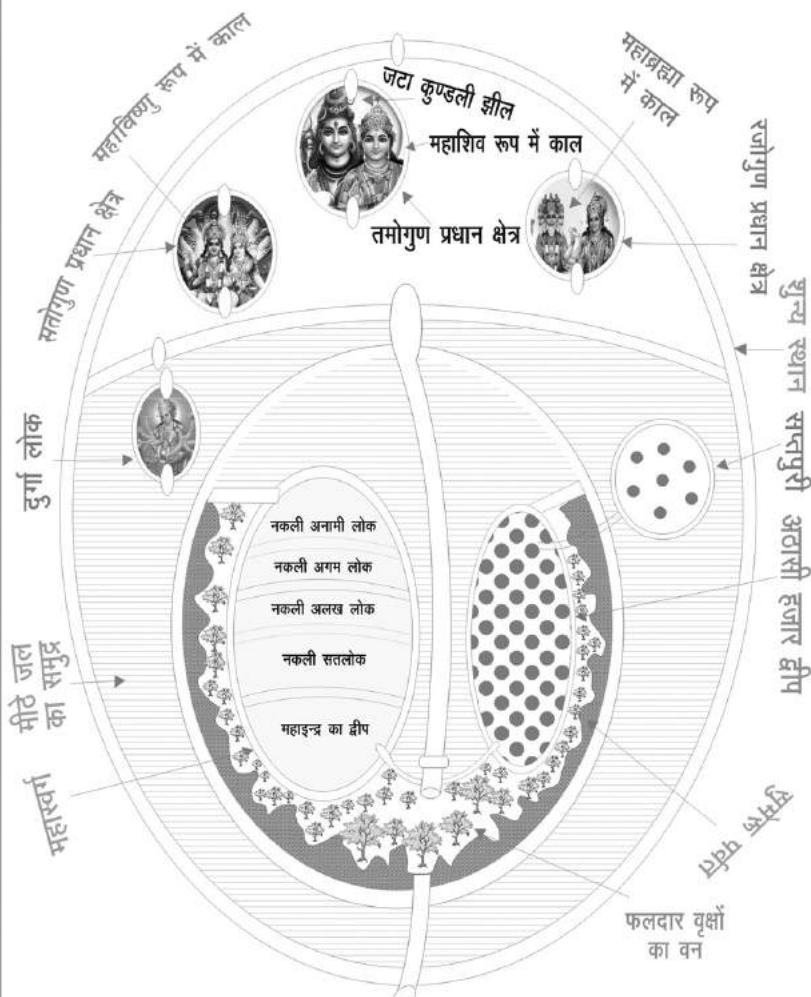
परन्तु क्षर पुरुष (काल) स्वयं व्यक्त अर्थात् वास्तविक शरीर रूप में सबके सामने नहीं आता। उसी को प्राप्त करने के लिए तीनों देवों (ब्रह्मा जी, विष्णु जी, शिव जी) को वेदों में वर्णित विधि अनुसार भरसक साधना करने पर भी ब्रह्म (काल) के दर्शन नहीं हुए। बाद में ऋषियों ने वेदों को पढ़ा। उसमें लिखा है कि 'अग्ने: तनूर असि' (पवित्र यजुर्वेद अ. 1 मंत्र 15) परमेश्वर सशरीर है तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 1 में लिखा है कि 'अग्ने: तनूर असि विष्णवे त्वा सोमरस्य तनूर असि'। इस मंत्र में दो बार वेद गवाही दे रहा है कि सर्वव्यापक, सर्वपालन कर्ता सतपुरुष सशरीर है। पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 8 में कहा है कि (कविर् मनिषी) जिस परमेश्वर की सर्व प्राणियों को चाह है, वह कविर् अर्थात् कबीर है। उसका शरीर बिना नाड़ी (अस्नाविरम) का है, (शुक्रम) वीर्य से बनी पाँच तत्व से बनी भौतिक (अकायम्) काया रहित है। वह सर्व का मालिक सर्वोपरि सत्यलोक में विराजमान है, उस परमेश्वर का तेजपुंज का (स्वर्ज्योति) स्वयं प्रकाशित शरीर है जो शब्द रूप अर्थात् अविनाशी है। वही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) है जो सर्व ब्रह्माण्डों की रचना करने वाला (व्यदधाता) सर्व ब्रह्माण्डों का रचनहार (स्वयम्भूः) स्वयं प्रकट होने वाला (यथा तथ्य अर्थात्) वास्तव में (शाश्वत्) अविनाशी है (गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में भी प्रमाण है।) भावार्थ है कि पूर्ण ब्रह्म का शरीर का नाम कबीर (कविर् देव) है। उस परमेश्वर का शरीर नूर तत्व से बना है। परमात्मा का शरीर अति सूक्ष्म है जो उस साधक को दिखाई देता है जिसकी

दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार जीव का भी सुक्ष्म शरीर है जिसके ऊपर पाँच तत्व का खोल (कवर) अर्थात् पाँच तत्व की काया चढ़ी होती है जो माता-पिता के संयोग से (शुक्रम) वीर्य से बनी है। शरीर त्यागने के पश्चात् भी जीव का सुक्ष्म शरीर साथ रहता है। वह शरीर उसी साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार परमात्मा व जीव की स्थिति को समझें। वेदों में ओ३३ नाम के स्मरण का प्रमाण है जो केवल ब्रह्म साधना है। इस उद्देश्य से ओ३३ नाम के जाप को पूर्ण ब्रह्म का मान कर ऋषियों ने भी हजारों वर्ष हठयोग (समाधि लगा कर) करके प्रभु प्राप्ति की चेष्टा की, परन्तु प्रभु दर्शन नहीं हुए, सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। उन्हीं सिद्धी रूपी खिलौनों से खेल कर ऋषि भी जन्म-मृत्यु के चक्र में ही रह गए तथा अपने अनुभव के शास्त्रों में परमात्मा को निराकार लिख दिया। ब्रह्म (काल) ने कसम खाई है कि मैं अपने वास्तविक रूप में किसी को दर्शन नहीं दूँगा। मुझे अव्यक्त जाना करेंगे (अव्यक्त का भावार्थ है कि कोई आकार में है परन्तु व्यक्तिगत रूप से स्थूल रूप में दर्शन नहीं देता। जैसे आकाश में बादल छा जाने पर दिन के समय सूर्य अदृश हो जाता है। वह दृश्यमान नहीं है, परन्तु वास्तव में बादलों के पार ज्यों का त्यों है, इस अवस्था को अव्यक्त कहते हैं।)। (प्रमाण के लिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25, अध्याय 11 श्लोक 48 तथा 32)

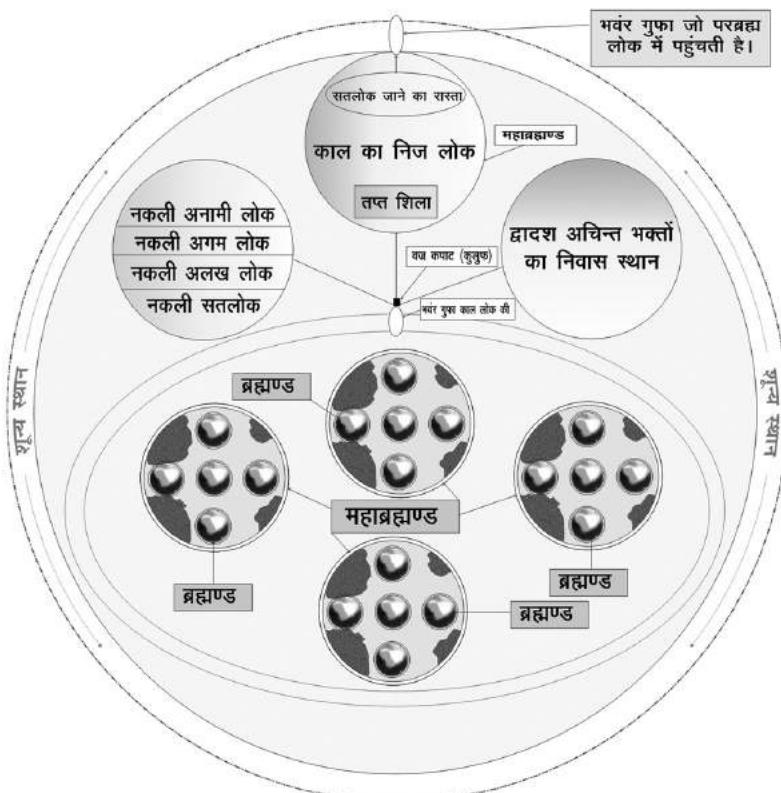
पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके कह रहा है कि अर्जुन मैं बढ़ा हुआ काल हूँ और सर्व को खाने के लिए आया हूँ। (गीता अध्याय 11 का श्लोक नं. 32) यह मेरा वास्तविक रूप है, इसको तेरे अतिरिक्त न तो कोई पहले देख सका तथा न कोई आगे देख सकता है अर्थात् वेदों में वर्णित यज्ञ-जप-तप तथा ओ३३ नाम आदि की विधि से मेरे इस वास्तविक स्वरूप के दर्शन नहीं हो सकते। (गीता अध्याय 11 श्लोक नं 48) मैं कृष्ण नहीं हूँ, ये मूर्ख लोग कृष्ण रूप में मुझ अव्यक्त को व्यक्त (मनुष्य रूप) मान रहे हैं। क्योंकि ये मेरे घटिया नियम से अपरिचित हैं कि मैं कभी वास्तविक इस काल रूप में सबके सामने नहीं आता। अपनी योग माया से छुपा रहता हूँ (गीता अध्याय 7 श्लोक नं. 24-25) विचार करें :- अपने छुपे रहने वाले विधान को स्वयं अश्रेष्ठ (अनुत्तम) क्यों कह रहे हैं?

यदि पिता अपनी सन्तान को भी दर्शन नहीं देता तो उसमें कोई त्रुटि है जिस कारण से छुपा है तथा सुविधाएं भी प्रदान कर रहा है। काल (ब्रह्म) को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करना पड़ता है तथा 25 प्रतिशत प्रतिदिन जो ज्यादा उत्पन्न होते हैं उन्हें ठिकाने लगाने के लिए तथा कर्म भोग का दण्ड देने के लिए चौरासी लाख योनियों की रचना की हुई है। यदि सबके सामने बैठ कर किसी की पुत्री, किसी की पत्नी, किसी के पुत्र, माता-पिता

ब्रह्म लोक का लघु चित्र



ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म के लोक (21 ब्रह्मण्ड) का लघु चित्र



को खा गए तो सर्व को ब्रह्म से घृणा हो जाए तथा जब भी कभी पूर्ण परमात्मा कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) स्वयं आए या अपना कोई संदेशवाहक (दूत) भेंजे तो सर्व प्राणी सत्यभक्ति करके काल के जाल से निकल जाएं। इसलिए धोखा देकर रखता है तथा पवित्र गीता अध्याय 7 श्लोक 18,24,25 में अपनी साधना से होने वाली मुक्ति (गति) को भी (अनुत्तमाम) अति अश्रेष्ठ कहा है तथा अपने विधान (नियम)को भी (अनुत्तम) अश्रेष्ठ कहा है।

प्रत्येक ब्रह्माण्ड में बने ब्रह्मलोक में एक महास्वर्ग बनाया है। महास्वर्ग में एक स्थान पर नकली सतलोक - नकली अलख लोक - नकली अगम लोक तथा नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखा देने के लिए प्रकृति (दुर्गा/आदि माया) द्वारा करवा रखी है। कबीर साहेब का एक शब्द है 'कर नैनों दीदार महल में प्यारा है' में वाणी है कि 'काया भेद किया निरवारा, यह सब रचना पिण्ड मंझारा है। माया अविगत जाल पसारा, सो कारीगर भारा है। आदि माया किन्ही चतुराई, झूठी बाजी पिण्ड दिखाई, अविगत रचना रचि अण्ड माहि वाका प्रतिबिम्ब डारा है।'

एक ब्रह्माण्ड में अन्य लोकों की भी रचना है, जैसे श्री ब्रह्मा जी का लोक, श्री विष्णु जी का लोक, श्री शिव जी का लोक। जहाँ पर बैठकर तीनों प्रभु नीचे के तीन लोकों (स्वर्गलोक अर्थात् इन्द्र का लोक - पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) पर एक - एक विभाग के मालिक बन कर प्रभुता करते हैं तथा अपने पिता काल के खाने के लिए प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्यभार संभालते हैं। तीनों प्रभुओं की भी जन्म व मृत्यु होती है। तब काल इन्हें भी खाता है। इसी ब्रह्माण्ड [इसे अण्ड भी कहते हैं क्योंकि ब्रह्माण्ड की बनावट अण्डाकार है, इसे पिण्ड भी कहते हैं क्योंकि शरीर (पिण्ड) में एक ब्रह्माण्ड की रचना कमलों में टी. वी. की तरह देखी जाती है] में एक मानसरोवर तथा धर्मराय (न्यायधीश) का भी लोक है तथा एक गुप्त स्थान पर पूर्ण परमात्मा अन्य रूप धारण करके रहता है जैसे प्रत्येक देश का राजदूत भवन होता है। वहाँ पर कोई नहीं जा सकता। वहाँ पर वे आत्माएँ रहती हैं जिनकी सत्यलोक की भक्ति अधूरी रहती है। जब भक्ति युग आता है तो उस समय परमेश्वर कबीर जी अपना प्रतिनिधि पूर्ण संत सतगुरु भेजते हैं। इन पुण्यात्माओं को पृथ्वी पर उस समय मानव शरीर प्राप्त होता है तथा ये शीघ्र ही सत भक्ति पर लग जाते हैं तथा सतगुरु से दीक्षा प्राप्त करके पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर जाते हैं। उस स्थान पर रहने वाले हंस आत्माओं की निजी भक्ति कमाई खर्च नहीं होती। परमात्मा के भण्डार से सर्व सुविधाएँ उपलब्ध होती हैं। ब्रह्म (काल) के उपासकों की भक्ति कमाई स्वर्ग-महा स्वर्ग में समाप्त हो जाती है क्योंकि इस काल लोक (ब्रह्म लोक) तथा परब्रह्म लोक में प्राणियों को अपना किया कर्मफल ही मिलता है।

क्षर पुरुष (ब्रह्म) ने अपने 20 ब्रह्माण्डों को चार महाब्रह्माण्डों में विभाजित किया है। एक महाब्रह्माण्ड में पाँच ब्रह्माण्डों का समूह बनाया है तथा चारों ओर से अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है तथा चारों महा ब्रह्माण्डों को भी फिर अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है। इक्कीसवें ब्रह्माण्ड की रचना एक महाब्रह्माण्ड जितना स्थान लेकर की है। इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में प्रवेश होते ही तीन रास्ते बनाए हैं। इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में भी बांई तरफ नकली सतलोक, नकली अलख लोक, नकली अगम लोक, नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखे में रखने के लिए आदि माया (दुर्गा) से करवाई है तथा दांई तरफ बारह सर्व श्रेष्ठ ब्रह्म साधकों (भक्तों) को रखता है। फिर प्रत्येक युग में उन्हें अपने संदेश वाहक (सन्त सत्तगुरु) बनाकर पृथ्वी पर भेजता है, जो शास्त्र विधि रहित साधना व ज्ञान बताते हैं तथा स्वयं भी भक्तिहीन हो जाते हैं तथा अनुयाइयों को भी काल जाल में फंसा जाते हैं। फिर वे गुरु जी तथा अनुयाई दोनों ही नरक में जाते हैं। फिर सामने एक ताला (कुलुफ) लगा रखा है। वह रास्ता काल (ब्रह्म) के निज लोक में जाता है। जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) अपने वास्तविक मानव सदृश काल रूप में रहता है। इसी स्थान पर एक पत्थर की टुकड़ी तवे के आकार की (चपाती पकाने की लोहे की गोल प्लेट सी होती है) स्वतः गर्म रहती है। जिस पर एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर को भूनकर उनमें से गंदगी निकाल कर खाता है। उस समय सर्व प्राणी बहुत पीड़ा अनुभव करते हैं तथा हाहाकार मच जाती है। फिर कुछ समय उपरान्त वे बेहोश हो जाते हैं। जीव मरता नहीं। फिर धर्मराय के लोक में जाकर कर्माधार से अन्य जन्म प्राप्त करते हैं तथा जन्म-मृत्यु का चक्कर बना रहता है। उपरोक्त सामने लगा ताला ब्रह्म (काल) केवल अपने आहार वाले प्राणियों के लिए कुछ क्षण के लिए खोलता है। पूर्ण परमात्मा के सत्यनाम व सारनाम से यह ताला स्वयं खुल जाता है। ऐसे काल का जाल पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर साहेब) ने स्वयं ही अपने निजी भक्त धर्मदास जी को समझाया।

“परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों की स्थापना”

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने आगे बताया है कि परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने अपने कार्य में गफलत की क्योंकि यह मानसरोवर में सो गया तथा जब परमेश्वर (मैंने अर्थात् कबीर साहेब ने) उस सरोवर में अण्डा छोड़ा तो अक्षर पुरुष (परब्रह्म) ने उसे क्रोध से देखा। इन दोनों अपराधों के कारण इसे भी सात संख ब्रह्माण्डों सहित सतलोक से बाहर कर दिया। दूसरा कारण अक्षर पुरुष (परब्रह्म) अपने साथी ब्रह्म (क्षर पुरुष) की विदाई में व्याकुल होकर परमपिता कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की याद भूलकर उसी को याद करने लगा तथा सोचा कि क्षर

पुरुष (ब्रह्म) तो बहुत आनन्द मना रहा होगा, मैं पीछे रह गया तथा अन्य कुछ आत्माएँ जो परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्माण्डों में जन्म-मृत्यु का कर्मदण्ड भोग रही हैं, उन हंस आत्माओं की विदाई की याद में खो गई जो ब्रह्म (काल) के साथ इककीस ब्रह्माण्डों में फंसी हैं तथा पूर्ण परमात्मा, सुखदाई कविदेव की याद भुला दी। परमेश्वर कविर् देव के बार-बार समझाने पर भी आस्था कम नहीं हुई। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने सोचा कि मैं भी अलग स्थान प्राप्त करूं तो अच्छा रहे। यह सोच कर राज्य प्राप्ति की इच्छा से सारनाम का जाप प्रारम्भ कर दिया। इसी प्रकार अन्य आत्माओं ने (जो परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों में फंसी हैं) सोचा कि वे जो ब्रह्म के साथ आत्माएँ गई हैं वे तो वहाँ मौज-मस्ती मनाएंगे, हम पीछे रह गये। परब्रह्म के मन में यह धारणा बनी कि क्षर पुरुष अलग होकर बहुत सुखी होगा। यह विचार कर अन्तरात्मा से भिन्न स्थान प्राप्ति की ठान ली। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने हठ योग नहीं किया, परन्तु केवल अलग राज्य प्राप्ति के लिए सहज ध्यान योग विशेष कसक के साथ करता रहा। अलग स्थान प्राप्त करने के लिए पागलों की तरह विचरने लगा, खाना-पीना भी त्याग दिया। अन्य कुछ आत्माएँ उसके वैराग्य पर आसक्त होकर उसे चाहने लगी। पूर्ण प्रभु के पूछने पर परब्रह्म ने अलग स्थान माँगा तथा कुछ हंसात्माओं के लिए भी याचना की। तब कविदेव ने कहा कि जो आत्मा आपके साथ स्वेच्छा से जाना चाहें उन्हें भेज देता हूँ। पूर्ण प्रभु ने पूछा कि कौन हंस आत्मा परब्रह्म के साथ जाना चाहता है, सहमति व्यक्त करे। बहुत समय उपरान्त एक हंस ने स्वीकृति दी, फिर देखा-देखी उन सर्व आत्माओं ने भी सहमति व्यक्त कर दी। सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को स्त्री रूप बनाया, उसका नाम ईश्वरी माया (प्रकृति सुरति) रखा तथा अन्य आत्माओं को उस ईश्वरी माया में प्रवेश करके अचिन्त द्वारा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) के पास भेजा। (पतिव्रता पद से गिरने की सजा पाई।) कई युगों तक दोनों सात संख ब्रह्माण्डों में रहे, परन्तु परब्रह्म ने दुर्घटवहार नहीं किया। ईश्वरी माया की स्वेच्छा से अंगीकार किया तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (योनि) बनाई। ईश्वरी देवी की सहमति से संतान उत्पन्न की। इस लिए परब्रह्म के लोक (सात संख ब्रह्माण्डों) में प्राणियों को तप्तशिला का कष्ट नहीं है तथा वहाँ पशु-पक्षी भी ब्रह्म लोक के देवों से अच्छे चरित्र युक्त हैं। आयु भी बहुत लम्बी है, परन्तु जन्म - मृत्यु कर्मधार पर कर्मदण्ड तथा परिश्रम करके ही उदर पूर्ति होती है। स्वर्ग तथा नरक भी ऐसे ही बने हैं। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) को सात संख ब्रह्माण्ड उसके इच्छा रूपी भक्ति ध्यान अर्थात् सहज समाधि विधि से की उस की कमाई के प्रतिफल में प्रदान किये तथा सत्यलोक से भिन्न स्थान पर गोलाकार परिधि में बन्द करके सात संख ब्रह्माण्डों सहित अक्षर ब्रह्म व ईश्वरी माया को निष्कासित कर दिया।

पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) असंख्य ब्रह्माण्डों जो सत्यलोक आदि में हैं तथा ब्रह्म के इककीस ब्रह्माण्डों तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों का भी प्रभु (मालिक) है अर्थात् परमेश्वर कविर्देव कुल का मालिक है।

श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी आदि के चार-चार भुजाएं तथा 16 कलाएं हैं तथा प्रकृति देवी (दुर्गा) की आठ भुजाएं हैं तथा 64 कलाएं हैं। ब्रह्म (क्षर पुरुष) की एक हजार भुजाएं हैं तथा एक हजार कलाएं हैं तथा इककीस ब्रह्माण्डों का प्रभु है। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) की दस हजार भुजाएं हैं तथा दस हजार कला हैं तथा सात संख ब्रह्माण्डों का प्रभु है। पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष अर्थात् सतपुरुष) की असंख्य भुजाएं तथा असंख्य कलाएं हैं तथा ब्रह्म के इककीस ब्रह्माण्ड व परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों सहित असंख्य ब्रह्माण्डों का प्रभु है। प्रत्येक प्रभु अपनी सर्व भुजाओं को समेट कर केवल दो भुजाएं भी रख सकते हैं तथा जब चाहें सर्व भुजाओं को भी प्रकट कर सकते हैं। पूर्ण परमात्मा परब्रह्म के प्रत्येक ब्रह्माण्ड में भी अलग स्थान बनाकर अन्य रूप में गुप्त रहता है। यूं समझो जैसे एक धूमने वाला कैमरा बाहर लगा देते हैं तथा अन्दर टी.वी. (टेलीविजन) रख देते हैं। टी.वी. पर बाहर का सर्व दृश्य नजर आता है तथा दूसरा टी.वी. बाहर रख कर अन्दर का कैमरा स्थाई करके रख दिया जाए, उसमें केवल अन्दर बैठे प्रबन्धक का चित्र दिखाई देता है। जिससे सर्व कर्मचारी सावधान रहते हैं।

इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा अपने सतलोक में बैठ कर सर्व को नियंत्रित किए हुए हैं तथा प्रत्येक ब्रह्माण्ड में भी सतगुरु कविर्देव विद्यमान रहते हैं जैसे सूर्य दूर होते हुए भी अपना प्रभाव अन्य लोकों में बनाए हुए हैं।

“पवित्र अर्थवर्वेद में सृष्टि रचना का प्रमाण”

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 1 :-

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्त्ताद् वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।

स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः॥ १ ॥

ब्रह्म—ज—ज्ञानम्—प्रथमम्—पुरस्त्तात्—विसिमतः—सुरुचः—वेनः—आवः—सः—बुध्न्याः—उपमा—अस्य—विष्ठाः—सतः—च—योनिम्—असतः—च—वि वः

अनुवाद :— (प्रथमम्) प्राचीन अर्थात् सनातन (ब्रह्म) परमात्मा ने (ज) प्रकट होकर (ज्ञानम्) अपनी सूझ—बूझ से (पुरस्त्तात्) शिखर में अर्थात् सतलोक आदि को (सुरुचः) स्वईच्छा से बड़े चाव से स्वप्रकाशित (विसिमतः) सीमा रहित अर्थात् विशाल सीमा वाले भिन्न लोकों को उस (वेनः) जुलाहे ने ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर (आवः) सुरक्षित किया (च) तथा (सः) वह पूर्ण ब्रह्म ही सर्व रचना करता है (अस्य) इसलिए उसी (बुध्न्याः) मूल मालिक ने (योनिम्) मूलस्थान सत्यलोक की रचना की है (अस्य) इस के (उपमा) सदृश अर्थात् मिलते जुलते (सतः) अक्षर पुरुष अर्थात्

परब्रह्म के लोक कुछ स्थाई (च) तथा (असतः) क्षर पुरुष के अस्थाई लोक आदि (वि वः) आवास स्थान भिन्न (विष्ठाः) स्थापित किए।

भावार्थ :- पवित्र वेदों को बोलने वाला ब्रह्म (काल) कह रहा है कि सनातन परमेश्वर ने स्वयं अनामय (अनामी) लोक से सत्यलोक में प्रकट होकर अपनी सूझ-बूझ से कपड़े की तरह रचना करके ऊपर के सतलोक आदि को सीमा रहित स्वप्रकाशित अजर - अमर अर्थात् अविनाशी ठहराए तथा नीचे के परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्माण्ड व इनमें छोटी-से छोटी रचना भी उसी परमात्मा ने अस्थाई की है।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 2 :-

इयं पित्र्या राष्ट्र्येत्वग्रे प्रथमाय जनुषे भुवनेष्ठाः ।

तस्मा एतं सुरुचं ह्वारमह्यं धर्मं श्रीणन्तु प्रथमाय धास्यवे ॥१२॥

इयम्—पित्र्या—राष्ट्रि—एतु—अग्रे—प्रथमाय—जनुषे—भुवनेष्ठाः—तस्मा—एतम्—सुरुचम्—हवारमह्यम्—धर्मम्—श्रीणन्तु—प्रथमाय—धास्यवे

अनुवाद :- (इयम्) इसी (पित्र्या) जगतपिता परमेश्वर ने (एतु) इस (अग्रे) सर्वोत्तम् (प्रथमाय) सर्व से पहली माया परानन्दनी (राष्ट्रि) राजेश्वरी शक्ति अर्थात् पराशक्ति जिसे आकर्षण शक्ति भी कहते हैं, को (जनुषे) उत्पन्न करके (भुवनेष्ठाः) लोक स्थापना की (तस्मा) उसी परमेश्वर ने (सुरुचम्) बड़े चाव के साथ स्वेच्छा से (एतम्) इस (प्रथमाय) प्रथम उत्पत्ति की शक्ति अर्थात् पराशक्ति के द्वारा (ह्वारमह्यम्) एक दूसरे के वियोग को रोकने अर्थात् आकर्षण शक्ति के (श्रीणन्तु) गुरुत्व आकर्षण को परमात्मा ने आदेश दिया सदा रहो उस कभी समाप्त न होने वाले (धर्मम्) स्वभाव से (धास्यवे) धारण करके ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर रोके हुए है।

भावार्थ :- जगतपिता परमेश्वर ने अपनी शब्द शक्ति से राष्ट्री अर्थात् सबसे पहली माया राजेश्वरी उत्पन्न की तथा उसी पराशक्ति के द्वारा एक-दूसरे को आकर्षण शक्ति से रोकने वाले कभी न समाप्त होने वाले गुण से उपरोक्त सर्व ब्रह्माण्डों को स्थापित किया है।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 3 :-

प्र यो जज्ञे विद्वानस्य बन्धुर्विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति ।

ब्रह्म ब्रह्मण उज्जभार मध्यान्नीचैरुच्यैः स्वधा अभि प्र तस्थौ ॥१३॥

प्र—यः—जज्ञे—विद्वानस्य—बन्धुः—विश्वा—देवानाम्—जनिमा—विवक्ति—ब्रह्मः—ब्रह्मणः—उज्जभार—मध्यात्—निचैः—उच्यैः—स्वधा—आभिः—प्रतस्थौ

अनुवाद :- (प्र) सर्व प्रथम (देवानाम्) देवताओं व ब्रह्माण्डों की (जज्ञे) उत्पति के ज्ञान को (विद्वानस्य) जिज्ञासु भक्त का (यः) जो (बन्धुः) वास्तविक साथी अर्थात् पूर्ण परमात्मा ही अपने निज सेवक को (जनिमा) अपने द्वारा सृजन किए हुए को (विवक्ति) स्वयं ही ठीक—ठीक विस्तार पूर्वक बताता है कि (ब्रह्मणः) पूर्ण परमात्मा ने

(मध्यात्) अपने मध्य से अर्थात् शब्द शक्ति से (ब्रह्मः) ब्रह्म-क्षर पुरुष अर्थात् काल को (उज्जभार) उत्पन्न करके (विश्वा) सारे संसार को अर्थात् सर्व लोकों को (उच्चैः) ऊपर सत्यलोक आदि (निचैः) नीचे परब्रह्म व ब्रह्म के सर्व ब्रह्माण्ड (स्वधा) अपनी धारण करने वाली (अभिः) आकर्षण शक्ति से (प्रतस्थौ) दोनों को अच्छी प्रकार स्थित किया ।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान तथा सर्व आत्माओं की उत्पत्ति का ज्ञान अपने निजी दास को स्वयं ही सही बताता है कि पूर्ण परमात्मा ने अपने मध्य अर्थात् अपने शरीर से अपनी शब्द शक्ति के द्वारा ब्रह्म (क्षर पुरुष/काल) की उत्पत्ति की तथा सर्व ब्रह्माण्डों को ऊपर सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक आदि तथा नीचे परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्माण्डों को अपनी धारण करने वाली आकर्षण शक्ति से ठहराया हुआ है ।

जैसे पूर्ण परमात्मा कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने अपने निजी सेवक अर्थात् सखा श्री धर्मदास जी, आदरणीय गरीबदास जी आदि को अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया । उपरोक्त वेद मंत्र भी यही समर्थन कर रहा है ।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 4

सः हि दिवः सः पृथिव्या ऋतस्था मही क्षेमं रोदसी अस्कभायत् ।

महान् मही अस्कभायद् वि जातो द्यां सद्य पार्थिवं च रजः ॥ १४ ॥

—हि—दिवः—स—पृथिव्या—ऋतस्था—मही—क्षेमम्—रोदसी—अकरभायत्—

महान् —मही—अस्कभायद्—विजातः—धाम्—सदम्—पार्थिवम्—च—रजः

अनुवाद — (सः) उसी सर्वशक्तिमान परमात्मा ने (हि) निःसंदेह (दिवः) ऊपर के चारों दिव्य लोक जैसे सत्य लोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी अर्थात् अकह लोक अर्थात् दिव्य गुणों युक्त लोकों को (ऋतस्था) सत्य स्थिर अर्थात् अजर—अमर रूप से स्थिर किए (स) उन्हीं के समान (पृथिव्या) नीचे के पृथ्वी वाले सर्व लोकों जैसे परब्रह्म के सात संख तथा ब्रह्म/काल के इकीस ब्रह्माण्ड (मही) पृथ्वी तत्त्व से (क्षेमम्) सुरक्षा के साथ (अस्कभायत) ठहराया (रोदसी) आकाश तत्त्व तथा पृथ्वी तत्त्व दोनों से ऊपर नीचे के ब्रह्माण्डों को जैसे आकाश एक सुक्ष्म तत्त्व है, आकाश का गुण शब्द है, पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के लोक शब्द रूप रचे जो तेजपुंज के बनाए हैं तथा नीचे के परब्रह्म (अक्षर पुरुष) के सप्त संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म/क्षर पुरुष के इकीस ब्रह्माण्डों को पृथ्वी तत्त्व से अस्थाई रचा} (महान) पूर्ण परमात्मा ने (पार्थिवम्) पृथ्वी वाले (वि) भिन्न—भिन्न (धाम) लोक (च) और (सदम्) आवास स्थान (मही) पृथ्वी तत्त्व से (रजः) प्रत्येक ब्रह्माण्ड में छोटे—छोटे लोकों की (जातः) रचना करके (अस्कभायत) स्थिर किया ।

भावार्थ :- ऊपर के चारों लोक सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी

लोक, यह तो अजर-अमर रथाई अर्थात् अविनाशी रचे हैं तथा नीचे के ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोकों को अरथाई रचना करके तथा अन्य छोटे-छोटे लोक भी उसी परमेश्वर ने रच कर स्थिर किए।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 5

सः बुध्न्यादाष्ट् जनुषोऽयग्रं बृहस्पतिर्देवता तस्य सप्नाट् ।

अहयंच्छुकं ज्योतिषो जनिष्टाथ द्युमन्तो वि वसन्तु विप्राः ॥५॥

सः—बुध्न्यात्—आष्ट्—जनुषे:—अभि—अग्रम्—बृहस्पतिः—देवता—तस्य—सप्नाट—अहः—यत्—शुक्रम्—ज्योतिषः—जनिष्ट—अथ—द्युमन्तः—वि—वसन्तु—विप्राः

अनुवाद :- (सः) उसी (बुध्न्यात्) मूल मालिक से (अभि—अग्रम्) सर्व प्रथम रथान पर (आष्ट्) अष्टांगी माया—दुर्गा अर्थात् प्रकृति देवी (जनुषे:) उत्पन्न हुई क्योंकि नीचे के परब्रह्म व ब्रह्म के लोकों का प्रथम रथान सत्यलोक है यह तीसरा धाम भी कहलाता है (तस्य) इस दुर्गा का भी मालिक यही (सप्नाट) राजाधिराज (बृहस्पतिः) सबसे बड़ा पति व जगतगुरु (देवता) परमेश्वर है। (यत्) जिस से (अहः) सबका वियोग हुआ (अथ) इसके बाद (ज्योतिषः) ज्योति रूप निरंजन अर्थात् काल के (शुक्रम्) वीर्य अर्थात् बीज शक्ति से (जनिष्ट) दुर्गा के उदर से उत्पन्न होकर (विप्राः) भक्त आत्माएँ (वि) अलग से (द्युमन्तः) मनुष्य लोक तथा स्वर्ग लोक में ज्योति निरंजन के आदेश से दुर्गा ने कहा (वसन्तु) निवास करो, अर्थात् वे निवास करने लगी।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के चारों लोकों में से जो नीचे से सबसे प्रथम अर्थात् सत्यलोक में आष्टा अर्थात् अष्टांगी (प्रकृति देवी/दुर्गा) की उत्पत्ति की। यही राजाधिराज, जगतगुरु, पूर्ण परमेश्वर (सत्पुरुष) है जिससे सबका वियोग हुआ है। फिर सर्व प्राणी ज्योति निरंजन (काल) के (वीर्य) बीज से दुर्गा (आष्टा) के गर्भ द्वारा उत्पन्न होकर स्वर्ग लोक व पृथ्वी लोक पर निवास करने लगे।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 6

नूनं तदस्य काव्यो हिनोति महो देवस्य पूर्वस्य धाम ।

एष जज्ञे बहुभिः साकमित्था पूर्वे अर्धे विषिते ससन् नु ॥६॥

नूनम्—तत्—अस्य—काव्यः—महः—देवस्य—पूर्वस्य—धाम—हिनोति—पूर्वे—विषिते—एष— जज्ञे—बहुभिः—साकम्—इत्था—अर्धे—ससन्—नु ।

अनुवाद — (नूनम्) निसंदेह (तत्) वह पूर्ण परमेश्वर अर्थात् तत् ब्रह्म ही (अस्य) इस (काव्यः) भक्त आत्मा जो पूर्ण परमेश्वर की भक्ति विधिवत् करता है को वापिस (महः) सर्वशक्तिमान् (देवस्य) परमेश्वर के (पूर्वस्य) पहले के (धाम) लोक में अर्थात् सत्यलोक में (हिनोति) भेजता है।

(पूर्वे) पहले वाले (विषिते) विशेष चाहे हुए (एष) इस परमेश्वर को व (जज्ञे) सृष्टि उत्पत्ति के ज्ञान को जान कर (बहुभिः) बहुत आनन्द (साकम्) के साथ (अर्धे) आधा (ससन्) सोता हुआ (इत्था) विधिवत् इस प्रकार (नु) सच्ची आत्मा से स्तुति



गीता अध्याय नं. 15

श्लोक नं. 1 से 4 तथा

श्लोक नं. 16 व 17

का आशय

तना →

अक्षर
पुरुष
(परब्रह्म)

कबीर - अक्षर पुरुष एक पेड़ है,
निरंजन बाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं,
पात रूप संसार ॥

डार →

ब्रह्म (अक्षर पुरुष)

महेश

विष्णु

ब्रह्मा

शाखा

पात रूप
संसार

ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ
संसार रूपी वृक्ष का चित्र

करता है।

भावार्थ :- वही पूर्ण परमेश्वर सत्य साधना करने वाले साधक को उसी पहले वाले स्थान (सत्यलोक) में ले जाता है, जहाँ से बिछुड़ कर आए थे। वहाँ उस वास्तविक सुखदाई प्रभु को प्राप्त करके खुशी से आत्म विभोर होकर मरती से स्तुति करता है कि हे परमात्मा असंख्य जन्मों के भूले-भटकों को वास्तविक ठिकाना मिल गया। इसी का प्रमाण पवित्र ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16 में भी है।

आदरणीय गरीबदास जी को इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) स्वयं सत्यभक्ति प्रदान करके सत्यलोक लेकर गए थे, तब अपनी अमृतवाणी में आदरणीय गरीबदास जी महाराज ने आँखों देखकर कहा:-

गरीब, अजब नगर में ले गए, हमकुँ सतगुरु आन।

झिलके बिम्ब अगाध गति, सुते चादर तान ॥

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 7

योऽथर्वाणं पित्तरं देवबन्धुं बृहस्पतिं नमसाव च गच्छात् ।

त्वं विश्वेषां जनिता यथासः कविर्देवो न दभायत् स्वधावान् ॥७॥

यः—अथर्वाणम्—पित्तरम्—देवबन्धुम्—बृहस्पतिम्—नमसा—अव—च—गच्छात्—त्वम्— विश्वेषाम्—जनिता—यथा—सः—कविर्देवः—न—दभायत्—स्वधावान्

अनुवाद :- (य:) जो (अथर्वाणम) अचल अर्थात् अविनाशी (पित्तरम) जगत पिता (देव बन्धुम) भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार (बृहस्पतिम) जगतगुरु (च) तथा (नमसा) विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को (अव) सुरक्षा के साथ (गच्छात) सतलोक गए हुओं को सतलोक ले जाने वाला (विश्वेषाम) सर्व ब्रह्माण्डों की (जनिता) रचना करने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त (न दभायत) काल की तरह धोखा न देने वाले (स्वधावान) स्वभाव अर्थात् गुणों वाला (यथा) ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही (सः) वह (त्वम्) आप (कविर्देवः/ कविर्देवः) कविर्देव है अर्थात् भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं।

भावार्थ :- इस मंत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया कि उस परमेश्वर का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है, जिसने सर्व रचना की है।

जो परमेश्वर अचल अर्थात् वास्तव में अविनाशी (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी प्रमाण है) जगत् गुरु, आत्माधार, जो पूर्ण मुक्त होकर सत्यलोक गए हैं उनको सतलोक ले जाने वाला, सर्व ब्रह्माण्डों का रचनहार, काल (ब्रह्म) की तरह धोखा न देने वाला ज्यों का त्यों वह स्वयं कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है। यही परमेश्वर सर्व ब्रह्माण्डों व प्राणियों को अपनी शब्द शक्ति से उत्पन्न करने के कारण (जनिता) माता भी कहलाता है तथा (पित्तरम) पिता तथा (बन्धु) भाई वास्तव में यही है तथा (देव) परमेश्वर भी यही है। इसलिए इसी कविर्देव (कबीर

परमेश्वर) की स्तुति किया करते हैं। त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या च द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम् देव देव। इसी परमेश्वर की महिमा का पवित्र ऋग्वेद मण्डल नं. 1 सूक्त नं. 24 में विस्तृत विवरण है।

“पवित्र ऋग्वेद में सृष्टि रचना का प्रमाण”

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 1

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।

स भूमिं विश्वतो वृत्त्वात्यतिष्ठदशाङ्गुलम् ॥ १ ॥

सहस्रशीर्षा—पुरुषः—सहस्राक्षः—सहस्रपात्

स—भूमिम्—विश्वतः—वृत्त्वा—अत्यातिष्ठत् —दशंगुलम् ।

अनुवाद :- (पुरुषः) विराट रूप काल भगवान अर्थात् क्षर पुरुष (सहस्रशीर्षा) हजार सिरों वाला (सहस्राक्षः) हजार आँखों वाला (सहस्रपात्) हजार पैरों वाला है (स) वह काल (भूमिम्) पृथ्वी वाले इक्कीस ब्रह्माण्डों को (विश्वतः) सब ओर से (दशंगुलम्) दसों अंगुलियों से अर्थात् पूर्ण रूप से काबू किए हुए (वृत्त्वा) गोलाकार घेरे में घेर कर (अत्यातिष्ठत्) इस से बढ़कर अर्थात् अपने काल लोक में सबसे न्यारा भी इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में ठहरा है अर्थात् रहता है।

भावार्थ :- इस मंत्र में विराट (काल/ब्रह्म) का वर्णन है। (गीता अध्याय 10-11 में भी इसी काल/ब्रह्म का ऐसा ही वर्णन है अध्याय 11 मंत्र नं. 46 में अर्जुन ने कहा है कि हे सहस्राबाहु अर्थात् हजार भुजा वाले आप अपने चतुर्भुज रूप में दर्शन दीजिए)

जिसके हजारों हाथ, पैर, हजारों आँखे, कान आदि हैं वह विराट रूप काल प्रभु अपने आधीन सर्व प्राणियों को पूर्ण काबू करके अर्थात् 20 ब्रह्माण्डों को गोलाकार परिधि में रोककर स्वयं इनसे ऊपर (अलग) इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में बैठा है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 2

पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।

उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ २ ॥

पुरुष—एव—इदम्—सर्वम्—यत्—भूतम्—यत्—च—भाव्यम्

उत—अमृतत्वस्य— इशानः—यत्—अन्नेन—अतिरोहति

अनुवाद :- (एव) इसी प्रकार कुछ सही तौर पर (पुरुष) भगवान है वह अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म है (च) और (इदम्) यह (यत्) जो (भूतम्) उत्पन्न हुआ है (यत्) जो (भाव्यम्) भविष्य में होगा (सर्वम्) सब (यत्) प्रयत्न से अर्थात् मेहनत द्वारा (अन्नेन) अन्न से (अतिरोहति) विकसित होता है। यह अक्षर पुरुष भी (उत) सन्देह युक्त (अमृतत्वस्य) मोक्ष का (इशानः) स्वामी है अर्थात् भगवान तो अक्षर पुरुष भी कुछ सही

है परन्तु पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है।

भावार्थ :- इस मंत्र में परब्रह्म (अक्षर पुरुष) का विवरण है जो कुछ भगवान वाले लक्षणों से युक्त है, परन्तु इसकी भवित्व से भी पूर्ण मोक्ष नहीं है, इसलिए इसे संदेहयुक्त मुक्ति दाता कहा है। इसे कुछ प्रभु के गुणों युक्त इसलिए कहा है कि यह काल की तरह तप्तशिला पर भून कर नहीं खाता। परन्तु इस परब्रह्म के लोक में भी प्राणियों को परिश्रम करके कर्माधार पर ही फल प्राप्त होता है तथा अन्न से ही सर्व प्राणियों के शरीर विकसित होते हैं, जन्म तथा मृत्यु का समय भले ही काल (क्षर पुरुष) से अधिक है, परन्तु फिर भी उत्पत्ति प्रलय तथा चौरासी लाख योनियों में यातना बनी रहती है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 3

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पुरुषः ।

पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ३ ॥

तावान्—अस्य—महिमा—अतः—ज्यायान्—च—पुरुषः

पादः—अस्य—विश्वा— भूतानि—त्रि—पाद्—अस्य—अमृतम्—दिवि

अनुवाद :- (अस्य) इस अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म की तो (एतावान्) इतनी ही (महिमा) प्रभुता है। (च) तथा (पुरुषः) वह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर तो (अतः) इससे भी (ज्यायान्) बड़ा है (विश्वा) समस्त (भूतानि) क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष तथा इनके लोकों में तथा सत्यलोक तथा इन लोकों में जितने भी प्राणी हैं (अस्य) इस पूर्ण परमात्मा परम अक्षर पुरुष का (पादः) एक पैर है अर्थात् एक अंश मात्र है। (अस्य) इस परमेश्वर के (त्रि) तीन (दिवि) दिव्य लोक जैसे सत्यलोक—अलख लोक—अगम लोक (अमृतम्) अविनाशी (पाद) दूसरा पैर है अर्थात् जो भी सर्व ब्रह्माण्डों में उत्पन्न है वह सत्यपुरुष पूर्ण परमात्मा का ही अंश या अंग है।

भावार्थ :- इस ऊपर के मंत्र 2 में वर्णित अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की तो इतनी ही महिमा है तथा वह पूर्ण पुरुष कविर्देव तो इससे भी बड़ा है अर्थात् सर्वशक्तिमान है तथा सर्व ब्रह्माण्ड उसी के अंश मात्र पर ठहरे हैं। इस मंत्र में तीन लोकों का वर्णन इसलिए है क्योंकि चौथा अनामी (अनामय) लोक अन्य रचना से पहले का है। यही तीन प्रभुओं (क्षर पुरुष-अक्षर पुरुष तथा इन दोनों से अन्य परम अक्षर पुरुष) का विवरण श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक संख्या 16-17 में है {इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास साहेब जी कहते हैं कि :- गरीब, जाके अर्ध रुम पर सकल पसारा, ऐसा पूर्ण ब्रह्म हमारा ॥।

गरीब, अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड का, एक रति नहीं भार ।

सतगुरु पुरुष कबीर हैं, कुल के सृजनहार ॥।

इसी का प्रमाण आदरणीय दादू साहेब जी कह रहे हैं कि :-

जिन मोकुं निज नाम दिया, सोई सतगुरु हमार ।

दादू दूसरा कोए नहीं, कबीर सृजनहार ॥

इसी का प्रमाण आदरणीय नानक साहेब जी देते हैं कि :-

यक अर्ज गुफतम पेश तो दर कून करतार । हकका कबीर करीम तू बेएव परवरदिगार ॥

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब, पृष्ठ नं. 721, महला 1, राग तिलंग)

कून करतार का अर्थ होता है सर्व का रचनहार, अर्थात् शब्द शक्ति से रचना करने वाला शब्द स्वरूपी प्रभु, हकका कबीर का अर्थ है सत् कबीर, करीम का अर्थ दयालु, परवरदिगार का अर्थ परमात्मा है ।}

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 4

त्रिपादौर्ध्वं उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्युनः ।

ततो विष्व ड्व्यक्रामत्साशनानशने अभि ॥ 4 ॥

त्रि—पाद—ऊर्ध्वः—उदैत्—पुरुषः—पादः—अस्य—इह—अभवत्—पूनः

ततः—विश्वङ्—व्यक्रामत्—सः—अशनानशने—अभि

अनुवाद :- (पुरुषः) यह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् अविनाशी परमात्मा (ऊर्ध्वः) ऊपर (त्रि) तीन लोक जैसे सत्यलोक—अलख लोक—अगम लोक रूप (पाद) पैर अर्थात् ऊपर के हिस्से में (उदैत्) प्रकट होता है अर्थात् विराजमान है (अस्य) इसी परमेश्वर पूर्ण ब्रह्म का (पादः) एक पैर अर्थात् एक हिस्सा जगत रूप (पुनर्) फिर (इह) यहाँ (अभवत्) प्रकट होता है (ततः) इसलिए (सः) वह अविनाशी पूर्ण परमात्मा (अशनानशने) खाने वाले काल अर्थात् क्षर पुरुष व न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष के भी (अभि) ऊपर (विश्वङ्) सर्वत्र (व्यक्रामत्) व्याप्त है अर्थात् उसकी प्रभुता सर्व ब्रह्माण्डों व सर्व प्रभुओं पर है वह कुल का मालिक है । जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है ।

भावार्थ :- यही सर्व सृष्टि रचन हार प्रभु अपनी रचना के ऊपर के हिस्से में तीनों स्थानों (सत्यलोक, अलखलोक, अगमलोक) में तीन रूप में स्वयं प्रकट होता है अर्थात् स्वयं ही विराजमान है । यहाँ अनामी लोक का वर्णन इसलिए नहीं किया क्योंकि अनामी लोक में कोई रचना नहीं है तथा अकह (अनामय) लोक शेष रचना से पूर्व का है फिर कहा है कि उसी परमात्मा के सत्यलोक से बिछुड़ कर नीचे के ब्रह्म व परब्रह्म के लोक उत्पन्न होते हैं और वह पूर्ण परमात्मा खाने वाले ब्रह्म अर्थात् काल से (क्योंकि ब्रह्म/काल विराट शाप वश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को खाता है) तथा न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष से (परब्रह्म प्राणियों को खाता नहीं, परन्तु जन्म-मृत्यु, कर्मदण्ड ज्यों का त्यों बना रहता है) भी ऊपर सर्वत्र व्याप्त है अर्थात् इस पूर्ण परमात्मा की प्रभुता सर्व के ऊपर है, कबीर परमेश्वर ही कुल का मालिक है । जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है जैसे सूर्य अपने प्रकाश को सर्व के ऊपर फैला कर प्रभावित करता है, ऐसे पूर्ण परमात्मा ने अपनी शक्ति रूपी रेंज (क्षमता) को सर्व ब्रह्माण्डों को नियन्त्रित रखने के लिए छोड़ा हुआ है जैसे मोबाईल फोन का टावर एक देशिय

होते हुए अपनी शक्ति अर्थात् मोबाइल फोन की रेंज (क्षमता) चहुं ओर फैलाए रहता है। इसी प्रकार पूर्ण प्रभु ने अपनी निराकार शक्ति सर्व व्यापक की है जिससे पूर्ण परमात्मा सर्व ब्रह्माण्डों को एक स्थान पर बैठ कर नियन्त्रित रखता है।

इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास जी महाराज दे रहे हैं (अमृतवाणी राग कल्याण)

तीन चरण चिन्तामणी साहेब, शेष बदन पर छाए ।

माता, पिता, कुल न बन्धु, ना किन्हें जननी जाये ॥

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 5

तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पूरुषः ।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ ५ ॥

तस्मात्—विराट्—अजायत—विराजः—अधि—पुरुषः:

स—जातः—अत्यरिच्यत—पश्चात्—भूमिम्—अथः—पुरः ।

अनुवाद :- (तस्मात्) उसके पश्चात् उस परमेश्वर सत्यपुरुष की शब्द शक्ति से (विराट्) विराट् अर्थात् ब्रह्म, जिसे क्षर पुरुष व काल भी कहते हैं (अजायत) उत्पन्न हुआ है (पश्चात्) इसके बाद (विराजः) विराट् पुरुष अर्थात् काल भगवान से (अधि) बड़े (पुरुषः) परमेश्वर ने (भूमिम्) पृथ्वी वाले लोक, काल ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोक को (अत्यरिच्यत) अच्छी तरह रचा (अथः) फिर (पुरः) अन्य छोटे-छोटे लोक (स) उस पूर्ण परमेश्वर ने ही (जातः) उत्पन्न किया अर्थात् स्थापित किया ।

भावार्थ :- उपरोक्त मंत्र 4 में वर्णित तीनों लोकों (अगमलोक, अलख लोक तथा सतलोक) की रचना के पश्चात् पूर्ण परमात्मा ने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) की उत्पत्ति की अर्थात् उसी सर्व शक्तिमान परमात्मा पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) से ही विराट् अर्थात् ब्रह्म (काल) की उत्पत्ति हुई। यही प्रमाण गीता अध्याय ३ मन्त्र 15 में है कि अक्षर पुरुष अर्थात् अविनाशी प्रभु से ब्रह्म उत्पन्न हुआ यही प्रमाण अर्थवदेद काण्ड 4 अनुवाक 1 सुक्त 3 में है कि पूर्ण ब्रह्म से ब्रह्म की उत्पत्ति हुई उसी पूर्ण ब्रह्म ने (भूमिम्) भूमि आदि छोटे-बड़े सर्व लोकों की रचना की। वह पूर्णब्रह्म इस विराट् भगवान अर्थात् ब्रह्म से भी बड़ा है अर्थात् इसका भी मालिक है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 15

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः ।

देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबधन्पुरुषं पशुम् ॥ १५ ॥

प्त—अस्य—आसन्—परिधयः—त्रिसप्त—समिधः—कृताः:

देवा—यत्—यज्ञम्—तन्वानाः—अबधन्—पुरुषम्—पशुम् ।

अनुवाद :- (सप्त) सात संख ब्रह्माण्ड तो परब्रह्म के तथा (त्रिसप्त) इक्कीस ब्रह्माण्ड काल ब्रह्म के (समिधः) कर्मदण्ड दुःख रूपी आग से दुःखी (कृताः) करने वाले (परिधयः) गोलाकार घेरा रूप सीमा में (आसन्) विद्यमान हैं (यत्) जो (पुरुषम्) पूर्ण

परमात्मा की (यज्ञम्) विधिवत् धार्मिक कर्म अर्थात् पूजा करता है (पशुम) बलि के पशु रूपी काल के जाल में कर्म बन्धन में बंधे (देवा) भक्तात्माओं को (तन्वाना:) काल के द्वारा रचे अर्थात् फैलाये पाप कर्म बन्धन जाल से (अबन्धन) बन्धन रहित करता है अर्थात् बन्दी छुड़ाने वाला बन्दी छोड़ है।

भावार्थ :- सात संख ब्रह्माण्ड परब्रह्म के तथा इककीस ब्रह्माण्ड ब्रह्म के हैं जिन में गोलाकार सीमा में बंद पाप कर्मों की आग में जल रहे प्राणियों को वास्तविक पूजा विधि बता कर सही उपासना करवाता है जिस कारण से बलि दिए जाने वाले पशु की तरह जन्म-मृत्यु के काल (ब्रह्म) के खाने के लिए तप्त शिला के कष्ट से पीड़ित भक्तात्माओं को काल के कर्म बन्धन के फैलाए जाल को तोड़कर बन्धन रहित करता है अर्थात् बन्धन छुड़वाने वाला बन्दी छोड़ है। इसी का प्रमाण पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 32 में है कि कविरंघारिसि (कविर) कविर परमेश्वर (अंघ) पाप का (अरि) शत्रु (असि) है अर्थात् पाप विनाशक कबीर है। बम्भारिसि (बम्भारि) बन्धन का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर (असि) है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।

ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥16॥

यज्ञेन—यज्ञम्—अ—यजन्त—देवाः—तानि—धर्माणि—प्रथमानि— आसन्—ते—ह—नाकम्— महिमानः— सचन्त— यत्र—पूर्वे—साध्याः—सन्ति देवाः ।

अनुवाद :- जो (देवाः) निर्विकार देव स्वरूप भक्तात्माएं (अयज्ञम्) अधूरी गलत धार्मिक पूजा के स्थान पर (यज्ञेन) सत्य भक्ति धार्मिक कर्म के आधार पर (अयजन्त) पूजा करते हैं (तानि) वे (धर्माणि) धार्मिक शक्ति सम्पन्न (प्रथमानि) मुख्य अर्थात् उत्तम (आसन) हैं (ते ह) वे ही वास्तव में (महिमानः) महान भक्ति शक्ति युक्त होकर (साध्याः) सफल भक्त जन (नाकम्) पूर्ण सुखदायक परमेश्वर को (सचन्त) भक्ति निमित कारण अर्थात् सत्भक्ति की कमाई से प्राप्त होते हैं, वे वहाँ चले जाते हैं। (यत्र) जहाँ पर (पूर्वे) पहले वाली सृष्टि के (देवाः) पापरहित देव स्वरूप भक्त आत्माएं (सन्ति) रहती हैं।

भावार्थ :- जो निर्विकार (जिन्होने मांस, शराब, तम्बाकू सेवन करना त्याग दिया है तथा अन्य बुराईयों से रहित है वे) देव स्वरूप भक्त आत्माएं शास्त्र विधि रहित पूजा को त्याग कर शास्त्रानुकूल साधना करते हैं वे भक्ति की कमाई से धनी होकर काल के ऋण से मुक्त होकर अपनी सत्य भक्ति की कमाई के कारण उस सर्व सुखदाई परमात्मा को प्राप्त करते हैं अर्थात् सत्यलोक में चले जाते हैं जहाँ पर सर्व प्रथम रची सृष्टि के देव स्वरूप अर्थात् पाप रहित हंस आत्माएं रहती हैं।

जैसे कुछ आत्माएं तो काल (ब्रह्म) के जाल में फँस कर यहाँ आ गई, कुछ परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्माण्डों में आ गई, फिर भी असंख्य आत्माएं जिनका विश्वास पूर्ण परमात्मा में अटल रहा, जो पतिव्रता पद से नहीं गिरी वे वहीं रह

गई, इसलिए यहाँ वही वर्णन पवित्र वेदों ने भी सत्य बताया है। यही प्रमाण गीता अध्याय 8 के श्लोक संख्या 8 से 10 में वर्णन है कि जो साधक पूर्ण परमात्मा की सत्तसाधना शास्त्रविधि अनुसार करता है वह भवित की कमाई के बल से उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त होता है अर्थात् उसके पास चला जाता है। इससे सिद्ध हुआ कि तीन प्रभु हैं ब्रह्म - परब्रह्म - पूर्णब्रह्म। इन्हीं को 1. ब्रह्म - ईश - क्षर पुरुष 2. परब्रह्म - अक्षर पुरुष/अक्षर ब्रह्म ईश्वर तथा 3. पूर्ण ब्रह्म - परम अक्षर ब्रह्म - परमेश्वर - सतपुरुष आदि पर्यायवाची शब्दों से जाना जाता है।

यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 17 से 20 में स्पष्ट है कि पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) शिशु रूप धारण करके प्रकट होता है तथा अपना निर्मल ज्ञान अर्थात् तत्त्वज्ञान (कविर्गीर्भिः) कबीर वाणी के द्वारा अपने अनुयाइयों को बोल-बोल कर वर्णन करता है। वह कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ब्रह्म (क्षर पुरुष) के धाम तथा परब्रह्म (अक्षर पुरुष) के धाम से भिन्न जो पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष) का तीसरा ऋतधाम (सतलोक) है, उसमें आकार में विराजमान है तथा सतलोक से चौथा अनामी लोक है, उसमें भी यही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अनामी पुरुष रूप में मनुष्य सदृश आकार में विराजमान है।

“पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण”

“ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव के माता-पिता”

(दुर्गा और ब्रह्म के योग से ब्रह्मा, विष्णु और शिव का जन्म)

पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण तीसरा स्कन्द अध्याय 1-3(गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादकर्ता श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार तथा चिमन लाल गोस्खामी जी, पृष्ठ नं. 114 से)

पृष्ठ नं. 114 से 118 तक विवरण है कि कितने ही आचार्य भवानी को सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करने वाली बताते हैं। वह प्रकृति कहलाती है तथा ब्रह्म के साथ अभेद सम्बन्ध है जैसे पत्नी को अर्धांगनी भी कहते हैं अर्थात् दुर्गा ब्रह्म (काल) की पत्नी है। एक ब्रह्माण्ड की सृष्टि रचना के विषय में राजा श्री परीक्षित के पूछने पर श्री व्यास जी ने बताया कि मैंने श्री नारद जी से पूछा था कि हे देवर्षे ! इस ब्रह्माण्ड की रचना कैसे हुई? मेरे इस प्रश्न के उत्तर में श्री नारद जी ने कहा कि मैंने अपने पिता श्री ब्रह्मा जी से पूछा था कि हे पिता श्री इस ब्रह्माण्ड की रचना आपने की या श्री विष्णु जी इसके रचयिता हैं या शिव जी ने रचा है? सच-सच बताने की कृपा करें। तब मेरे पूज्य पिता श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि बेटा नारद, मैंने अपने आपको कमल के फूल पर बैठा पाया था, मुझे नहीं मालूम इस अगाध जल में मैं कहाँ से उत्पन्न हो गया। एक हजार वर्ष तक पृथ्वी का अन्वेषण करता रहा, कहीं जल का ओर-छोर नहीं पाया। फिर आकाशवाणी हुई कि तप करो। एक हजार वर्ष तक तप किया। फिर

सृष्टि करने की आकाशवाणी हुई। इतने में मधु और कैटभ नाम के दो राक्षस आए, उनके भय से मैं कमल का डण्ठल पकड़ कर नीचे उत्तरा। वहाँ भगवान विष्णु जी शेष शैय्या पर अचेत पड़े थे। उनमें से एक स्त्री (प्रेतवत प्रविष्ट दुर्गा) निकली। वह आकाश में आभूषण पहने दिखाई देने लगी। तब भगवान विष्णु होश में आए। अब मैं तथा विष्णु जी दो थे। इतने में भगवान शंकर भी आ गए। देवी ने हमें विमान में बैठाया तथा ब्रह्मा लोक में ले गई। वहाँ एक ब्रह्मा, एक विष्णु तथा एक शिव और देखा फिर एक देवी देखी, उसे देख कर विष्णु जी ने विवेक पूर्वक निम्न वर्णन किया (ब्रह्म काल ने भगवान विष्णु को चेतना प्रदान कर दी, उसको अपने बाल्यकाल की याद आई तब बचपन की कहानी सुनाई)।

पृष्ठ नं. 119-120 पर भगवान विष्णु जी ने श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी से कहा कि यह हम तीनों की माता है, यही जगत् जननी प्रकृति देवी है। मैंने इस देवी को तब देखा था जब मैं छोटा सा बालक था, यह मुझे पालने में झुला रही थी।

तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 123 पर श्री विष्णु जी ने श्री दुर्गा जी की स्तुति करते हुए कहा - तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह सारा संसार तुम्हीं से उद्भासित हो रहा है, मैं (विष्णु), ब्रह्मा और शंकर हम सभी तुम्हारी कृपा से ही विद्यमान हैं। हमारा आविर्भाव (जन्म) और तिरोभाव (मृत्यु) हुआ करता है अर्थात् हम तीनों देव नाशवान हैं, केवल तुम ही नित्य (अविनाशी) हो, जगत् जननी हो, प्रकृति देवी हो।

भगवान शंकर बोले - देवी यदि महाभाग विष्णु तुम्हीं से प्रकट (उत्पन्न) हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा भी तुम्हारे ही बालक हुए। फिर मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम्हीं हो।

विचार करें :- उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी नाशवान हैं। मृत्युंजय (अजर-अमर) व सर्वेश्वर नहीं हैं तथा दुर्गा (प्रकृति) के पुत्र हैं तथा ब्रह्म (काल-सदाशिव) इनका पिता है।

तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 125 पर ब्रह्मा जी के पूछने पर कि हे माता! वेदों में जो ब्रह्म कहा है वह आप ही हैं या कोई अन्य प्रभु है? इसके उत्तर में यहाँ तो दुर्गा कह रही है कि मैं तथा ब्रह्म एक ही हैं। फिर इसी स्कंद अ. 6 के पृष्ठ नं. 129 पर कहा है कि अब मेरा कार्य सिद्ध करने के लिए विमान पर बैठ कर तुम लोग शीघ्र पधारो (जाओ)। कोई कठिन कार्य उपस्थित होने पर जब तुम मुझे याद करोगे, तब मैं सामने आ जाऊँगी। देवताओं भेरा (दुर्गा का) तथा ब्रह्म का ध्यान तुम्हें सदा करते रहना चाहिए। हम दोनों का स्मरण करते रहोगे तो तुम्हारे कार्य सिद्ध होने में तनिक भी संदेह नहीं है।

उपरोक्त व्याख्या से स्वसिद्ध है कि दुर्गा (प्रकृति) तथा ब्रह्म (काल) ही तीनों देवताओं के माता-पिता हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु व शिव जी नाशवान हैं व पूर्ण शक्ति युक्त

नहीं हैं।

तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) की शादी दुर्गा (प्रकृति देवी) ने की। पृष्ठ नं. 128-129 पर, तीसरे स्कंद में।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 12

ये, च, एव, सात्त्विकाः भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,
मतः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि ॥

अनुवाद : (च) और (एव) भी (ये) जो (सात्त्विकाः) सत्त्वगुण विष्णु जी से स्थिति (भावाः) भाव हैं और (ये) जो (राजसाः) रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति (च) तथा (तामसाः) तमोगुण शिव से संहार हैं (तान्) उन सबको तू (मतः, एव) मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं (इति) ऐसा (विद्धि) जान (तु) परन्तु वास्तवमें (तेषु) उनमें (अहम्) मैं और (ते) वे (मयि) मुझमें (न) नहीं हैं।

“पवित्र शिव महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण”

(काल ब्रह्म व दुर्गा से विष्णु, ब्रह्मा व शिव की उत्पत्ति)

इसी का प्रमाण पवित्र श्री शिव पुराण गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादकर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, इसके अध्याय 6 रुद्र संहिता, पृष्ठ नं. 100 पर कहा है कि जो मूर्ति रहित परब्रह्म है, उसी की मूर्ति भगवान सदाशिव है। इनके शरीर से एक शक्ति निकली, वह शक्ति अस्तिका, प्रकृति (दुर्गा), त्रिदेव जननी (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी को उत्पन्न करने वाली माता) कहलाई। जिसकी आठ भुजाएँ हैं। वे जो सदाशिव हैं, उन्हें शिव, शंभु और महेश्वर भी कहते हैं। (पृष्ठ नं. 101 पर) वे अपने सारे अंगों में भस्म रमाये रहते हैं। उन काल रूपी ब्रह्म ने एक शिवलोक नामक क्षेत्र का निर्माण किया। फिर दोनों ने पति-पत्नी का व्यवहार किया जिससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम विष्णु रखा (पृष्ठ नं. 102)।

फिर रुद्र संहिता अध्याय नं. 7 पृष्ठ नं. 103 पर ब्रह्मा जी ने कहा कि मेरी उत्पत्ति भी भगवान सदाशिव (ब्रह्म-काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) के संयोग से अर्थात् पति-पत्नी के व्यवहार से ही हुई। फिर मुझे बेहोश कर दिया।

फिर रुद्र संहिता अध्याय नं. 9 पृष्ठ नं. 110 पर कहा है कि इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र इन तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (काल-ब्रह्म) गुणातीत माने गए हैं।

यहाँ पर चार सिद्ध हुए अर्थात् सदाशिव (काल-ब्रह्म) व प्रकृति (दुर्गा) से ही ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव उत्पन्न हुए हैं। तीनों भगवानों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की माता जी श्री दुर्गा जी तथा पिता जी श्री ज्योति निरंजन (ब्रह्म) है। यही तीनों प्रभु रजगुण-ब्रह्मा जी, सत्तगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी हैं।

“पवित्र श्रीमद्भगवत् गीता जी में सृष्टि रचना का प्रमाण”

इसी का प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 तक है। ब्रह्म (काल) कह रहा है कि प्रकृति (दुर्गा) तो मेरी पत्नी है, मैं ब्रह्म (काल) इसका पति हूँ। हम दोनों के संयोग से सर्व प्राणियों सहित तीनों गुणों (रजगुण - ब्रह्मा जी, सतगुण - विष्णु जी, तमगुण - शिवजी) की उत्पत्ति हुई है। मैं (ब्रह्म) सर्व प्राणियों का पिता हूँ तथा प्रकृति (दुर्गा) इनकी माता है। मैं इसके उदर में बीज स्थापना करता हूँ जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है। प्रकृति (दुर्गा) से उत्पन्न तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) जीव को कर्म आधार से शरीर में बांधते हैं।

यही प्रमाण अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16, 17 में भी है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 1

ऊर्ध्वमूलम् अधःशाखम् अश्वत्थम् प्राहुः अव्ययम्

छन्दांसि यस्य पर्णानि यः तम् वेद सः वेदवित् ॥

अनुवाद : (ऊर्ध्वमूलम्) ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला (अधःशाखम्) नीचे को तीनों गुण अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु व तमगुण शिव रूपी शाखा वाला (अव्ययम्) अविनाशी (अश्वत्थम्) विस्तारित पीपल का वृक्ष है, (यस्य) जिसके (छन्दांसि) जैसे वेद में छन्द है ऐसे संसार रूपी वृक्ष के भी विभाग छोटे-छोटे हिस्से टहनियाँ व (पर्णानि) पते (प्राहुः) कहे हैं (तम्) उस संसाररूप वृक्षको (यः) जो (वेद) इसे विस्तार से जानता है (सः) वह (वेदवित्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्त्वदर्शी है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 2

अधः च ऊर्ध्वम् प्रसृताः तस्य शाखाः गुणप्रवृद्धाः

विषयप्रवालाः अधः च मूलानि अनुसन्ततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ॥

अनुवाद : (तस्य) उस वृक्षकी (अधः) नीचे (च) और (ऊर्ध्वम्) ऊपर (गुणप्रवृद्धाः) तीनों गुणों ब्रह्मा-रजगुण, विष्णु-सतगुण, शिव-तमगुण रूपी (प्रसृता) फैली हुई (विषयप्रवालाः) विकार- काम क्रोध, मोह, लोभ अहंकार रूपी कोपल (शाखाः) डाली ब्रह्मा, विष्णु, शिव (कर्मानुबन्धीनि) जीवको कर्मों में बाँधने की (मूलानि) जड़ें अर्थात् मुख्य कारण हैं (च) तथा (मनुष्यलोके) मनुष्यलोक – अर्थात् पृथ्वी लोक में (अधः) नीचे – नरक, चौरासी लाख जूनियों में (ऊर्ध्वम्) ऊपर स्वर्ग लोक आदि में (अनुसन्ततानि) व्यवस्थित किए हुए हैं।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 3

न रूपम् अस्य इह तथा उपलभ्यते न अन्तः न च आदिः न च

सम्प्रतिष्ठा अश्वत्थम् एनम् सुविरुद्धमूलम् असंगशस्त्रेण दुर्घेन छित्वा ॥

अनुवाद : (अस्य) इस रचना का (न) नहीं (आदिः) शुरुवात (च) तथा (न) नहीं

(अन्तः) अन्त है (न) नहीं (तथा) वैसा (रूपम्) स्वरूप (उपलभ्यते) पाया जाता है (च) तथा (इह) यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी (न) नहीं है (सम्प्रतिष्ठा) क्योंकि सर्वब्रह्माण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति का मुझे भी ज्ञान नहीं है (एनम्) इस (सुविरुद्धमूलम्) अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला (अश्वत्थम्) मजबूत स्वरूपवाले संसार रूपी वृक्ष के ज्ञान को (असंडगशस्त्रेण) पूर्ण ज्ञान रूपी (दृढेन) दृढ़ सूक्ष्म वेद अर्थात् तत्त्वज्ञान के द्वारा जानकर (छित्वा) काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति को क्षणिक अर्थात् क्षण भंगुर जानकर ब्रह्मा, विष्णु, शिव, ब्रह्म तथा परब्रह्म से भी आगे पूर्णब्रह्म की तलाश करनी चाहिए।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 4

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न, निवर्तन्ति, भूयः,
तम्, एव, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये, यतः, प्रवृत्तिः, प्रसृता, पुराणी ॥

अनुवाद : जब तत्त्वदर्शी संत मिल जाए (ततः) इसके पश्चात् (तत्) उस परमात्मा के (पदम्) पद स्थान अर्थात् सतलोक को (परिमार्गितव्यम्) भली भाँति खोजना चाहिए (यस्मिन्) जिसमें (गताः) गए हुए साधक (भूयः) फिर (न, निवर्तन्ति) लौटकर संसार में नहीं आते (च) और (यतः) जिस परमात्मा—परम अक्षर ब्रह्म से (पुराणी) आदि (प्रवृत्तिः) रचना—सृष्टि (प्रसृता) उत्पन्न हुई है (तम्) अज्ञात (आद्यम्) आदि यम अर्थात् मैं काल निरंजन (पुरुषम्) पूर्ण परमात्मा की (एव) ही (प्रपद्ये) मैं शरण में हूँ तथा उसी की पूजा करता हूँ।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 16

द्वौ, इमौ, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च, अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते ॥

अनुवाद : (लोके) इस संसारमें (द्वौ) दो प्रकारके (क्षरः) नाशवान् (च) और (अक्षरः) अविनाशी (पुरुषौ) भगवान हैं (एव) इसी प्रकार (इमौ) इन दोनों प्रभुओं के लोकों में (सर्वाणि) सम्पूर्ण (भूतानि) प्राणियों के शरीर तो (क्षरः) नाशवान् (च) और (कूटस्थः) जीवात्मा (अक्षरः) अविनाशी (उच्यते) कहा जाता है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 17

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,
यः, लोकत्रयम् आविश्य, विभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः ॥

अनुवाद : (उत्तमः) उत्तम (पुरुषः) प्रभु (तु) तो (अन्यः) उपरोक्त दोनों प्रभुओं “क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष” से भी अन्य ही है (इति) यह वास्तव में (परमात्मा) परमात्मा (उदाहृतः) कहा गया है (यः) जो (लोकत्रयम्) तीनों लोकों में (आविश्य) प्रवेश करके (विभर्ति) सबका धारण पोषण करता है एवं (अव्ययः) अविनाशी (ईश्वरः) ईश्वर (प्रभुओं में श्रेष्ठ अर्थात् समर्थ प्रभु) है।

भावार्थ - गीता ज्ञान दाता प्रभु ने केवल इतना ही बताया है कि यह संसार उल्टे लटके वृक्ष तुल्य जानो। ऊपर जड़ें (मूल) तो पूर्ण परमात्मा है। नीचे टहनीयां आदि अन्य हिस्से जानों। इस संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का भिन्न-भिन्न विवरण जो संत जानता है वह तत्त्वदर्शी संत है जिसके विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक नं. 2-3 में केवल इतना ही बताया है कि तीन गुण रूपी शाखा हैं। यहां विचारकाल में अर्थात् गीता में आपको मैं (गीता ज्ञान दाता) पूर्ण ज्ञानकारी नहीं दे सकता क्योंकि मुझे इस संसार की रचना के आदि व अंत का ज्ञान नहीं है। उस के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है कि किसी तत्त्व दर्शी संत से उस पूर्ण परमात्मा का ज्ञान जानों इस गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में उस तत्त्वदर्शी संत की पहचान बताई है कि वह संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का ज्ञान कराएगा। उसी से पूछो। गीता अध्याय 15 के श्लोक 4 में कहा है कि उस तत्त्वदर्शी संत के मिल जाने के पश्चात् उस परमपद परमेश्वर की खोज करनी चाहिए अर्थात् उस तत्त्वदर्शी संत के बताए अनुसार साधना करनी चाहिए जिससे पूर्ण मोक्ष (अनादि मोक्ष) प्राप्त होता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट किया है कि तीन प्रभु हैं एक क्षर पुरुष (ब्रह्म) दूसरा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तीसरा परम अक्षर पुरुष (पूर्ण ब्रह्म)। क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष वास्तव में अविनाशी नहीं हैं। वह अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य ही है। वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है।

उपरोक्त श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में यह प्रमाणित हुआ कि उल्टे लटके हुए संसार रूपी वृक्ष की मूल अर्थात् जड़ तो परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है जिससे पूर्ण वृक्ष का पालन होता है तथा वृक्ष का जो हिस्सा पृथ्वी के तुरन्त बाहर जमीन के साथ दिखाई देता है वह तना होता है उसे अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म जानों। उस तने से ऊपर चल कर अन्य मोटी डार निकलती है उनमें से एक डार को ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष जानों तथा उसी डार से अन्य तीन शाखाएं निकलती हैं उन्हें ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जानों तथा शाखाओं से आगे पते रूप में सांसारिक प्राणी जानों। उपरोक्त गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट है कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तथा इन दोनों के लोकों में जितने प्राणी हैं उनके रथूल शरीर तो नाशवान हैं तथा जीवात्मा अविनाशी है अर्थात् उपरोक्त दोनों प्रभु व इनके अन्तर्गत सर्व प्राणी नाशवान हैं। भले ही अक्षर पुरुष (परब्रह्म) को अविनाशी कहा है परन्तु वास्तव में अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य है। वह तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका पालन-पोषण करता है। उपरोक्त विवरण में तीन प्रभुओं का भिन्न-भिन्न विवरण दिया है।

“पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुरान शरीफ में सृष्टि रचना का प्रमाण”

इसी का प्रमाण पवित्र बाईबल में तथा पवित्र कुरान शरीफ में भी है।

कुरान शरीफ में पवित्र बाईबल का भी ज्ञान है, इसलिए इन दोनों पवित्र सद्ग्रन्थों ने मिल-जुल कर प्रमाणित किया है कि कौन तथा कैसा है सृष्टि रचनहार तथा उसका वास्तविक नाम क्या है।

पवित्र बाईबल (उत्पत्ति ग्रन्थ पृष्ठ नं. 2 पर, अ. 1:20 - 2:5 पर)

छठवां दिन :— प्राणी और मनुष्य :

अन्य प्राणियों की रचना करके 26. फिर परमेश्वर ने कहा, हम मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता में बनाएं, जो सर्व प्राणियों को काबू रखेगा। 27. तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया, नर और नारी करके मनुष्यों की सृष्टि की।

29. प्रभु ने मनुष्यों के खाने के लिए जितने बीज वाले छोटे पेड़ तथा जितने पेड़ों में बीज वाले फल होते हैं वे भोजन के लिए प्रदान किए हैं, (माँस खाना नहीं कहा है।)

सातवां दिन :— विश्राम का दिन :

परमेश्वर ने छः दिन में सर्व सृष्टि की उत्पत्ति की तथा सातवें दिन विश्राम किया।

पवित्र बाईबल ने सिद्ध कर दिया कि परमात्मा मानव सदृश शरीर में है, जिसने छः दिन में सर्व सृष्टि की रचना की तथा फिर विश्राम किया।

पवित्र कुरान शरीफ (सुरत फुर्कानि 25, आयत नं. 52, 58, 59)

आयत 52 :— फला तुतिअल् — काफिरन् व जहिदहुम बिही जिहादन् कबीरा (कबीरन्)। | 52 |

इसका भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी का खुदा (प्रभु) कह रहा है कि हे पैगम्बर ! आप काफिरों (जो एक प्रभु की भक्ति त्याग कर अन्य देवी—देवताओं तथा मूर्ति आदि की पूजा करते हैं) का कहा मत मानना, क्योंकि वे लोग कबीर को पूर्ण परमात्मा नहीं मानते। आप मेरे द्वारा दिए इस कुरान के ज्ञान के आधार पर अटल रहना कि कबीर ही पूर्ण प्रभु है तथा कबीर अल्लाह के लिए संघर्ष करना (लड़ना नहीं) अर्थात् अड़िग रहना।

आयत 58 :— व तवक्कल् अलल् — हस्तिलजी ला यमूतु व सब्बिह बिहमूदिही व कफा बिही बिजुनूबि अिबादिही खबीरा (कबीरा)। | 58 |

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी जिसे अपना प्रभु मानते हैं वह अल्लाह (प्रभु) किसी और पूर्ण प्रभु की तरफ संकेत कर रहा है कि ऐ पैगम्बर उस कबीर परमात्मा पर विश्वास रख जो तुझे जिंदा महात्मा के रूप में आकर मिला था। वह कभी मरने वाला नहीं है अर्थात् वास्तव में अविनाशी है। तारीफ के साथ उसकी पाकी (पवित्र महिमा) का गुणगान किए जा, वह कबीर अल्लाह (कविर्देव) पूजा के योग्य है तथा अपने उपासकों के सर्व पापों को विनाश करने वाला है।

आयत 59 :- अल्लजी खलकरसमावाति वल्अर्ज व मा बैनहमा फी सित्तति अद्यामिन् सुम्मस्तवा अललअर्शि अरहमानु फस्अल् बिही खबीरन्(कबीरन्) । ।59 ।।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद को कुरान शरीफ बोलने वाला प्रभु (अल्लाह) कह रहा है कि वह कबीर प्रभु वही है जिसने जमीन तथा आसमान के बीच में जो भी विद्यमान है सर्व सृष्टि की रचना छः दिन में की तथा सातवें दिन ऊपर अपने सत्यलोक में सिंहासन पर विराजमान हो (बैठ) गया । उसके विषय में जानकारी किसी (बाखबर) तत्त्वदर्शी संत से पूछो

उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति कैसे होगी तथा वास्तविक ज्ञान तो किसी तत्त्वदर्शी संत (बाखबर) से पूछो, मैं नहीं जानता ।

उपरोक्त दोनों पवित्र धर्मों (ईसाई तथा मुसलमान) के पवित्र शास्त्रों ने भी मिल-जुल कर प्रमाणित कर दिया कि सर्व सृष्टि रचनहार, सर्व पाप विनाशक, सर्व शक्तिमान, अविनाशी परमात्मा मानव सदृश शरीर में आकार में है तथा सत्यलोक में रहता है । उसका नाम कबीर है, उसी को अल्लाहु अकबिरु भी कहते हैं ।

आदरणीय धर्मदास जी ने पूज्य कबीर प्रभु से पूछा कि हे सर्वशक्तिमान ! आज तक यह तत्त्वज्ञान किसी ने नहीं बताया, वेदों के मर्मज्ञ ज्ञानियों ने भी नहीं बताया । इससे सिद्ध है कि चारों पवित्र वेद तथा चारों पवित्र कतेब (कुरान शरीफ आदि) झूठे हैं । पूर्ण परमात्मा ने कहा :-

कबीर, वेद कतेब झूठे नहीं भाई, झूठे हैं जो समझे नाहिं ।

भावार्थ है कि चारों पवित्र वेद (ऋग्वेद - अथर्ववेद - यजुर्वेद - सामवेद) तथा पवित्र चारों कतेब (कुरान शरीफ - जबूर - तौरात - इंजिल) गलत नहीं हैं । परन्तु जो इनको नहीं समझ पाए वे नादान हैं ।

"पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना"

विशेष :- निम्न अमृतवाणी सन् 1403 से {जब पूज्य कविर्देव (कबीर परमेश्वर) लीलामय शरीर में पाँच वर्ष के हुए} सन् 1518 {जब कविर्देव (कबीर परमेश्वर) मगहर रथान से सशरीर सत्तलोक गए} के बीच में लगभग 600 वर्ष पूर्व परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) जी द्वारा अपने निजी सेवक (दास भक्त) आदरणीय धर्मदास साहेब जी को सुनाई थी तथा धनी धर्मदास साहेब जी ने लिपिबद्ध की थी । परन्तु उस समय के पवित्र हिन्दुओं तथा पवित्र मुसलमानों के नादान गुरुओं (नीम-हकीमों) ने कहा कि यह धाणक (जुलाहा) कबीर झूठा है । किसी भी सद् ग्रन्थ में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी के माता-पिता का नाम नहीं है । ये तीनों प्रभु अविनाशी हैं इनका जन्म मृत्यु नहीं होता । न ही पवित्र वेदों व पवित्र कुरान शरीफ आदि में कबीर परमेश्वर का प्रमाण है तथा

परमात्मा को निराकार लिखा है। हम प्रतिदिन पढ़ते हैं। भोली आत्माओं ने उन विचक्षणों (चतुर गुरुओं) पर विश्वास कर लिया कि सचमुच यह कबीर धाणक तो अशिक्षित है तथा गुरु जी शिक्षित हैं, सत्य कह रहे होंगे। आज वही सच्चाई प्रकाश में आ रही है तथा अपने सर्व पवित्र धर्मों के पवित्र सद्ग्रन्थ साक्षी हैं। इससे सिद्ध है कि पूर्ण परमेश्वर, सर्व सृष्टि रचनहार, कुल करतार तथा सर्वज्ञ कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही हैं जो काशी (बनारस) में कमल के फूल पर प्रकट हुए तथा 120 वर्ष तक वास्तविक तेजोमय शरीर के ऊपर मानव सदृश शरीर हल्के तेज का बना कर रहे तथा अपने द्वारा रची सृष्टि का ठीक-ठीक (वास्तविक तत्त्व) ज्ञान देकर सशरीर सतलोक चले गए। कृपा प्रेमी पाठक पढ़ें निम्न अमृतवाणी परमेश्वर कबीर साहेब जी द्वारा उच्चारित :-

धर्मदास यह जग बौराना । कोइ न जाने पद निरवाना ॥

यहि कारन मैं कथा पसारा । जगसे कहियो राम नियारा ॥

यही ज्ञान जग जीव सुनाओ । सब जीवोंका भरम नशाओ ॥

अब मैं तुमसे कहों चिताई । त्रयदेवनकी उत्पति भाई ॥

कुछ संक्षेप कहों गुहराई । सब संशय तुम्हरे मिट जाई ॥

भरम गये जग वेद पुराना । आदि रामका का भेद न जाना ॥

राम राम सब जगत बखाने । आदि राम कोइ बिरला जाने ॥

ज्ञानी सुने सो हिरदै लगाई । मूर्ख सुने सो गम्य ना पाई ॥

माँ अष्टंगी पिता निरंजन । वे जम दारुण वंशन अंजन ॥

पहिले कीन्ह निरंजन राई । पीछेसे माया उपजाई ॥

माया रूप देख अति शोभा । देव निरंजन तन मन लोभा ॥

कामदेव धर्मराय सत्ताये । देवी को तुरतही धर खाये ॥

पेट से देवी करी पुकारा । साहब मेरा करो उबारा ॥

टेर सुनी तब हम तहाँ आये । अष्टंगी को बंद छुड़ाये ॥

सतलोक मैं कीन्हा दुराचारि, काल निरंजन दिन्हा निकारि ॥

माया समेत दिया भगाई, सोलह संख कोस दूरी पर आई ॥

अष्टंगी और काल अब दोई, मंद कर्म से गए बिगोई ॥

धर्मराय को हिकमत कीन्हा । नख रेखा से भगकर लीन्हा ॥

धर्मराय किन्हाँ भोग विलासा । मायाको रही तब आसा ॥

तीन पुत्र अष्टंगी जाये । ब्रह्मा विष्णु शिव नाम धराये ॥

तीन देव विस्तार चलाये । इनमें यह जग धोखा खाये ॥

पुरुष गम्य कैसे को पावै । काल निरंजन जग भरमावै ॥

तीन लोक अपने सुत दीन्हा । सुन्न निरंजन बासा लीन्हा ॥

अलख निरंजन सुन्न ठिकाना । ब्रह्मा विष्णु शिव भेद न जाना ॥

तीन देव सो उनको धावें । निरंजन का वे पार ना पावें ॥

अलख निरंजन बड़ा बटपारा । तीन लोक जिव कीन्ह अहारा ॥
ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं बचाये । सकल खाय पुन धूर उड़ाये ॥
तिनके सुत हैं तीनों देवा । आंधर जीव करत हैं सेवा ॥
अकाल पुरुष काहू नहिं चीन्हां । काल पाय सबही गह लीन्हां ॥
ब्रह्म काल सकल जग जाने । आदि ब्रह्मको ना पहिचाने ॥
तीनों देव और औतारा । ताको भजे सकल संसारा ॥
तीनों गुणका यह विस्तारा । धर्मदास मैं कहों पुकारा ॥
गुण तीनों की भक्ति मैं, भूल परो संसार ।
कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरैं पार ॥

उपरोक्त अमृतवाणी में परमेश्वर कबीर साहेब जी अपने निजी सेवक श्री धर्मदास साहेब जी को कह रहे हैं कि धर्मदास यह सर्व संसार तत्वज्ञान के अभाव से विचलित है। किसी को पूर्ण मोक्ष मार्ग तथा पूर्ण सृष्टि रचना का ज्ञान नहीं है। इसलिए मैं आपको मेरे द्वारा रची सृष्टि की कथा सुनाता हूँ। बुद्धिमान व्यक्ति तो तुरंत समझ जायेंगे। परन्तु जो सर्व प्रमाणों को देखकर भी नहीं मानेंगे तो वे नादान प्राणी काल प्रभाव से प्रभावित हैं, वे भक्ति योग्य नहीं। अब मैं बताता हूँ तीनों भगवानों (ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी) की उत्पत्ति कैसे हुई? इनकी माता जी तो अष्टंगी (दुर्गा) है तथा पिता ज्योति निरंजन (ब्रह्म, काल) है। पहले ब्रह्म की उत्पत्ति अण्डे से हुई। फिर दुर्गा की उत्पत्ति हुई। दुर्गा के रूप पर आसक्त होकर काल (ब्रह्म) ने गलती (छेड़-छाड़) की, तब दुर्गा (प्रकृति) ने इसके पेट में शरण ली। मैं वहाँ गया जहाँ ज्योति निरंजन काल था। तब भवानी को ब्रह्म के उदर से निकाल कर इककीस ब्रह्माण्ड समेत 16 संख कोस की दूरी पर भेज दिया। ज्योति निरंजन (धर्मराय) ने प्रकृति देवी (दुर्गा) के साथ भोग-विलास किया। इन दोनों के संयोग से तीनों गुणों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की उत्पत्ति हुई। इन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की ही साधना करके सर्व प्राणी काल जाल में फँसे हैं। जब तक वास्तविक मंत्र नहीं मिलेगा, पूर्ण मोक्ष कैसे होगा?

विशेष:- प्रिय पाठक विचार करें कि श्री ब्रह्मा जी श्री विष्णु जी तथ श्री शिव जी की स्थिति अविनाशी बताई गई थी। सर्व हिन्दु समाज अभी तक तीनों परमात्माओं को अजर, अमर व जन्म-मृत्यु रहित मानते रहे जबकि ये तीनों नाश्वान हैं। इन के पिता काल रूपी ब्रह्म तथा माता दुर्गा (प्रकृति/अष्टंगी) हैं जैसा आप ने पूर्व प्रमाणों में पढ़ा यह ज्ञान अपने शास्त्रों में भी विद्यमान है परन्तु हिन्दु समाज के कलयुगी गुरुओं, ऋषियों, सन्तों को ज्ञान नहीं। जो अध्यापक पाठ्यक्रम (सलेबस) से ही अपरिचित है वह अध्यापक ठीक नहीं (विद्वान नहीं) है, विद्यार्थियों के भविष्य का शत्रु है। इसी प्रकार जिन गुरुओं को अभी तक यह

नहीं पता कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी के माता-पिता कौन हैं? तो वे गुरु, ऋषि, सन्त ज्ञान हीन हैं। जिस कारण से सर्व भक्त समाज को शास्त्र विरुद्ध ज्ञान (लोक वेद अर्थात् दन्त कथा) सुना कर अज्ञान से परिपूर्ण कर दिया। शास्त्रविधि विरुद्ध भक्तिसाधना करा के परमात्मा के वास्तविक लाभ (पूर्ण मोक्ष) से वंचित रखा सबका मानव जन्म नष्ट करा दिया क्योंकि श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में यही प्रमाण है कि जो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण पूजा करता है। उसे कोई लाभ नहीं होता पूर्ण परमात्मा कबीर जी ने सन् 1403 से ही सर्व शास्त्रों युक्त ज्ञान अपनी अमृतवाणी (कविरचाणी) में बताना प्रारम्भ किया था। परन्तु उन अज्ञानी गुरुओं ने यह ज्ञान भक्त समाज तक नहीं जाने दिया। जो वर्तमान में स्पष्ट हो रहा है इससे सिद्ध है कि कविदेव (कबीर प्रभु) तत्त्वदर्शी सन्त रूप में स्वयं पूर्ण परमात्मा ही आए थे।

“आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण”

आदि रमेणी (सद् ग्रन्थ पृष्ठ नं. 690 से 692 तक)

आदि रमेणी अदली सारा। जा दिन होते धुंधुंकारा ॥1॥

सतपुरुष कीन्हा प्रकाश। हम होते तखत कबीर खवासा ॥2॥

मन मोहिनी सिरजी माया। सतपुरुष एक ख्याल बनाया ॥3॥

धर्मराय सिरजे दरबानी। चौसठ जुगतप सेवा ठानी ॥4॥

पुरुष पृथिवी जाकूं दीन्ही। राज करो देवा आधीनी ॥5॥

ब्रह्माण्ड इकीस राज तुम्ह दीन्हा। मन की इच्छा सब जुग लीन्हा ॥6॥

माया मूल रूप एक छाजा। मोहि लिये जिनहूँ धर्मराजा ॥7॥

धर्म का मन चंचल चित धार्या। मन माया का रूप बिचारा ॥8॥

चंचल चेरी चपल चिरागा। या के परसे सरबस जागा ॥9॥

धर्मराय कीया मन का भागी। विषय वासना संग से जागी ॥10॥

आदि पुरुष अदली अनरागी। धर्मराय दिया दिल सें त्यागी ॥11॥

पुरुष लोक सें दीया ढहाही। अगम दीप चलि आये भाई ॥12॥

सहज दास जिस दीप रहता। कारण कौन कौन कुल पथा ॥13॥

धर्मराय बोले दरबानी। सुनो सहज दास ब्रह्मज्ञानी ॥14॥

चौसठ जुग हम सेवा कीन्ही। पुरुष पृथिवी हम कूं दीन्ही ॥15॥

चंचल रूप भया मन बौरा। मनमोहिनी ठगिया भौरा ॥16॥

सतपुरुष के ना मन भाये। पुरुष लोक से हम चलि आये ॥17॥

अगर दीप सुनत बड़भागी। सहज दास मेटो मन पागी ॥18॥

बोले सहजदास दिल दानी। हम तो चाकर सत सहदानी ॥19॥

सतपुरुष सें अरज गुजारूं। जब तुम्हारा बिवाण उतारूं ॥20॥

सहज दास को कीया पीयाना । सत्यलोक लीया प्रवाना ॥२१॥
 सतपुरुष साहिब सरबंगी । अविगत अदली अचल अभंगी ॥२२॥
 धर्मराय तुम्हरा दरबानी । अगर दीप चलि गये प्रानी ॥२३॥
 कौन हुकम करी अरज अवाजा । कहां पठावौ उस धर्मराजा ॥२४॥
 भई अवाज अदली एक साचा । विषय लोक जा तीन्यूं बाचा ॥२५॥
 सहज विमाँन चले अधिकाई । छिन में अगर दीप चलि आई ॥२६॥
 हमतो अरज करी अनरागी । तुम्ह विषय लोक जावो बड़भागी ॥२७॥
 धर्मराय के चले विमाना । मानसरोवर आये प्राना ॥२८॥
 मानसरोवर रहन न पाये । दरै कबीरा थांना लाये ॥२९॥
 बंकनाल की विषमी बाटी । तहां कबीरा रोकी घाटी ॥३०॥
 इन पाँचों मिलि जगत बंधाना । लख चौरासी जीव संताना ॥३१॥
 ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया । धर्मराय का राज पठाया ॥३२॥
 यौह खोखा पुर झूठी बाजी । भिसति बैकुण्ठ दगासी साजी ॥३३॥
 कृतिम जीव भुलांने भाई । निज घर की तो खबरि न पाई ॥३४॥
 सवा लाख उपजें नित हंसा । एक लाख विनशें नित अंसा ॥३५॥
 उपति खपति प्रलय फेरी । हर्ष शोक जौंरा जम जेरी ॥३६॥
 पाँचों तत्त्व हैं प्रलय माँही । सत्त्वगुण रजगुण तमगुण झाँई ॥३७॥
 आठों अंग मिली है माया । पिण्ड ब्रह्माण्ड सकल भरमाया ॥३८॥
 या में सुरति शब्द की डोरी । पिण्ड ब्रह्माण्ड लगी है खोरी ॥३९॥
 श्वासा पारस मन गह राखो । खोल्हि कपाट अमीरस चाखो ॥४०॥
 सुनाऊं हंस शब्द सुन दासा । अगम दीप है अग है बासा ॥४१॥
 भवसागर जम दण्ड जमाना । धर्मराय का है तलबाना ॥४२॥
 पाँचों ऊपर पद की नगरी । बाट बिहंगम बंकी डगरी ॥४३॥
 हमरा धर्मराय सों दावा । भवसागर में जीव भरमावा ॥४४॥
 हम तो कहैं अगम की बानी । जहाँ अविगत अदली आप बिनानी ॥४५॥
 बंदी छोड़ हमारा नामं । अजर अमर है अस्थीर ठामं ॥४६॥
 जुगन जुगन हम कहते आये । जम जौंरा सें हंस छुटाये ॥४७॥
 जो कोई माने शब्द हमारा । भवसागर नहीं भरमें धारा ॥४८॥
 या में सुरति शब्द का लेखा । तन अंदर मन कहो कीन्हीं देखा ॥४९॥
 दास गरीब अगम की बानी । खोजा हंसा शब्द सहदानी ॥५०॥
 उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि यहाँ पहले केवल अंधकार था तथा पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब जी सत्यलोक में तख्त (सिंहासन) पर विराजमान थे। हम वहाँ चाकर थे। परमात्मा ने ज्योति निरंजन को उत्पन्न किया। फिर उसके तप के प्रतिफल में इक्कीस ब्रह्माण्ड प्रदान किए। फिर माया (प्रकृति) की उत्पत्ति की। युवा दुर्गा के रूप पर

मोहित होकर ज्योति निरंजन (ब्रह्म) ने दुर्गा (प्रकृति) से बलात्कार करने की चेष्टा की। ब्रह्म को उसकी सजा मिली। उसे सत्यलोक से निकाल दिया तथा शाप लगा कि एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का प्रतिदिन आहार करेगा, सवा लाख उत्पन्न करेगा। यहाँ सर्व प्राणी जन्म-मृत्यु का कष्ट उठा रहे हैं। यदि कोई पूर्ण परमात्मा का वास्तविक शब्द (सच्चानाम जाप मंत्र) हमारे से प्राप्त करेगा, उसको काल की बंद से छुड़वा देंगे। हमारा बन्दी छोड़ नाम है। आदरणीय गरीबदास जी अपने गुरु व प्रभु कबीर परमात्मा के आधार पर कह रहे हैं कि सच्चे मंत्र अर्थात् सत्यनाम व सारशब्द की प्राप्ति कर लो, पूर्ण मोक्ष हो जायेगा। नहीं तो नकली नाम दाता संतों व महन्तों की मीठी-मीठी बातों में फंस कर शास्त्र विधि रहित साधना करके काल जाल में रह जाओगे। फिर कष्ट पर कष्ट उठाओगे।

।।गरीबदास जी महाराज की वाणी ।।

(सत ग्रन्थ साहिब पृष्ठ नं. 690 से सहाभार)

माया आदि निरंजन भाई, अपने जाए आपै खाई ।

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर चेला, ऊँ सोहं का है खेला ।।

सिखर सुन्न में धर्म अन्यायी, जिन शक्ति डायन महल पठाई ।।

लाख ग्रास नित उठ दूती, माया आदि तख्त की कुती ।।

सवा लाख घड़िये नित भांडे, हंसा उतपति परलय डांडे ।

ये तीनों चेला बटपारी, सिरजे पुरुषा सिरजी नारी ।।

खोखापुर में जीव भुलाये, स्वपना बहिस्त वैकुंठ बनाये ।

यो हरहट का कुआ लोई, या गल बंध्या है सब कोई ।।

कीड़ी कुजंग और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा ।

अरब अलील इन्द्र हैं भाई, हरहट डोरी बंधे सब आई ।।

शेष महेश गणेश्वर ताहिं, हरहट डोरी बंधे सब आहिं ।

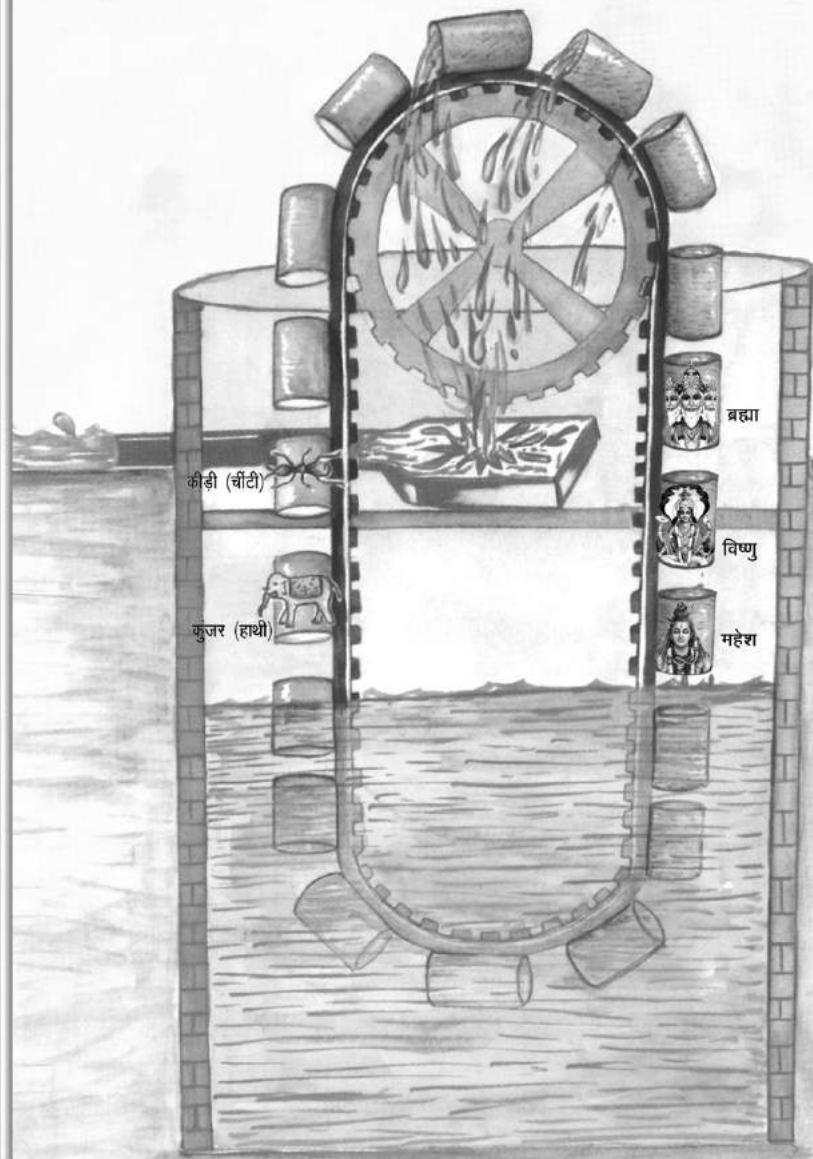
शुक्रादिक ब्रह्मादिक देवा, हरहट डोरी बंधे सब खेवा ।।

कोटिक कर्ता फिरता देख्या, हरहट डोरी कहूँ सुन लेखा ।

चतुर्भुजी भगवान कहावैं, हरहट डोरी बंधे सब आवैं ।।

यो है खोखापुर का कुआ, या में पड़ा सो निश्चय मुवा ।

ज्योति निरंजन (कालबली) के वश होकर के ये तीनों देवता (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) अपनी महिमा दिखाकर जीवों को स्वर्ग नरक तथा भवसागर में (लख चौरासी योनियों में) भटकाते रहते हैं। ज्योति निरंजन अपनी माया से नागिनी की तरह जीवों को पैदा करते हैं और फिर मार देते हैं। जिस प्रकार उसको नागिनी खा जाती है। फन मारते समय कई अण्डे फूटते हैं उनमें से बच्चे निकलते हैं यदि कोई बच्चा नागिनी अपनी दुम से अण्डों के चारों ओर कुण्डली बनाती है फिर उन अण्डों पर



योह हरहट का कुआँ लोई, या गल बंध्या है सब कोई।
कीड़ी कुंजर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा ॥

काल लोक में जन्म-मरण रूपी हरहट (चक्र)

अपना फन मारती है। जिससे अण्डा फूट जाता है। उसमें से बच्चा निकल जाता है। कुण्डली (सर्पनी की दुम का घेरा) से बाहर निकल जाता है तो वह बच्चा बच जाता है नहीं तो कुण्डली में वह (नागिनी) छोड़ती नहीं। जितने बच्चे उस कुण्डली के अन्दर होते हैं उन सबको खा जाती है।

माया काली नागिनी, अपने जाये खात। कुण्डली में छोड़े नहीं, सौ बातों की बात ॥

इसी प्रकार यह कालबली का जाल है। निरंजन तक की भक्ति पूरे संत से नाम लेकर करेंगे तो भी इस निरंजन की कुण्डली (इक्कीस ब्रह्माण्डों) से बाहर नहीं निकल सकते। स्वयं ब्रह्मा, विष्णु, महेश, आदि माया शेराँवाली भी निरंजन की कुण्डली में हैं। ये बेचारे अवतार धार कर आते हैं और जन्म-मृत्यु का चक्कर काटते रहते हैं। इसलिए विचार करें सोहं जाप जो कि ध्रुव व प्रह्लाद व शुकदेव ऋषि ने जापा, वह भी पार नहीं हुए। क्योंकि श्री विष्णु पुराण के प्रथम अंश के अध्याय 12 के श्लोक 93 में पृष्ठ 51 पर लिखा है कि ध्रुव केवल एक कल्प अर्थात् एक हजार चतुर्युग तक ही मुक्त है। इसलिए काल लोक में ही रहे तथा 'ऊँ नमः भगवते वासुदेवाय' मन्त्र जाप करने वाले भक्त भी कृष्ण तक की भक्ति कर रहे हैं, वे भी चौरासी लाख योनियों के चक्कर काटने से नहीं बच सकते। यह परम पूज्य कबीर साहिब जी व आदरणीय गरीबदास साहेब जी महाराज की वाणी प्रत्यक्ष प्रमाण देती हैं।

अनन्त कोटि अवतार हैं, माया के गोविन्द। कर्ता हो हो अवतरे, बहुर पड़े जग फंध ॥

सतपुरुष कबीर साहिब जी की भक्ति से ही जीव मुक्त हो सकता है। जब तक जीव सतलोक में वापिस नहीं चला जाएगा तब तक काल लोक में इसी तरह कर्म करेगा और की हुई नाम व दान धर्म की कमाई स्वर्ग रूपी होटलों में समाप्त करके वापिस कर्म आधार से चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीर में कष्ट उठाने वाले काल लोक में चक्कर काटता रहेगा। माया (दुर्गा) से उत्पन्न हो कर करोड़ों गोविन्द (ब्रह्मा-विष्णु-शिव) मर चुके हैं। भगवान का अवतार बन कर आये थे। फिर कर्म बन्धन में बन्ध कर कर्मों को भोग कर चौरासी लाख योनियों में चले गए। जैसे भगवान विष्णु जी को देवर्षि नारद का शाप लगा। वे श्री रामचन्द्र रूप में अयोध्या में आए। फिर श्री राम जी रूप में बाली का वध किया था। उस कर्म का दण्ड भोगने के लिए श्री कृष्ण जी का जन्म हुआ। फिर बाली बाली आत्मा शिकारी बना तथा अपना प्रतिशोध लिया। श्री कृष्ण जी के पैर में विषाक्त तीर मार कर वध किया। महाराज गरीबदास जी अपनी वाणी में कहते हैं :

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया, और धर्मराय कहिये।

इन पाँचों मिल परपंच बनाया, वाणी हमरी लहिये ॥

इन पाँचों मिल जीव अटकाये, जुगन-जुगन हम आन छुटाये ।

बन्दी छोड़ हमारा नाम, अजर अमर है अस्थिर ठाम ॥

पीर पैगम्बर कुतुब औलिया, सुर नर मुनिजन ज्ञानी ।

येता को तो राह न पाया, जम के बंधे प्राणी ॥
 धर्मराय की धूमा—धामी, जम पर जंग चलाऊँ ।
 जोरा को तो जान न दूगां, बांध अदल घर ल्याऊँ ॥
 काल अकाल दोहूँ को मोसूं महाकाल सिर मूडूं ।
 मैं तो तख्त हजूरी हुकमी, चोर खोज कूं ढूढूं ॥
 मूला माया मग में बैठी, हंसा चुन—चुन खाई ॥
 ज्योति स्वरूपी भया निरंजन, मैं ही कर्ता भाई ॥
 संहस अठासी दीप मुनीश्वर, बंधे मुला डोरी ।
 ऐत्यां मैं जम का तलबाना, चलिए पुरुष कीशोरी ॥
 मूला का तो माथा दागूं सतकी मोहर करुंगा ।
 पुरुष दीप कूं हंस चलाऊँ, दरा न रोकन दूंगा ॥
 हम तो बन्दी छोड़ कहावां, धर्मराय है चकवै ।
 सतलोक की सकल सुनावां, वाणी हमरी अखवै ॥
 नौ लख पटटन ऊपर खेलूं साहदरे कूं रोकूं ।
 द्वादस कोटि कटक सब काटूं हंस पठाऊँ मोखूं ॥
 चौदह भुवन गमन है मेरा, जल थल मैं सरबंगी ।
 खालिक खलक खलक मैं खालिक, अविगत अचल अभंगी ॥
 अगर अलील चक्र है मेरा, जित से हम चल आए ।
 पाँचों पर प्रवाना मेरा, बंधि छुटावन धाये ॥
 जहाँ औंकार निरंजन नाहीं, ब्रह्मा विष्णु वेद नहीं जाहीं ।
 जहाँ करता नहीं जान भगवाना, काया माया पिण्ड न प्राणा ॥
 पाँच तत्त्व तीनों गुण नाहीं, जोरा काल दीप नहीं जाहीं ।
 अमर करुं सतलोक पठाऊँ, तातैं बन्दी छोड़ कहाऊँ ॥

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की महिमा बताते हुए आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि हमारे प्रभु कविर (कविर्देव) बन्दी छोड़ हैं। बन्दी छोड़ का भावार्थ है काल की कारागार से छुटवाने वाला, काल ब्रह्म के इककीस ब्रह्माण्डों में सर्व प्राणी पापों के कारण काल के बंदी हैं। पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब पाप का विनाश कर देते हैं। पापों का विनाश न ब्रह्म, न परब्रह्म, न ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव जी कर सकते हैं। केवल जैसा कर्म है, उसका वैसा ही फल दे देते हैं। इसीलिए यजुर्वेद अध्याय 5 के मन्त्र 32 में लिखा है 'कविरंघारिरसि' कविर्देव (कबीर परमेश्वर) पापों का शत्रु है, 'बम्भारिरसि' बन्धनों का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ है।

इन पाँचों (ब्रह्मा-विष्णु-शिव-माया और धर्मराय) से ऊपर सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) है। जो सतलोक का मालिक है। शेष सर्व परब्रह्म-ब्रह्म तथा ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी व आदि माया नाशवान परमात्मा हैं। महाप्रलय में ये सब तथा इनके लोक समाप्त हो जाएंगे। आम जीव से कई हजार गुणा ज्यादा लम्बी इनकी उम्र है। परन्तु जो

समय निर्धारित है वह एक दिन पूरा अवश्य होगा। आदरणीय गरीबदास जी महाराज कहते हैं :-

शिव ब्रह्मा का राज, इन्द्र गिनती कहां। चार मुक्ति वैकुण्ठ समझ, येता लहा।।
संख जुगन की जुनी, उम्र बड़ धारिया। जा जननी कुर्बान, सु कागज पारिया।।

येती उम्र बुलंद मरैगा अंत रे। सतगुर लगे न कान, न भैटे संत रे।।

चाहे संख युग की लम्बी उम्र भी क्यों न हो वह एक दिन समाप्त जरूर होगी। यदि सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब के नुमाँयदे पूर्ण संत(गुरु) जो तीन नाम का मंत्र (जिसमें एक ओ३म + तत् + सत् सांकेतिक हैं) देता है तथा उसे पूर्ण संत द्वारा नाम दान करने का आदेश है, उससे उपदेश लेकर नाम की कमाई करेंगे तो हम सतलोक के अधिकारी हंस हो सकते हैं। सत्य साधना बिना बहुत लम्बी उम्र कोई काम नहीं आएगी क्योंकि निरंजन लोक में दुःख ही दुःख है।

कबीर, जीवना तो थोड़ा ही भला, जै सत सुमरन होय। लाख वर्ष का जीवना, लेखै धरै ना कोय।।

कबीर साहिब अपनी (पूर्णब्रह्म की) जानकारी स्वयं बताते हैं कि इन परमात्माओं से ऊपर असंख्य भुजा का परमात्मा सतपुरुष है जो सत्यलोक (सच्च खण्ड, सत्यधाम) में रहता है तथा उसके अन्तर्गत सर्वलोक [ब्रह्म (काल) के 21 ब्रह्माण्ड व ब्रह्मा, विष्णु, शिव शक्ति के लोक तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड व अन्य सर्व ब्रह्माण्ड] आते हैं और वहाँ पर सत्यनाम-सारनाम के जाप द्वारा जाया जाएगा जो पूरे गुरु से प्राप्त होता है। सच्चखण्ड (सतलोक) में जो आत्मा चली जाती है उसका पुनर्जन्म नहीं होता। सतपुरुष (पूर्णब्रह्म) कबीर साहेब (कविर्देव) ही अन्य लोकों में स्वयं ही भिन्न-भिन्न नामों से विराजमान हैं। जैसे अलख लोक में अलख पुरुष, अगम लोक में अगम पुरुष तथा अकह लोक में अनामी पुरुष रूप में विराजमान हैं। ये तो उपमात्मक नाम हैं, परन्तु वास्तविक नाम उस पूर्ण पुरुष का कविर्देव (भाषा भिन्न होकर कबीर साहेब) है।

“आदरणीय नानक साहेब जी की वाणी में सृष्टि रचना का संकेत”

श्री नानक साहेब जी की अमृतवाणी, महला 1, राग बिलावलु, अंश 1 (गु.ग्र. पृ. 839)

आपे सचु कीआ कर जोड़ि। अंडज फोड़ि जोड़ि विछोड़।।

धरती आकाश कीए बैसण कउ थाउ। राति दिननंतु कीए भउ—भाउ।।

जिन कीए करि वेखणहारा।(3)

त्रितीआ ब्रह्मा—बिसनु—महेसा। देवी देव उपाए वेसा।।(4)

पउण पाणी अगनी बिसराउ। ताही निरंजन साचो नाउ।।

तिसु महि मनुआ रहिआ लिव लाई। प्रणवति नानकु कालु न खाई।।(10)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि सच्चे परमात्मा (सतपुरुष) ने स्वयं ही अपने हाथों से सर्व सृष्टि की रचना की है। उसी ने अण्डा बनाया फिर फोड़ा

तथा उसमें से ज्योति निरंजन निकला। उसी पूर्ण परमात्मा ने सर्व प्राणियों के रहने के लिए धरती, आकाश, पवन, पानी आदि पाँच तत्व रचे। अपने द्वारा रची सृष्टि का स्वयं ही साक्षी है। दूसरा कोई सही जानकारी नहीं दे सकता। फिर अण्डे के फूटने से निकले निरंजन के बाद तीनों श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की उत्पत्ति हुई तथा अन्य देवी-देवता उत्पन्न हुए तथा अनगिनत जीवों की उत्पत्ति हुई। उसके बाद अन्य देवों के जीवन चरित्र तथा अन्य ऋषियों के अनुभव के छः शास्त्र तथा अठारह पुराण बन गए। पूर्ण परमात्मा के सच्चे नाम (सत्यनाम) की साधना अनन्य मन से करने से तथा गुरु मर्यादा में रहने वाले (प्रणवति) को श्री नानक जी कह रहे हैं कि काल नहीं खाता।

राग मारु(अंश) अमृतवाणी महला 1(गु.ग्र.पृ. 1037)

सुनहु ब्रह्मा, विसनु, महेसु उपाए। सुने वरते जुग सबाए॥

इसु पद बिचारे सो जनु पुरा। तिस मिलिए भरमु चुकाइदा॥(3)
साम वेदु, रुगु जुजरु अथरवणु। ब्रह्में मुख माझआ है त्रैगुण॥

ता की कीमत कहि न सकै। को तिज बोले जिउ बुलाईदा॥(9)

उपरोक्त अमृतवाणी का सारांश है कि जो संत पूर्ण सृष्टि रचना सुना देगा तथा बताएगा कि अण्डे के दो भाग होकर कौन निकला, जिसने फिर ब्रह्मलोक की सुन्न में अर्थात् गुप्त स्थान पर ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी की उत्पत्ति की तथा वह परमात्मा कौन है जिसने ब्रह्म (काल) के मुख से चारों वेदों (पवित्र ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) को उच्चारण करवाया, वह पूर्ण परमात्मा जैसा चाहे वैसे ही प्रत्येक प्राणी को बुलवाता है। इस सर्व ज्ञान को पूर्ण बताने वाला सन्त मिल जाए तो उसके पास जाइए तथा जो सभी शंकाओं का पूर्ण निवारण करता है, वही पूर्ण सन्त अर्थात् तत्त्वदर्शी है।

श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ 929 अमृत वाणी श्री नानक साहेब जी की राग रामकली महला 1 दखणी ओअंकार

ओअंकारि ब्रह्मा उतपति। ओअंकारु कीआ जिनि चित। ओअंकारि सैल जुग भए। ओअंकारि बेद निरमए। ओअंकारि सबदि उधरे। ओअंकारि गुरुमुखि तरे। ओनम अखर सुणहू बीचारु। ओनम अखरु त्रिभवण सारु।

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि ओंकार अर्थात् ज्योति निरंजन (काल) से ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हुई। कई युगों मर्त्ती मार कर ओंकार (ब्रह्म) ने वेदों की उत्पत्ति की जो ब्रह्मा जी को प्राप्त हुए। तीन लोक की भक्ति का केवल एक ओउम् मंत्र ही वास्तव में जाप करने का है। इस ओउम् शब्द को पूरे संत से उपदेश लेकर अर्थात् गुरु धारण करके जाप करने से उद्घार होता है।

विशेष :- श्री नानक साहेब जी ने तीनों मंत्रों (ओउम् + तत् + सत्) का

स्थान-स्थान पर रहस्यात्मक विवरण दिया है। उसको केवल पूर्ण संत (तत्त्वदर्शी संत) ही समझ सकता है तथा तीनों मंत्रों के जाप को उपदेशी को समझाया जाता है। (पृ. 1038)

उत्तम सतिगुरु पुरुष निराले, सबदि रते हरि रस मतवाले ।

रिधि, बुधि, सिधि, गिआन गुरु ते पाइए, पूरे भाग मिलाईदा ॥ (15)

सतिगुरु ते पाए बीचारा, सुन समाधि सचे घरबारा ।

नानक निरमल नादु सबद धुनि, सचु रामैं नामि समाइदा (17)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि वास्तविक ज्ञान देने वाले सतगुरु तो निराले ही हैं, वे केवल नाम जाप को जपते हैं, अन्य हठयोग साधना नहीं बताते। यदि आप को धन दौलत, पद, बुद्धि या भक्ति शक्ति भी चाहिए तो वह भक्ति मार्ग का ज्ञान पूर्ण संत ही पूरा प्रदान करेगा, ऐसा पूर्ण संत बड़े भाग्य से ही मिलता है। वही पूर्ण संत विवरण बताएगा कि ऊपर सुन्न (आकाश) में अपना वास्तविक घर (सत्यलोक) परमेश्वर ने रच रखा है।

उसमें एक वास्तविक सार नाम की धुन (आवाज) हो रही है। उस आनन्द में अविनाशी परमेश्वर के सार शब्द से समाया जाता है अर्थात् उस वास्तविक सुखदाई स्थान में वास हो सकता है, अन्य नामों तथा अधूरे गुरुओं से नहीं हो सकता।

आंशिक अमृतवाणी महला पहला (श्री गु. ग्र. पृ. 359-360)

सिव नगरी महि आसणि बैसउ कलप त्यागी वादं ॥(1)

सिंडी सबद सदा धुनि सोहै अहिनिसि पूरै नादं ॥(2)

हरि कीरति रह रासि हमारी गुरु मुख पंथ अतीत (3)

सगली जोति हमारी संमिआ नाना वरण अनेकं ।

कह नानक सुणि भरथरी जोगी पारब्रह्म लिव एकं ॥(4)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि हे भरथरी योगी जी आप की साधना भगवान शिव तक है, उससे आप को शिव नगरी (लोक) में स्थान मिला है और शरीर में जो सिंगी शब्द आदि हो रहा है वह इन्हीं कमलों का है तथा टेलीविजन की तरह प्रत्येक देव के लोक से शरीर में सुनाई दे रहा है।

हम तो एक परमात्मा पारब्रह्म अर्थात् सर्व से पार जो पूर्ण परमात्मा है अन्य किसी और एक परमात्मा में लौ (अनन्य मन से लग्न) लगाते हैं।

हम ऊपरी दिखावा (भस्म लगाना, हाथ में दंडा रखना) नहीं करते। मैं तो सर्व प्राणियों को एक पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) की सन्तान समझता हूँ। सर्व उसी शक्ति से चलायमान हैं। हमारी मुद्रा तो सच्चा नाम जाप गुरु से प्राप्त करके करना है तथा क्षमा करना हमारा बाणा (वेशभूषा) है। मैं तो पूर्ण परमात्मा का उपासक हूँ तथा पूर्ण सतगुरु का भक्ति मार्ग इससे भिन्न है।

अमृतवाणी राग आसा महला 1 (श्री गु. ग्र. पृ. 420)

। ॥आसा महला ॥ ॥ जिनी नामु विसारिआ दूजै भरमि भुलाई । मूलु छोड़ि डाली लगे किआ पावहि छाई ॥ ॥ ॥ साहिबु मेरा एकु है अवरु नहीं भाई । किरपा ते सुखु पाइआ साचे परथाई ॥ ॥ ॥ गुर की सेवा सो करे जिसु आपि कराए । नानक सिरु दे छूटीऐ दरगह पति पाए ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि जो पूर्ण परमात्मा का वास्तविक नाम भूल कर अन्य भगवानों के नामों के जाप में भ्रम रहे हैं वे तो ऐसा कर रहे हैं कि मूल (पूर्ण परमात्मा) को छोड़ कर डालियों (तीनों गुण रूप रजगुण-ब्रह्मा, सत्तगुण-विष्णु, तमगुण-शिवजी) की सिंचाई (पूजा) कर रहे हैं। उस साधना से कोई सुख नहीं हो सकता अर्थात् पौधा सूख जाएगा तो छाया में नहीं बैठ पाओगे। भावार्थ है कि शास्त्र विधि रहित साधना करने से व्यर्थ प्रयत्न है। कोई लाभ नहीं। इसी का प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी है। उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने के लिए मनमुखी (मनमानी) साधना त्याग कर पूर्ण गुरुदेव को समर्पण करने से तथा सच्चे नाम के जाप से ही मोक्ष संभव है, नहीं तो मृत्यु के उपरांत नरक जाएगा।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 843-844)

। ॥बिलावलु महला ॥ ॥ मैं मन चाहु घणा साचि विगासी राम । मोही प्रेम पिरे प्रभु अविनासी राम ॥ ॥ अविगतो हरि नाथु नाथह तिसै भावै सो थीऐ । किरपालु सदा दइआलु दाता जीआ अंदरि तूं जीऐ ॥ ॥ मैं आधारु तेरा तू खसमु मेरा मैं ताणु तकीआ तेरओ । साचि सूचा सदा नानक गुरसबदि झगरु निवेरओ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि अविनाशी पूर्ण परमात्मा नाथों का भी नाथ है अर्थात् देवों का भी देव है (सर्व प्रभुओं श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्मा व परब्रह्म पर भी नाथ है अर्थात् स्वामी है) मैं तो सच्चे नाम को हृदय में समा चुका हूँ। हे परमात्मा ! सर्व प्राणी का जीवन आधार भी आप ही हो। मैं आपके आश्रित हूँ आप मेरे मालिक हो। आपने ही गुरु रूप में आकर सत्यभवित का निर्णायिक ज्ञान देकर सर्व झगड़ा निपटा दिया अर्थात् सर्व शंका का समाधान कर दिया ।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 721, राग तिलंग महला 1)

यक अर्ज गुफतम् पेश तो दर कून करतार ।

हकका कबीर करीम तू बेअब परवरदिगार ।

नानक बुगोयद जन तुरा तेरे चाकरां पाखाक ।

उपरोक्त अमृतवाणी में स्पष्ट कर दिया कि हे (हकका कबीर) आप सत्कबीर (कून करतार) शब्द शक्ति से रचना करने वाले शब्द स्वरूपी प्रभु अर्थात् सर्व सृष्टि के रचन हार हो, आप ही बेए निर्विकार (परवरदिगार) सर्व के पालन कर्ता दयालु प्रभु हो, मैं आपके दासों का भी दास हूँ।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 24, राग सीरी महला 1)

तेरा एक नाम तारे संसार, मैं ऐहा आस ऐहो आधार।
नानक नीच कहै बिचार, धाणक रूप रहा करतार॥

उपरोक्त अमृतवाणी में प्रमाण किया है कि जो काशी में धाणक (जुलाहा) है यही (करतार) कुल का सृजनहार है। अति आधीन होकर श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि मैं सत कह रहा हूँ कि यह धाणक अर्थात् कबीर जुलाहा ही पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) है।

विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों के सांकेतिक ज्ञान से प्रमाणित हुआ सृष्टि रचना कैसे हुई? पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति करनी चाहिए जो पूर्ण संत से नाम लेकर ही संभव है।

“अन्य संतों द्वारा सृष्टि रचना की दन्त कथा”

अन्य संतों द्वारा जो सृष्टि रचना का ज्ञान बताया है वह कैसा है? कृप्या निम्न पढ़े :- सृष्टि रचना के विषय में राधास्वामी पंथ के सन्तों के व धन-धन सतगुरु पंथ के सन्त के विचार :-

पवित्र पुस्तक जीवन चरित्र परम संत बाबा जयमल सिंह जी महाराज “पृष्ठ नं. 102-103 से “सृष्टि की रचना” (सावन कृपाल पब्लिकेशन, दिल्ली)

“पहले सतपुरुष निराकार था, फिर इजहार (आकार) में आया तो ऊपर के तीन निर्मल मण्डल (सतलोक, अलखलोक, अगमलोक) बन गया तथा प्रकाश तथा मण्डलों का नाद (धुनि) बन गया।”

पवित्र पुस्तक सारवचन (नसर) प्रकाशक :- राधास्वामी सत्संग सभा, दयालबाग आगरा, “सृष्टि की रचना” पृष्ठ 8 :-

“प्रथम धूंधूकार था। उसमें पुरुष सुन्न समाध में थे। जब कुछ रचना नहीं हुई थी। फिर जब मौज हुई तब शब्द प्रकट हुआ और उससे सब रचना हुई, पहले सतलोक और फिर सतपुरुष की कला से तीन लोक और सब विस्तार हुआ।”

यह ज्ञान तो ऐसा है जैसे एक समय कोई बच्चा नौकरी लगने के लिए साक्षात्कार (इन्टरव्यू) के लिए गया। अधिकारी ने पूछा कि आप ने महाभारत पढ़ा है। लड़के ने उत्तर दिया कि उंगलियों पर रट रखा है। अधिकारी ने प्रश्न किया कि पाँचों पाण्डवों के नाम बताओ। लड़के ने उत्तर दिया कि एक भीम था, एक उसका बड़ा भाई था, एक उससे छोटा था, एक और था तथा एक का नाम मैं भूल गया। उपरोक्त सृष्टि रचना का ज्ञान तो ऐसा है।

सतपुरुष व सतलोक की महिमा बताने वाले व पाँच नाम (ऑंकार - ज्योति निरंजन - ररंकार - सोहं - सत्यनाम) देने वाले व तीन नाम (अकाल मूर्ति - सतपुरुष - शब्द स्वरूपी राम) देने वाले संतों द्वारा रची पुस्तकों से कुछ निष्कर्ष :-

संतमत प्रकाश भाग 3 पृष्ठ 76 पर लिखा है कि “सच्चखण्ड या सतनाम चौथा

लोक है'', यहाँ पर 'सतनाम' को स्थान कहा है। फिर इस पवित्र पुस्तक के पृष्ठ नं. 79 पर लिखा है कि "एक राम दशरथ का बेटा, दूसरा राम 'मन', तीसरा राम 'ब्रह्म', चौथा राम 'सतनाम', यह असली राम है।" फिर पवित्र पुस्तक संतमत प्रकाश पहला भाग पृष्ठ नं. 17 पर लिखा है कि "वह सतलोक है, उसी को सतनाम कहा जाता है।" पवित्र पुस्तक 'सार वचन नसर यानि वार्तिक' पृष्ठ नं. 3 पर लिखा है कि "अब समझना चाहिए कि राधा स्वामी पद सबसे उच्चा मुकाम है कि जिसको संतों ने सतलोक और सच्चखण्ड और सार शब्द और सत शब्द और सतनाम और सतपुरुष करके ब्यान किया है।" पवित्र पुस्तक सार वचन (नसर) आगरा से प्रकाशित पृष्ठ नं. 4 पर भी उपरोक्त ज्यों का त्यों वर्णन है। पवित्र पुस्तक 'सच्चखण्ड की सङ्क' पृष्ठ नं. 226 "संतों का देश सच्चखण्ड या सतलोक है, उसी को सतनाम- सतशब्द-सारशब्द कहा जाता है।"

विशेष :- उपरोक्त व्याख्या ऐसी लगी जैसे किसी ने जीवन में न तो शहर देखा, न कार देखी और न पैट्रोल देखा है, न ड्राईवर का ज्ञान हो कि ड्राईवर किसे कहते हैं और वह व्यक्ति अन्य साथियों से कहे कि मैं शहर में जाता हूँ, कार में बैठ कर आनंद मनाता हूँ। फिर साथियों ने पूछा कि कार कैसी है, पैट्रोल कैसा है और ड्राईवर कैसा है, शहर कैसा है? उस गुरु जी ने उत्तर दिया कि शहर कहो चाहे कार एक ही बात है, शहर भी कार ही है, पैट्रोल भी कार को ही कहते हैं, ड्राईवर भी कार को ही कहते हैं, सङ्क भी कार को ही कहते हैं।

आओ विचार करें - सतपुरुष तो पूर्ण परमात्मा है, सतनाम वह दो मंत्र का नाम है जिसमें एक ओ३म् + तत् सांकेतिक है तथा इसके बाद सारनाम साधक को पूर्ण गुरु द्वारा दिया जाता है। यह सतनाम तथा सारनाम दोनों स्मरण करने के नाम हैं। सतलोक वह स्थान है जहाँ सतपुरुष रहता है। पुण्यात्माएं स्वयं निर्णय करें सत्य तथा असत्य का।

"शास्त्रों में परमात्मा"

प्रश्न :- संसार के शास्त्र तथा सन्त, परमात्मा के विषय में क्या जानकारी देते हैं?

उत्तर :- विश्व के मुख्य शास्त्रों, सद्ग्रन्थों में परमात्मा को बहुत अच्छे तरीके से परिभाषित किया है। पहले यह जानते हैं कि विश्व के मुख्य शास्त्र, सद्ग्रन्थ कौन-से हैं?

1. वेद

वेद दो प्रकार के हैं:- 1. सूक्ष्म वेद, 2. सामान्य वेद।

1. सूक्ष्म वेद :- यह वह ज्ञान है, जो परमात्मा स्वयं पृथ्वी पर प्रकट होकर अपने मुख कमल से उच्चारण करके बोलता है, यह सम्पूर्ण ज्ञानयुक्त है।

प्रमाण :- ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 86 मन्त्र 26-27

- ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 82 मन्त्र 1-2, 3
 ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 94 मन्त्र 1
 ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 95 मन्त्र 2
 ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 20 मन्त्र 1
 ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मन्त्र 16 से 20
 ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 54 मन्त्र 3
 यजुर्वेद अध्याय 9 मन्त्र 1 तथा 32
 यजुर्वेद अध्याय 29 मन्त्र 25
 अथर्ववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 मन्त्र 7
 (सामवेद मन्त्र संख्या 822)

अन्य प्रमाण :- श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 4 मन्त्र 32 में परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में सम्पूर्ण ज्ञान ब्रह्म (ज्योति निरंजन अर्थात् काल पुरुष) के अन्त्तकरण में डाला था। (Fax किया था) परमात्मा द्वारा किए निर्धारित समय पर यह ज्ञान स्वयं ही काल पुरुष के श्वासों द्वारा समुद्र में प्रकट हो गया। काल पुरुष ने इसमें से महत्वपूर्ण जानकारी निकाल दी। शेष अधूरा ज्ञान संसार में प्रवेश कर दिया। उसी को चार भागों में चार वेदों के रूप में जाना जाता है।

2. सामान्य वेद :- यह वही आंशिक ज्ञान है जो ब्रह्म (ज्योति निरंजन अर्थात् काल) ने अपने ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा जी को दिया था। यह अधूरा ज्ञान है। इसमें से मुख्य जानकारी निकाली गई है जो ब्रह्म अर्थात् काल ने जान-बूझकर निकाली थी। कारण यह था कि "काल पुरुष" को भय रहता है कि किसी को पूर्ण परमात्मा का ज्ञान न हो जाए। यदि प्राणियों को पूर्ण परमात्मा का ज्ञान हो गया तो सब इस काल के लोक को त्यागकर पूर्ण परमात्मा के लोक (सत्यलोक=शाश्वत रथान) में चले जाएँगे, जहाँ जाने के पश्चात् जन्म-मृत्यु समाप्त हो जाता है। इसलिए ब्रह्म (काल पुरुष) ने पूर्ण परमात्मा के परमपद की जानकारी नहीं बताई, वह नष्ट कर दी थी। उसकी पूर्ति करने के लिए पूर्ण परमात्मा स्वयं सशरीर प्रकट होकर सम्पूर्ण ज्ञान बताता है। अपनी प्राप्ति के वास्तविक मन्त्र भी बताता है जो काल भगवान् ने समाप्त करके शेष ज्ञान प्रदान कर रखा होता है। उसको ऋषिजन वेद कहते हैं। ऋषि व्यास जी ने इस वेद को लिखा तथा इस के चार भाग बनाए।

1. ऋग्वेद 2. यजुर्वेद 3. सामवेद 4. अथर्ववेद जो वर्तमान में प्रचलित हैं। इन्हीं चार वेदों का सारांश काल पुरुष ने श्री मद्भगवत् गीता के रूप में श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके महाभारत के युद्ध से पूर्व बोला था। वह भी बाद में महर्षि व्यास जी ने कागज पर लिखा। जो आज अपने को उपलब्ध हैं।

सद्ग्रन्थों में बाईबल का नाम भी है। बाईबल :- यह तीन पुस्तकों का संग्रह है।

1. तौरेत 2. जबूर 3. इंजिल।

बाईबल में सर्वप्रथम सृष्टि की उत्पत्ति की जानकारी है, जिसमें लिखा है कि परमात्मा ने सर्वप्रथम सृष्टि की रचना की। पृथ्वी, सूर्य, दिन-रात, पशु-पक्षी, मनुष्य (नर-नारी) की रचना परमात्मा ने छः दिन में की तथा सातवें दिन तख्त पर जा विराजा। सृष्टि रचना अध्याय 1 के श्लोक 26, 27-28 में यह भी स्पष्ट किया है कि परमात्मा ने मानव को अपने स्वरूप जैसा उत्पन्न किया। इससे सिद्ध हुआ कि परमात्मा भी मनुष्य जैसा (नराकार) है।

❖ माँस खाना बाईबल में निषेध :-

इसी उत्पत्ति ग्रन्थ में बाईबल में लिखा है कि (श्लोक 27-28 में) मनुष्यों के खाने के लिए बीजदार पौधे (गेहूँ, चने, बाजरा आदि-आदि) तथा फलदार वृक्ष दिए हैं, यह तुम्हारा भोजन है। पशु-पक्षियों के खाने के लिए घास, पत्तेदार झाड़ियाँ दी हैं। इसके पश्चात् परमात्मा तो अपने निजधाम (सत्यलोक) में तख्त पर जा बैठा। बाईबल में आगे जो ज्ञान है वह काल भगवान का तथा इसके पुत्रों का दिया हुआ है। यदि बाईबल, ग्रन्थ में आगे चलकर माँस खाने के लिए लिखा है तो वह पूर्ण परमात्मा का आदेश नहीं है। वह किसी अधूरे प्रभु का है। पूर्ण परमात्मा (Complete God) के आदेश की अवहेलना हो जाने से पाप का भागी बनता है।

❖ कुरान शरीफ (मजीद) :- बाईबल के पश्चात् सद्ग्रन्थों में कुरान शरीफ का नाम श्रद्धा से लिया जाता है, कुरान का ज्ञान दाता भी वही है जिसने बाईबल का ज्ञान दिया है तथा चारों वेदों और श्रीमद्भगवत् गीता का ज्ञान दिया है, इसलिए उसने उन पहलुओं को बाईबल में तथा कुरान में नहीं दोहराया जिन पहलुओं का ज्ञान चारों वेदों तथा श्री मद्भगवत् गीता में दिया है।

❖ उपनिषद :- ये संख्या में 11 (ग्यारह) माने जाते हैं, उपनिषद का ज्ञान किसी ऋषि का अपना अनुभव है। यदि अनुभव वेदों व गीता से नहीं मिलता तो वह व्यर्थ है। उसको ग्रहण नहीं करना चाहिए। इसलिए उपनिषदों को छोड़कर वेदों व गीता के ज्ञान को ग्रहण करना चाहिए क्योंकि उपनिषदों का ज्ञान वेदों व गीता के ज्ञान के विपरीत है। इसी प्रकार बाईबल तथा कुरान के ज्ञान को समझें कि जो ज्ञान वेदों तथा गीता से मेल नहीं करता, उसको ग्रहण नहीं करना चाहिए।

❖ पुराण :- ये संख्या में 18 (अठारह) माने गए हैं। वैसे यह पुराणों का ज्ञान एक ही बोध माना गया है। यह ज्ञान सर्व प्रथम ब्रह्मा जी ने अपने पुत्रों (दक्ष आदि ऋषियों) को दिया था। राजा दक्ष जी, मनु जी तथा पारासर आदि ऋषियों ने इसका आगे प्रचार करते समय अपना अनुभव भी मिला दिया। इस प्रकार 18 भागों में पुराण का ज्ञान माना गया है। 18 पुराणों के ज्ञान का जो अंश वेदों तथा

गीता से मेल नहीं खाता तो वह त्याग देना चाहिए। इसी प्रकार अन्य कोई भी पुस्तक वेदों व गीता के ज्ञान से विपरीत ज्ञान युक्त है, उसे भी त्याग देना उचित है।

गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता अर्जुन को कह रहा है कि तू सर्वभाव से उस परमेश्वर (जो गीता ज्ञान दाता से भिन्न है) की शरण में जा। उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परमशान्ति तथा सनातन परमधाम (सत्य लोक) को प्राप्त हो जाएगा। गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है कि जो ज्ञान (सूक्ष्म वेद) स्वयं परमात्मा अपने मुख कमल से बोलकर बताता है, वह सचिदानन्द घन ब्रह्म की वाणी कही जाती है, उसी को तत्त्वज्ञान भी कहते हैं जिसमें परमात्मा ने पूर्ण मोक्ष मार्ग का ज्ञान दिया है। गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि उस तत्त्वज्ञान को तू तत्त्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ। उनको डण्डवत प्रणाम करके प्रश्न करने से वे तत्त्वदर्शी सन्त तुझे तत्त्व ज्ञान का उपदेश करेंगे। गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में तत्त्वदर्शी सन्त की पहचान बताई गई है। कहा है कि जो सन्त संसार रूपी वृक्ष के सर्वांग को जानता है, वह वेदवित अर्थात् वेदों के तात्पर्य को जानता है, वह तत्त्वदर्शी सन्त है। सूक्ष्म वेद अर्थात् सचिदानन्द घन ब्रह्म की वाणी में बताया है :-

कबीर, अक्षर पुरुष एक पेड़ है, क्षर पुरुष वाकी डार।

तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार ॥

इसी सचिदानन्द घन ब्रह्म की वाणी को तत्त्वज्ञान भी कहते हैं।

गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्त्वज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक कभी लौटकर फिर से संसार में नहीं आता अर्थात् उसका पूर्ण मोक्ष हो जाता है। उसी परमात्मा ने संसार रूपी वृक्ष की रचना की है, केवल उसकी भवित्व करो। गीता ज्ञान दाता अपनी साधना से श्रेष्ठ उस पूर्ण परमात्मा की भवित्व को मानता है, उसी से परमेश्वर का वह परम पद प्राप्त होता है, जिसे प्राप्त करने के पश्चात् जीव का जन्म-मृत्यु का चक्कर सदा के लिए समाप्त हो जाता है।

❖ श्री गुरु ग्रन्थ साहेब जी :- यह सिक्ख धर्म का ग्रन्थ माना जाता है, वास्तव में यह कई महात्माओं की अमृत वाणी का संग्रह है, जिसमें श्री नानक देव जी की वाणी अर्थात् महला-पहला की वाणी तत्त्वज्ञान अर्थात् सूक्ष्मवेद से मेल खाती है क्योंकि श्री नानक जी को परमात्मा मिले थे जिस समय श्री नानक देव साहेब जी सुल्तानपुर शहर में नवाब के यहाँ मोदी खाने में नौकरी करते थे। सुल्तानपुर शहर से आधा कि.मी. दूर बेर्इ नदी बहती है, श्री नानक जी प्रतिदिन उस दरिया में स्नान करने जाया करते थे। एक दिन परमात्मा जिन्दा बाबा की वेशभूषा में बेर्इ नदी पर प्रकट हुए, वहाँ श्री नानक देव जी से ज्ञान चर्चा हुई। उसके पश्चात् श्री नानक जी ने दरिया में डुबकी लगाई लेकिन बाहर नहीं आए।

वहाँ उपस्थित व्यक्तियों ने मान लिया कि नानक जी दरिया में डूब गए हैं। शहर के लोगों ने दरिया में जाल डालकर भी खोजा परन्तु निराशा ही हाथ लगी क्योंकि श्री नानक देव जी तो जिन्दा बाबा के रूप में प्रकट परमात्मा के साथ सच्चखण्ड (सत्यलोक) में चले गए थे। तीन दिन के पश्चात् श्री नानक देव जी वापिस पृथ्वी पर आए। उसी बैर्ड नदी के उसी किनारे पर खड़े हो गए, जहाँ से अन्तर्धान हुए थे। श्री नानक जी को जीवित देखकर सुल्तानपुर के निवासियों की खुशी का ठिकाना नहीं था। श्री नानक जी की बहन नानकी भी सुल्तानपुर शहर में विवाही थी। अपनी बहन के पास श्री नानक जी रहा करते थे। अपने भाई की मौत के गम से दुःखी बहन नानकी को बड़ा आशर्वद्य हुआ और गम खुशी में बदल गया। श्री नानक देव को परमात्मा मिले, सच्चा ज्ञान मिला, सच्चा नाम (सत्यनाम) मिला, पुस्तक भाई बाले वाली "जन्म साखी गुरु नानक देव जी" में तथा प्राण संगली हिन्दी लिपि वाली में जिसके सम्पादक सन्त सम्पूर्ण सिंह हैं। इन दोनों पुस्तकों में प्रमाण है कि श्री गुरु नानक देव जी ने स्वयं मर्दाना को बताया कि मुझे परमात्मा जिन्दा बाबा के रूप में बैर्ड नदी पर मिले, जब मैं स्नान करने के लिए गया। मैं तीन दिन तक उन्हीं के साथ रहा था, वह बाबा जिन्दा मेरा सतगुर भी है तथा वह सर्व सृष्टि का रचनहार भी है। इसलिए वही "बाबा" कहलाने का अधिकारी है, अन्य को "बाबा" नहीं कहा जाना चाहिए, उसका नाम कबीर है।

कायम दायका कुदरती सब पीरन सिर पीर आलम बड़ा कबीर ॥

इसलिए श्री नानक जी की वाणी (महला 1) है, वह सूक्ष्म वेद से मेल खाती है, यह सही है। अन्य सन्तों की वाणी इतनी सटीक नहीं है। कारण यह है कि श्री नानक देव जी को परमात्मा कबीर जी मिले थे।

प्रमाण :- श्री गुरु ग्रन्थ साहिब में पृष्ठ 24 पर लिखी वाणी :-

एक सुआन दुई सुआनी नाल भलके भौंकही सदा बियाल,

कुड़ छुरा मुठा मुरदार धाणक रूप रहा करतार ।

तेरा एक नाम तारे संसार मैं ऐहो आश ऐहो आधार,

धाणक रूप रहा करतार ।

फाही सुरत मलूकी वेश, एह ठगवाड़ा ठगी देश ।

खरा सिआणा बहुता भार, धाणक रूप रहा करतार ॥

श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी के पृष्ठ 731 पर निम्न वाणी है :-

नीच जाति परदेशी मेरा, क्षण आवै क्षण जावै ।

जाकि संगत नानक रहंदा, क्यूकर मुंडा पावै ॥

पृष्ठ 721 पर निम्न वाणी लिखी है :-

यक अर्ज गुफतम पेश तोदर, कून करतार ।

हक्का कबीर करीम तू बेएब परवरदिगार ॥

यह उपरोक्त अमृतवाणी श्री गुरु ग्रन्थ साहेब जी की है जिससे सिद्ध हुआ कि श्री नानक जी को परमात्मा मिले थे। वह "कबीर करतार" है जो काशी में धाणक रूप में लीला करने आए थे।

सन्त गरीब दास जी (गाँव = छुड़ानी, जिला झज्जर हरियाणा) को भी इसी प्रकार जिन्दा बाबा के रूप में कबीर परमात्मा मिले थे, उसी प्रकार सच्चखण्ड (सत्यलोक) लेकर गए थे, फिर वापिस छोड़ा था। सन्त गरीब दास जी ने कहा है:-

गरीब, हम सुल्तानी नानक तारे, दादू कूं उपदेश दिया ।

जाति जुलाहा भेद नहीं पाया, काशी माहे कबीर हुआ ॥

अन्त कोटि ब्रह्माण्ड का, एक रति नहीं भार ।

सतगुरु पुरुष कबीर है, कुल के सिरजन हार ॥

सन्त दादू दास जी महाराज को भी परमात्मा जिन्दा बाबा के रूप में मिले थे। श्री दादू जी 7 वर्ष की आयु के थे। गाँव से बाहर बच्चों में खेल रहे थे। परमात्मा उन्हें भी बाबा जिन्दा के रूप में मिले थे, सत्यलोक लेकर गए थे। दादू जी भी तीन दिन तक अचेत रहे, फिर सचेत हुए तो परमात्मा कबीर जी की महिमा बताने लगे।

जिन मोकूं निज नाम (वास्तविक नाम) दिया, सोई सतगुरु हमार ।

दादू दूसरा कोई नहीं, कबीर सिरजनहार ॥

दादू नाम कबीर की, जै कोई लेवे ओट ।

उनको कबहु लागे नहीं, काल बज्र की चोट ॥

सन्त गरीब दास जी ने कहा है :-

दादू कूं सतगुरु मिले, देई पान की पीख ।

बुढ़ा बाबा जिसे कहै, यह दादू की नहीं सीख ॥

पहली चोट दादू को, मिले पुरुष कबीर ।

टक्कर मारी जद मिले, फिर साम्भर के तीर ॥

❖ सन्त धर्मदास जी बान्धवगढ़ वाले को मिले :- जिस समय ब्रमण करते हुए तीर्थों की यात्रा करते हुए धर्मदास जी मथुरा में पहुँचे तो वह परमात्मा जिन्दा महात्मा के रूप में मिले थे। धर्मदास जी को भी परमात्मा सत्यलोक लेकर गए थे। तीन दिन-रात तक धर्मदास जी भी श्री नानक देव जी की तरह परमात्मा के साथ आकाशमण्डल में (सत्यलोक) में रहे। धर्मदास जी का शरीर अचेत रहा। तीसरे दिन होश में आए तो बताया कि मैं सत्यलोक में परमात्मा के साथ गया था। वे परमात्मा काशी शहर में लीला करने आए हैं, उनको मिलूँगा। धर्मदास दास बनारस (काशी) में गए। वहाँ जुलाहे के रूप में परमात्मा को कार्य करते देखकर आश्चर्य चकित रह गए, चरणों में गिर गए तथा यथार्थ भवित भार्ग प्राप्त करके कल्याण कराया। अधिक जानकारी पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 188 पर। (किस-किसको

(मिला परमात्मा)

❖ हजरत मुहम्मद जी को भी परमात्मा मक्का (काबा) में जिन्दा महात्मा के रूप में मिले थे तथा उनको अपने लोक में ले गए जो एक ब्रह्माण्ड में राजदूत भवन रूप में बना है, परमात्मा ने हजरत मुहम्मद जी को समझाया तथा अपना ज्ञान सुनाया परन्तु हजरत मुहम्मद जी ने परमात्मा के ज्ञान को नहीं स्वीकारा और न सत्यलोक में रहने की इच्छा व्यक्त की। इसलिए हजरत मुहम्मद को वापिस शरीर में भेज दिया। उस समय हजरत मुहम्मद जी के कई हजार मुसलमान अनुयायी बन चुके थे, उनकी महिमा संसार में पूरी गति से फैल रही थी और कुरान के ज्ञान को सर्वोत्तम मान रहे थे।

सन्त गरीब दास जी ने बताया है कि कबीर परमेश्वर जी मुहम्मद साहेब जी को ऊपर लोक में ले गए, परन्तु वहाँ नहीं रहा। गरीब दास जी ने कहा है कि

कबीर परमेश्वर जी ने बताया है :-

हम मुहम्मद को वहाँ ले गयो, इच्छा रूपी वहाँ नहीं रहयो ।

उल्ट मुहम्मद महल पठाया, गुङ्ग बिरज एक कलमा ल्याया ।

रोजा, बंग, निमाज दयी रे, बिर्मल की नहीं बात कही रे ।

मारी गऊ शब्द के तीरं, ऐसे होते मुहम्मद पीरं ।

शब्दे फेर जिवाई, जीव राख्या माँस नहीं भख्या, ऐसे पीर मुहम्मद भाई ।

मुहम्मद गऊ मारी, ले शब्द तलवार। जीवत नहीं कर सका, अल्लाह से करी पुकार ।

तब हमों (मुझको) मुहम्मद ने याद किया रे । शब्द स्वरूप हम बेग गया रे ।

मुई गऊ हमने तुरन्त जीवाई । तब मुहम्मद कै निश्चय आई ॥

तुम कबीर अल्लाह दर्वेशा । मोमिन मुहम्मद का गया अंदेशा ॥

कहा मुहम्मद सुन जिन्दा साहेब । तुम अल्लाह कबीर और सब नायब ॥

इसी का प्रमाण "कुरान शरीफ" की सुरत फुर्कनि 25 आयत 52 से 59 में भी है, कुरान शरीफ के ज्ञान दाता को हजरत मुहम्मद तथा मुसलमान धर्म के सर्व श्रद्धालु अपना खुदा मानते हैं, उसी को पूर्ण परमात्मा भी मानते हैं, इन 52 से 59 आयतों में कुरान ज्ञान दाता ने कहा है कि हे पैगम्बर! हजरत मुहम्मद! जो कुरान की आयतों में मैंने तुझे जो ज्ञान दिया है, तुम उस पर अड़िग रहना। अल्लाह कबीर है और ये काफिर उस अल्लाह पर विश्वास नहीं करते। तुम इनकी बातों में न आना, इनके साथ संघर्ष करना, झगड़ा नहीं करना। हे पैगम्बर! यह कबीर नामक परमात्मा है जिसने किसी को बेटा, बहु, सास, ससुर व नाती बनाया है, तुम उस जिन्दा पर भरोसा रखना। (जो तुझे काबा में मिला था) वह वास्तव में अविनाशी परमात्मा है, वह अपने बन्दों (भक्तों) के गुनाहों (पापों) को क्षमा कर देता है, वह कबीर अल्लाह है। यह कबीर अल्लाह वही है जिसका वर्णन बाईबल ग्रन्थ में उत्पत्ति ग्रन्थ में आता है कि उस परमात्मा ने छः दिन में

आसमान और धरती तथा इसके बीच के सर्व नक्षत्र बनाए हैं अर्थात् सर्व सृष्टि की रचना की और सातवें दिन तख्त पर जा बैठा। उसकी खबर किसी बाह्यखबर अर्थात् तत्त्वदर्शी सन्त से पूछो।

❖ हजरत मुहम्मद जी माँस नहीं खाते थे :-

सन्त गरीब दास महाराज (गाँव-छुड़ानी जिला-झज्जर) ने अपनी अमृतवाणी में भी स्पष्ट किया है कि हजरत मुहम्मद तथा एक लाख अस्सी हजार अनुयायी मुसलमान थे। उन्होंने माँस नहीं खाया तथा गाय को बिस्मल (हत्या) नहीं किया।

गरीब, नबी मुहम्मद नमस्कार है, राम रसूल कहाया।

एक लाख अस्सी कूं सौगन्ध, जिन नहीं करद चलाया।।।

अर्स-कुर्स पर अल्लह तख्त है, खालिक बिन नहीं खाली।।।

वे पैगम्बर पाक पुरुष थे, साहेब के अबदाली।।।

भावार्थ :- गरीब दास जी ने बताया है कि नबी मुहम्मद को मैं प्रणाम करता हूँ। वे तो परमात्मा के रसूल (संदेशवाहक) थे। उनके एक लाख अस्सी हजार मुसलमान अनुयायी हुए हैं। मैं (गरीब दास जी) कसम खाता हूँ कि उन्होंने (एक लाख अस्सी हजार अनुयायी ने) तथा हजरत मुहम्मद जी ने कभी किसी जीव पर करद (छुरा) नहीं चलाया अर्थात् कभी भी जीव हिंसा नहीं की और माँस नहीं खाया।

परमात्मा आसमान के अन्तिम छोर (सर्व ब्रह्माण्डों के ऊपर के स्थान) पर विराजमान है, परन्तु उसकी नजरों से कोई भी जीव ओझला नहीं है, वह सर्व जीवों को देखता है। वे पैगम्बर (हजरत मुहम्मद तथा अन्य) पवित्र आत्माएँ थे। वे परमात्मा के कृपा पात्र थे।

❖ सन्त जम्बेश्वर महाराज जी के विचार :-

इसी बात की गवाही सन्त जम्बेश्वर जी महाराज (बिश्नोई धर्म के प्रवर्तक) ने दी है। शब्द संख्या 12 में :-

महमद—महमद न कर काजी, महमद का तो विषम विचारु।

महमद हाथ करद न होती, लोहे घड़ी न सारू।

महमद साथ पयबंर सीधा, एक लाख अस्सी हजारू।

महमद मरद हलाली होता, तुम ही भए मुरदारू।

भावार्थ :- सन्त जम्बेश्वर जी ने बताया है कि :- हे काजी! आप उस पवित्र आत्मा मुहम्मद जी का नाम लेकर जो गाय या अन्य जीवों को मारते हो, उस महापुरुष को बदनाम करते हो, हजरत मुहम्मद जी का विचार बहुत कठिन था। आप उनके बताए मार्ग से भटक गए हैं, मुहम्मद जी के हाथ में करद (जीव काटने का छुरा) नहीं था, जो लोहे का अहरण पर घण कूटकर तैयार होता है। हजरत मुहम्मद के साथ एक लाख अस्सी हजार पवित्रात्माएँ मुसलमान अनुयाई

थे। वे सीधे-साधे पैगम्बर थे। हजरत मुहम्मद तो शूरवीर हलाल की कमाई करके खाने वाले थे। तुम ही मुरदारू (जीव हिंसा करने वाले) हो। आप उस महापुरुष के अनुसार अपना जीवन निष्पाप बनाओ। जीव हिंसा मत करो।

सन्त जम्भेश्वर को परमात्मा जिन्दा महात्मा के रूप में समराथल में मिले थे:-

जैसा कि वेदों में प्रमाण है कि परमात्मा सत्यलोक में रहता है, अच्छी आत्माओं को मिलता है। उनको आध्यात्मिक यथार्थ ज्ञान देता है, कवियों की तरह आचरण करता हुआ पृथ्वी पर विचरता है। जिस कारण से प्रसिद्ध कवियों में से भी एक कवि होता है। वह कवि की उपाधि प्राप्त करता है, परमात्मा गुप्त भक्ति के मन्त्र को उद्घृत करता है जो वेदों व कत्तेबों आदि-आदि पोथियों में नहीं होता। कृप्या इन मन्त्रों का अनुवाद देखें फोटोकापियों में इसी पुस्तक के पृष्ठ 101 पर।

प्रमाण :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 20 मन्त्र 1

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मन्त्र 26-27

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मन्त्र 1, 2, 3

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मन्त्र 2

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 से 20

जैसा कि पूर्व में लिख दिया है कि हजरत मुहम्मद जी तथा अन्य कई महात्माओं को परमात्मा जिन्दा महात्मा के रूप में मिला था उसी प्रकार महात्मा जम्भेश्वर जी महाराज को समराथल में जिन्दा सन्त के रूप में परमात्मा मिले थे।

प्रमाण :- श्री जम्भेश्वर जी की वाणी शब्द सख्यां = 50, शब्द 50 के कुछ अंश:-

दिल—दिल आप खुदाय बंद जाग्यो, सब दिल जाग्यो सोई।

जो जिन्दो हज काबै जाग्यो, थल सिर जाग्यो सोई॥

नाम विष्णु कै मुसकल घातै, ते काफर सैतानी।

हिन्दु होय का तीर्थ न्हावै, पिंड भरावै, तेपण रहा इवांणी।

तुरकी होय हज कांबो धोके, भूला मुसलमाणी।

के के पुरुष अवर जागैला, थल जाग्यो निज वाणी।

भावार्थ :- श्री जम्भेश्वर महाराज जी ने बताया है कि जो परमात्मा जिन्दा महात्मा के रूप में हजरत मुहम्मद जी को काबा (मक्का) में उस समय मिला था जिस समय मुहम्मद जी हज के लिए मक्का में गए थे और उनको जगाया था कि मन्दिर-मक्का, आदि तीर्थ स्थानों पर चक्कर लगाने से परमात्मा नहीं मिलता, परमात्मा प्राप्ति के लिए मन्त्र जाप की आवश्यकता है। श्री जम्भेश्वर जी महाराज ने फिर बताया है कि वही परमात्मा थल सिर (समराथल) स्थान में आया और

मुझे जगाया? न जाने कितने व्यक्ति और जार्गेंगे जैसे मेरा समराथल प्रसिद्ध है। मैंने अपनी अनुभव की खास यथार्थ वाणी बोलकर समराथल के व्यक्तियों में परमात्मा भक्ति की जाग्रति लाई है, सत्य से दूर होकर मुसलमान अभी भी काबे में हज करने जाते हैं, वहाँ धोक लगाते हैं, पत्थर को सिजदा करते हैं जो व्यर्थ है। इसी प्रकार हिन्दू भी तीर्थ पर जाते हैं, भूतों की पूजा करते हैं, पिण्ड भराते हैं, यह व्यर्थ साधना है।

सन्त श्री जम्भेश्वर जी महाराज ने 29 नियम बनाकर स्वच्छ साधक समाज तैयार किया था जो 29 (बीस नौ = 29) नियमों का पालन करते थे तथा श्री जम्भेश्वर जी के द्वारा बताए नाम का जाप करते थे, वे विश्नोई (29 नियमों का पालन करने वाले) कहलाते थे।

वर्तमान में “विश्नोई” शायद ही कोई होगा? क्योंकि समय तथा परिस्थिति बदलती रहती है। उसी अनुसार मानव का व्यवहार, आचार-विचार बदल जाता है। इसका मुख्य कारण सन्त का अभाव होता है। श्री जम्भेश्वर जी महाराज के स्वर्ग धाम जाने के पश्चात् उनके जैसा सिद्धी-शक्ति व भक्ति वाला महापुरुष नहीं रहा, जिस कारण से मर्यादा पालन नहीं हो पा रही। वर्तमान में “विश्नोई” धर्म के अनुयायी केवल तीर्थ भ्रमण पर ही अधिक महत्व देते हैं तथा उन तीर्थ मुकामों पर ही हवन आदि करके अपने को धन्य मानते हैं। तीर्थ उस स्थान को कहते हैं जहाँ किसी सन्त ने अपने जीवन काल में साधना की हो तथा कुछ करिश्मे दिखाए हैं। मुकाम, धाम ये यादगार हैं, इनका होना भी अनिवार्य है क्योंकि जिसकी घटनास्थली है, उसकी याद बनी रहती है तथा सत्यता की प्रतीक वे घटना स्थली होती हैं, परन्तु साधना-भक्ति बिना जीवन की सार्थकता नहीं है, पूर्ण गुरु की खोज करके उसके बताए मार्ग पर चलकर जीवन सफल बनाएं क्योंकि प्रत्येक महापुरुष ने गुरु बनाया है, गुरु भी वक्त गुरु हो जो अपने मुख कमल से भक्ति विधि बताए। कुछ समय बीत जाने पर प्रत्येक धर्म में भक्तिविधि बदल दी जाती है, वह हानिकारक होती है। उदाहरण के लिए :-

सन्त श्री जम्भेश्वर जी महाराज के 120 शब्द हैं जो उनके श्री मुख कमल से उच्चरित अमृतवाणी हैं। वर्तमान में प्रत्येक शब्द के प्रारम्भ में “ओम्” अक्षर लगा दिया जो गलत है तथा सन्त जी का अपमान है। यदि “ओम्” शब्द बिना ये शब्द वाणी सार्थक नहीं होती तो श्री जम्भेश्वर जी ही लगाते। जैसे कम्पनी मोटर साईकल का पिस्टन बनाती है, वह पूर्ण रूप से सही होता है। यदि कोई व्यक्ति अपनी समझ से उस पिस्टन के साथ कोई नट वैल्ड करके चतुरता दिखाए तो कितना ठीक है? व्यर्थ। इसी प्रकार सन्त जम्भेश्वर जी की वाणी के साथ “ओम्” लगाकर पढ़ना भी लाभ के स्थान पर हानि करता है।

❖ इसी प्रकार एक गायत्री मन्त्र बना रखा है जिसे हिन्दू धर्म के व्यक्ति

श्रद्धा से जाप करते हैं। मन्त्र है = “ओम् भूर्भव स्वः तत्सवितुर् वरेण्यम् भर्गोदेवस्य धीमहि धीयो यो न प्रचोदयात्”। वास्तव में यह यजुर्वेद अध्याय 36 का मन्त्र 3 है, इसके पहले “ओम्” अक्षर नहीं है। वेद वाणी भगवान द्वारा दी गई है, इसके आगे “ओम्” अक्षर लगाना भगवान का अपमान करना है, पिस्टन को नट वैल्ड करना मात्र है जो व्यर्थ है।

सन्त श्री जम्बेश्वर जी ने शब्द संख्या = 69 में कहा है कि वेदों तथा पुराणों में वह यथार्थ भवित मार्ग नहीं है। इनको ठीक से न समझकर भूतों की पूजा शुरू कर दी है। उस अपरमपार परमात्मा को क्यों नहीं जपते जो संसार रूपी वृक्ष की मूल (जड़) है। मूल की पूजा न करके डाल व पात की पूजा व्यर्थ है, जिससे जम व काल से नहीं बच सकता (जम = जन्म, काल= मौत) अर्थात् जन्म-मरण समाप्त नहीं हो सकता।

❖ किसी भले पुरुष ने ही तंत अर्थात् तत्त्व ज्ञान को पूछा है। उसी ने जीवन की विधि जान ली, जिस कारण से जीवित तो (लाहो) = लाभ होता है, तथा मृत्यु उपरान्त भी हानि नहीं होती, वह मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

शब्द न. 72 की कुछ वाणी :-

वेद कुराण कुमाया जालूं भूला जीव कूजीव कुजाणी ।

केवल ज्ञानी थल सिर आयो परगट खेल पसारी ।

कोड़ तेतीसां पोह रचावण हारी, ज्यूं छक आईसारी ।

शब्द न. 72 में श्री जम्बेश्वर जी ने कहा है कि तत्त्वज्ञान बताने वाला समराथल में आया। वह केवल ज्ञानी अर्थात् पूर्ण ज्ञान जानने वाला तथा सर्व सृष्टि का रचने वाला है। उसी के तत्त्वज्ञान से पूर्ण तृप्ति हुई है, यह पूर्ण गुरु है।

शब्द संख्या 69 की कुछ वाणी :-

सो अपरंपार कांय न जंपो, तत खिण लहो इमाणो ।

भल भूल सींचो रे प्राणी, ज्यूं तरवर मेलत डालू ।

जइया मूल न सींच्चो तो जामण—मरण बिगोवो ।

अंहनिश करणी थीर न रहिबा न बंच्यो जम कालू ।

कोई कोई भल मूल सिंचीलो, भल तंत बुझीलो जा जीवन ।

की विधि जाणी, जीवतड़ा कछु लाहो होसी मूवा न आवत हांणी ।

❖ श्री जम्बेश्वर जी के गुरु कौन थे?

श्री जम्बेश्वर जी को पूर्ण परमात्मा सर्व का रचनहार जिन्दा महात्मा के रूप में मिले थे। उन्हीं को अपना गुरु माना है, सन्त श्री जम्बेश्वर जी के गुरु थे:-

प्रमाण :- शब्द नं. 90 के अन्त की वाणी :-

जां जां पवन आसण, पाणी आसण, चंद आसण ।

सूर (सूर्य) आसण गुरु आसल संमरा थले ।

कहै सतगुरु भूल मत जाइयो पड़ोला अमै दोजखे ।

शब्द न. 91 की कुछ वाणी :-

छंदे—मंदे बालक बुद्धे, कूड़े कपटे ऋध न सिद्धे ।

मेरे गुरु जो दीन्ही शिक्षा सर्व आलिंगण फोरी दीक्षा ।

सत—सत भाखत गुरु रायों जरा मरण भो भागूं ।

शब्द न. 92 की कुछ वाणी :-

पढ़ वेद कुराण कुमाया जालों दंत कथा जुग छायो ।

सिद्ध साधक को एक मतो, जिन जीवत मुक्त दृढ़ायो ।

जुगां—जुगां का जोगी आयो, सतगुरु सिद्ध बताओं ।

सहज स्नानी केवल ज्ञानी ब्रह्म ज्ञानी सुकृत अहल्यो न जाई ।

उपरोक्त अमृत वाणियों का भावार्थ :- शब्द न. 90 की वाणियों में श्री सन्त जम्भेश्वर जी महाराज जी ने बताया है कि जैसे पवन का आसण (स्थान = डेरा = आश्रम) है, वायु कुछ कि.मी. ऊपर तक है, उसका भी स्थान है भले ही वह अपने स्थान (आसण) में इधर-ऊधर चलती रहती है। इसी प्रकार प्राणी = जल का भी स्थान है, चाँद तथा सूर्य का भी स्थान है। उसी प्रकार सतगुरु मिलने के पश्चात् मैंने समराथल में अपना आसन (अस्थान) स्थापित किया है। मेरे गुरु जी ने कहा है कि परमात्मा को मत भूलना अन्यथा दोजख अर्थात् नरक में गिरोगे। इसलिए सन्त जम्भेश्वर जी मानवमात्र को सतर्क करते हैं कि गुरु बनाओ और परमात्मा की भक्ति करो।

पुष्टि : जैसे सन्त जम्भेश्वर जी को परमात्मा जिन्दा महात्मा के रूप में मिले थे। उसी प्रकार संत गरीब दास जी महाराज जी को गाँव छुड़ानी जिला झज्जर हरियाणा में मिले थे। उन्होनें भी अपनी अमृत वाणी में कहा है कि :-

गुरु ज्ञान अमान अडोल अबोल है, सतगुरु शब्द सेरी पिछानी ।

दास गरीब कबीर सतगुरु मिल्या, आन अस्थान रोप्या छुड़ानी ॥

इसी प्रकार सन्त जम्भेश्वर जी ने शब्द संख्या 91 की अमृतवाणियों में कहा है कि मेरे गुरु जी का ज्ञान कूड़े = झूठा, कपटे = कपटयुक्त और बालक बुद्धि अर्थात् अधूरा ज्ञान व मन्दा ज्ञान व ऋद्धि-सिद्धि का नहीं है। यह तो पूर्ण मोक्ष मार्ग है, मेरे गुरु जी ने सर्व सत्य ज्ञान की शिक्षा दी है। वही दीक्षा रूप में मैंने आगे बताया है जिससे "जरा" वृद्ध अवस्था में होने वाला कष्ट, मरण (मृत्यु) का भय समाप्त हो गया।

पुष्टि : श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में भी यह प्रमाण है। कहा कि जो साधक तत्त्वदर्शी सन्त की खोज कर लेते हैं, वे जरा-मरण से छूटने का

ही प्रयत्न करते हैं क्योंकि वे तत् ब्रह्म से परिचित हो जाते हैं, सर्व कर्मों से भी परीचित होते हैं।

शब्द न. 92 की अमृतवाणियों का भावार्थ:- सन्त जम्भेश्वर जी ने कहा है कि वेद तथा कुरान को ठीक से न समझकर अपनी दंत कथाएँ मानव समाज को सुनाते हैं, सिद्ध और साधक का एक ही मत होता है। वे जीवित ही मृतक होकर संसार में रहते हैं, संसार को असार जानते हैं। परमात्मा प्रत्येक युग में प्रकट होकर यथार्थ भक्ति ज्ञान प्रदान करता है, वह सतगुरु होता है। वह पूर्ण सिद्ध अर्थात् समर्थ होता है। वह सतगुरु व सन्त रूप में प्रकट परमात्मा ही केवल ज्ञानी अर्थात् अकेला सत्यज्ञान जानने वाला होता है। उस सतगुरु से जो दीक्षा लेता है, उस ब्रह्म ज्ञानी अर्थात् सत्य साधक की अहल्यो अर्थात् भक्ति व्यर्थ नहीं जाती, वह पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है।

❖ विश्लेषण :- बिश्नोई धर्म के अनुवादकर्ता शब्द न. 50 की अमृतवाणी, इस पंक्ति का भावार्थ कैसे करते हैं :-

दिल दिल आप खुदाबंद जाग्यो, सब दिल जाग्यो सोई।

जो जिन्दो हज काबे जाग्यो, थलसिर जाग्यो सोई॥

भावार्थ करते हैं कि जो परमात्मा मुहम्मद जी को काबे में मिला था। वही श्री सन्त जम्भेश्वर जी ही समराथल में आए थे। यदि ऐसा अर्थ होता तो सन्त जम्भेश्वर जी का जन्म तो पीपासर पवित्र गाँव में हुआ था, वे तो वहाँ पहले ही आ चुके थे, समराथल में तो बाद में गए हैं, फिर लालासर में निर्वाण हुआ है। वास्तविक अर्थ पूर्व में लिख दिया है, वह ही सही है। फिर भी जिन महान आत्माओं को परमात्मा मिले हैं, वे पूर्ण सन्त होते हैं, परन्तु सत्य भक्ति अधिकारी के बिना तथा समय बिना नहीं बताते। सन्त जम्भेश्वर जी स्वयं जो नाम जाप करते थे, वह बिश्नोई धर्म में की जाने वाली आरती संख्या ४ में प्रथम पंक्ति में लिखा है जो इस प्रकार है। आरती-४ :-

“ओम् शब्द सोहंग ध्यावे । प्रभु शब्द सोहंग ध्यावे”

परन्तु इस मन्त्र का जाप कैसे करना है, यह गुरु बिन ज्ञान नहीं होता। श्री संत जम्भेश्वर जी स्वयं उपरोक्त मन्त्र जाप करते थे, अन्य को कहते थे “विष्णु-विष्णु भज रे प्राणी” अर्थात् विष्णु-विष्णु जाप किया करो। कारण यह था कि जब तक अधिकारी शिष्य न हो, तब तक यह मन्त्र नहीं दिया जाता। दूसरी विशेष बात यह है कि परमात्मा जिस भी सन्त महात्मा को मिले हैं, उनको इस मन्त्र को गुप्त रखने के लिए कहा था ताकि जब कलयुग 5505 वर्ष बीत जाएं। सन् 1997 में कलयुग 5505 वर्ष बीत चुका है, अब यह मन्त्र दिया जाना है। इस मन्त्र को देने वाला भी पूर्ण सन्त चाहिए। इसी प्रकार श्री नानक देव जी स्वयं तो वही नाम जाप करते थे जो बिश्नोई धर्म की आरती संख्या-४ की प्रथम पंक्ति

में है, परन्तु अन्य सिक्खों को कहते थे कि वाहे गुरु-वाहे गुरु जपो। कारण यही रहा है इस मन्त्र को कलियुग 5505 वर्ष बीतने तक गुप्त रखना था। अब इस मन्त्र का जाप घर-घर में होगा, इस मन्त्र को सतनाम भी कहा जाता है।

सन्त गरीब दास जी गाँव छुड़ानी जिला झज्जर (हरियाणा) वाले को भी परमात्मा जिन्दा महात्मा के वेश में जंगल में मिले थे। उनको भी यह मन्त्र जाप करने को दिया था जो सन्त गरीब दास जी की अमृत वाणी में लिखा है। परन्तु गरीब दास जी ने अन्य को यह मन्त्र जाप करने को नहीं दिया। केवल एक सन्त को दिया उस को सख्त हिदायत दी गई कि तुम भी केवल एक अपने विश्वास पात्र शिष्य को देना। इसी प्रकार वह आगे एक शिष्य को दे। इसी परम्परा के चलते यह मन्त्र केवल मेरे पूज्य गुरुदेव सन्त रामदेवानन्द जी महाराज तक आया। फिर उन्होंने मुझे दिया तथा आगे नाम देने का आदेश 1994 में दिया। 1997 में परमात्मा भी मुझे (संत रामपाल दास को) मिले, यह नाम तथा सार नाम देने की आज्ञा दी। वर्तमान समय मोक्ष प्राप्ति का सर्वोत्तम समय है।

प्रश्न था कि संसार ग्रन्थों में परमात्मा को कैसा बताया है?

उत्तर : अभी तक सद्ग्रन्थों तथा परमात्मा प्राप्त कुछ महापुरुषों की संक्षिप्त जानकारी लिखी है।

"परमात्मा साकार है, नराकार है" यह निष्कर्ष है सर्व सद्ग्रन्थों तथा परमात्मा प्राप्त सन्तों का।

जितने भी सन्त महात्मा हुए हैं, जिन को परमात्मा मिले हैं, उन्होंने कोई धर्म विशेष की स्थापना नहीं की। हाँ, उन्होंने धार्मिकता को उभारा है तथा यथार्थ भक्ति को उजागर करने की कोशिश की है। परन्तु समय बीत जाने पर वह एक धर्म अर्थात् समुदाय का रूप ले लेता है। जैसे सिक्ख धर्म बना, वैसे ही विश्नोई धर्म बन गया। पहले ये सब हिन्दू धर्म को मानने वाले थे, परन्तु हिन्दू धर्म में सत्य साधना नहीं रही थी तो परमात्मा से प्राप्त यथार्थ ज्ञान के आधार से इन महात्माओं ने भक्ति तथा धार्मिकता को जनता को बताया जिससे अनुयाईयों को लाभ होने लगा, वे उस मार्ग से जुड़ने लगे। इस प्रकार कई सौ वर्ष बीत गए। सिक्ख धर्म के प्रवर्तक गुरु नानक देव जी तथा विश्नोई धर्म के संस्थापक श्री सन्त जम्बेश्वर जी समकालीन थे। वर्तमान में दोनों ही धर्मों में वह भक्ति तथा मर्यादा नहीं रही। इसका पुनः उत्थान सन्त रामपाल के द्वारा किया जा रहा है, वही यथार्थ भक्ति तथा मर्यादा पालन कराई जा रही है जो उपरोक्त महापुरुष करते तथा कराते थे। उपरोक्त महात्माओं के साथ उस समय बहुत व्यक्तियों ने विरोध किया, उनको भला बुरा भी कहा। परन्तु सन्त अपने उद्देश्य पर अड़िग रहते हैं क्योंकि वे मानव कल्याण के लिए ही जन्म लेते हैं। वर्तमान में मेरे (सन्त

रामपाल जी के) साथ क्या अत्याचार व अन्याय हो रहा है, कैसे बदनाम किया जा रहा है, परन्तु सत्य को मिटाया नहीं जा सकता। अब सत्य ज्ञान का विस्फोट हो चुका है।

❖ “बिश्नोई धर्म की भक्ति”

प्रश्नः- बिश्नोई धर्म में क्या भक्ति होती है? इसके प्रवर्तक कौन महापुरुष थे? **उत्तरः-** बिश्नोई धर्म के प्रवर्तक श्री जम्भेश्वर जी महाराज हैं। उनका जन्म गाँव पीपासर (राजस्थान प्रांत में भारत वर्ष) में हुआ, इनका भक्तिस्थल गाँव = समराथल (राजस्थान) में है तथा निर्वाण स्थल गाँव लालासर (राजस्थान) में है। **बिश्नोई धर्म में भक्तिः-** श्री जम्भेश्वर जी को श्री विष्णु जी (सत्तगुण विष्णु) का अवतार माना गया है जो स्वयं श्री जम्भेश्वर जी ने अपनी अमृतवाणी में बताया है।

प्रमाण :- शब्द वाणी श्री जम्भेश्वर जी के शब्द सं. 94, 54, 67, 116

बिश्नोई धर्म में श्री विष्णु जी तथा श्री कृष्ण जी (जो श्री विष्णु सत्तगुण के अवतार थे) की भक्ति करने के लिए श्री जम्भेश्वर जी ने अपने मुख कमल से आदेश फरमाया है। बिश्नोई धर्म की भक्ति से स्वर्ग प्राप्ति (बैकुंठवास) ही अन्तिम लाभ है, यह भी अमृत वाणी में प्रमाण है।

प्रमाण :- शब्द वाणी संख्या 13, 14, 15, 23, 25, 31, 33, 34, 64, 67, 78, 97, 98, 102, 119, 120

श्री विष्णु जी को संसार का मूल जड़ अर्थात् पालन करता कहा है।
वाणी शब्द संख्या = 31

❖ “सत्तगुरु से नाम दीक्षा लेकर भक्ति करें”

श्री जम्भेश्वर महाराज जी का आदेश है कि गुरु से नाम लेकर भक्ति करने से लाभ होगा, पहले गुरु की परख करो, गुरु बिन दान नहीं करना चाहिए, गुरु ही दान के लिए सुपात्र हैं, कुपात्र को दान नहीं देना चाहिए।

प्रमाण :- शब्द वाणी संख्या :- 1, 23, 26, 29, 30, 35, 36, 37, 40, 41, 45, 77, 85, 86, 90, 101, 107, 108, 120, 56

कुपात्र को दान देना व्यर्थ :- विशेष विवरण = शब्द वाणी संख्या 56 में है। जिसमें कहा है कि कुपात्र को दान देना तो ऐसा है जैसे अँधेरी रात्रि में चोर चोरी कर ले गया हो और सुपात्र को दान देना ऐसा है जैसे उपजाऊ खेत में बीज डाल दिया हो। बिश्नोई धर्म में तीर्थ पर जाना, वहाँ स्नानार्थ जाना, पिण्ड भराना (पिण्डोदक क्रिया) आदि-आदि पूजाओं का निषेध है।

प्रमाण :- शब्द वाणी संख्या = 50

❖ श्री जम्भेश्वर महाराज जी को परमात्मा जिन्दा के रूप में गाँव समराथल में मिले थे। **प्रमाण :-** शब्द वाणी सं. 50, 72, 90

- ❖ वेद शास्त्रों में पूर्ण मोक्ष मार्ग नहीं है :- प्रमाण - शब्द वाणी सं. 59
- ❖ भक्ति बिना राज-पाट तथा सर्व महिमा व्यर्थ है :- प्रमाण वाणी सं. 60
- ❖ श्री रामचन्द्र जी ने कुछ गलतियाँ की थी :- प्रमाण-शब्द वाणी सं. 62
- ❖ गुरु को छोड़कर शिष्य का सम्मान (महिमा) करना गलत है :-
प्रमाण :- शब्द वाणी सं. 71

कबीर परमेश्वर जी ने भी कहा है :-

गुरु को तजै भजै जो आना (अन्य)। ता पशुआ को फोकट ज्ञाना।।

- ❖ विश्वनार्थ धर्म में स्वर्ग को ही उत्तम (श्रेष्ठ) लोक माना है :- प्रमाण - शब्द वाणी सं. 73, 119, 94

“हरियाणा में हरि आएंगे”

श्री जम्भेश्वर जी की शब्द वाणी सं. 102 में लिखा है :-

विष्णु—विष्णु भण अजर जरी जै, धर्म हुवै पापां छुटिजै।
हरि पर हरि को नाम जपीजै,
हिरयालो हरि आण हरुं, हरि नारायण देव नरुं।
आशा सास निरास भइलो, पाइलो मोक्ष दवार खिंणु॥

भावार्थ :- इसमें कहा है कि “हिरयालो हरि आण हरुं” इसमें “हरियालो” शब्द के स्थान पर “हरियाणो” होना चाहिए। यह वाणी लिखने वाले ने “हरियाणा” शब्द कभी सुना नहीं था क्योंकि उस समय हरियाणा प्रांत नहीं था। इसलिये “हरियालो” लिख दिया गया है। इस पंक्ति का अर्थ कि “हरि अर्थात् परमात्मा हरियाणो प्रांन्त में आएंगे।” परमात्मा जिसे नारायण कहते हैं। वे नर अर्थात् साधारण मनुष्य का रूप धारण करके आएंगे। उनके द्वारा बताए ज्ञान से निराश भक्तों की आशा जागेगी और मोक्ष का द्वार प्राप्त होगा। भावार्थ है कि शास्त्र विरुद्ध साधना करने से साधक भक्ति करके भी कोई लाभ प्राप्त नहीं कर रहे थे, परमात्मा हरियाणे में आएंगे। उनके द्वारा बताई शास्त्रोक्त भक्ति की साधना से मोक्ष का द्वार प्राप्त होगा तथा निराशों को आशा होगी कि अब यहाँ भी सुख मिलेगा तथा प्रलोक में भी तथा मोक्ष प्राप्ति अवश्य होगी।

“श्री जम्भेश्वर जी के भी कोई गुरु थे” (पहले लिख दिया है।)

प्रमाण :- शब्द वाणी सं. 90, 91, 92

शब्द सं. 90 की गुरु सम्बन्धी वाणी गुरु आसण समराथले।

कहै सतगुरु भूल मत जाइयों पड़ोला अमै दोजखे।

शब्द सं. 91 से कुछ अंश :-

मेरे गुरु जो दीन्ही शिक्षा, सर्व आलिङ्गण फेरी दीक्षा।

सत सत भाखत गुरु रायों जरा मरण यो भागु॥